UNIVERSAL LIBRARY
OU_182134
UNIVERSAL LIBRARY

**OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY**

Call No. H 83.1/B57J Accession No. G.H. 1409

Author भादुड़ी, सतीनाथ।

Title जागरी। 1945

This book should be returned on or before the date last marked below.

# जागरी

सतीनाथ भादुड़ी

अनुवादक—श्री नारायण प्रसाद वर्मा, एम. ए. बी. एल.

दि बिहार साहित्य-भवन लि०

५, डफ् लेन, कलकत्ता

प्रथम मुद्रण—श्रावण संवत् २००५

प्रकाशक—

श्री शक्तिकुमार भादुड़ी

दि बिहार साहित्य-भवन लि०

५, डफ् लेन, कलकत्ता।

मुद्रक—

उमादत्त शर्मा

रत्नाकर प्रेस

११ए, सैयद साली लेन,

कलकत्ता।

प्रच्छदपट—

खालेद चौधरी

ब्लाक और प्रच्छदपट मुद्रण—

री-प्रोडक्शन सिण्डीकेट

७।१, कर्नवालिस स्ट्रीट, कलकत्ता।

बंधाई—

बासन्ती बाइन्डिंग वर्क्स

६।१।१, मिर्जापुर स्ट्रीट, कलकत्ता।

मूल्य - ४॥)

# उत्सर्ग

उन गुमनाम राजनैतिक कार्यकर्त्ताओंकी यादमें—

जिनकी कर्मनिष्ठा और स्वार्थत्यागका विवरण,

राष्ट्रीय इतिहासमें कभी भी नहीं लिखा जायगा।

# बंगलाके प्रथम संस्करणकी भूमिका

राजनैतिक जागृतिके साथ-साथ विभिन्न राजनैतिक मतवादोंका संघात अवश्यम्भावी है। इस आलोड़नका तरंग-विक्षोभ, किसी-किसी स्थानमें पारिवारिक-जीवनकी भित्तिपर भी चोट कर रहा है।—ऐसे एक ही परिवारकी कहानी है।

कहानीको १९४२ सालके अगस्त आन्दोलनकी पटभूमिमें पढ़ना पड़ेगा। किसी राजनैतिक दलके विरुद्ध या पक्षमें प्रचार करना पुस्तकका उद्देश्य नहीं।

सभी चरित्र काल्पनिक हैं।

पूर्णियाँ
७-९-४५

सतीनाथ भादुड़ी

# प्राक्कथन

बंग-साहित्य-गगनके उदीयमान ज्योतिष्कोंमें श्रीमान् सतीनाथ भादुड़ी एक ऐसे उज्ज्वल नक्षत्र हैं, जिनकी ज्योति स्थिर-चपला-सी न केवल बंग-साहित्य के रसिकोंके, पर निखिल भारतके तथा विश्वके साहित्य-रसिकोंके चित्तको समुद्भासित कर रखेगी। आप उत्तर बिहारके राजनीतिक तथा समाजनीतिक क्षेत्रोंमें बहुत दिनोंसे काम कर रहे हैं। बिहारके कांग्रेस-कर्मि-समाजके बाहर के लोगोंसे आपका परिचय ज्यादातर हो नहीं पाया। आजसे दो वर्ष पहले बंगालका साहित्यिक संसार इनका नाम तक भी नहीं जानता था; पर अपना पहला उपन्यास "जागरी" ( जिसका हिन्दी अनुवाद हिन्दी पाँठकोंके सामने निवेदन किया जाता है ) निकलते ही बंगालके पाठक समाजमें हलचल मच गयी, खास करके जब बंग-साहित्यके एक प्रमुख लेखक श्रीमान् अतुलचन्द्र गुप्तने इसकी उच्च प्रशसा कर अपनी सम्मति प्रकट की। श्रीयुक्त गुप्तजीकी समालोचना पढ़कर मैं भी इस ग्रन्थपर आकृष्ट हुआ था और संयोगसे इसकी एक प्रति हाथ आनेसे कई घण्टोंमें एक ही आसनपर बैठ इसे समाप्त कर लिया। मेरा भी विचार है कि यह ग्रंथ केवल बंग-साहित्यके लिए गौरव-स्थल नहीं बना है, बल्कि विश्व-साहित्यमें अपना स्थान इसने बना लिया है। कविता, उपन्यास, कहानी—इन तीनों क्षेत्रोंमें आधुनिक बंगला साहित्य भारतीय साहित्यके भंडार में लक्षणीय दान-संभार लाया है; रवीन्द्रनाथ, बङ्किमचन्द्र, शरच्चन्द्र अब समग्र भारतके लिए हो गए हैं। कवितामें रविके अस्तमित होनेके बाद अब केवल तारे दृष्टिगोचर होते हैं, पूर्णचन्द्रका प्रकाश अभी दूरकी वस्तु मालूम पड़ता है।

पर उपन्यास और कहानीमें बङ्किम-शरतके झंडेको ऊंचा रखनेके लिए केदारनाथ तारा होकर बलाईचन्द्र ("बन-फूल") अन्नदाशंकर, अचिन्त्यकुमार, विभूतिभूषण बनर्जी, विभूतिभूषण मुखर्जी, माणिकचन्द्र, शैलजानन्द, मनोज बसु इत्यादि कितने लेखक अब मौजूद हैं और इस ज्योतिष्कमण्डलमें अपनी नई प्रकाश-भंगी लेकर अब उपस्थित हुए हैं श्रीमान् सतीनाथजी।

मैं समालोचक नहीं हूँ—केवल एक अनुभूतिकामी पाठक हूँ। "जागरी" पढ़ते समय लेखकके सत्य-दर्शन, सत्य-समीक्षण और सत्य-प्रकाशनकी शक्तिसे मेरा हृदय आनन्दसे भर उठता है। किस सहानुभूतिके साथ इन्होंने अपने-अपने मुँहसे उपन्यासके चार पात्रोंके बाह्य-जीवन तथा आभ्यन्तर प्रेरणाका उद्घाटन किया है। लेखक तो जेलखानेके जीवनसे, वहाँके दूषित वातावरणसे सुपरिचित हैं; जिस सचाई और सफाईसे उसका बयान उन्होंने किया है, वह तो प्रथम श्रेणीकी वस्तुनिष्ठताका परिचायक है। पर अनजानसे कांग्रेस कर्मी बूढ़े पिता, अपने जीवनकी व्यर्थताकी चिन्तासे भरे हुए निश्चित मृत्युके सामने खड़े युवक पुत्र, सुखी गृह-नीड़ बनानेके लिए नारीकी आकांक्षा जिनके लिये मना हो गयी थी, ऐसी माँ और आदर्श-विपर्ययमें गिरे हुए छोटे भाई—इन चारोंने जिस ढगसे घटनाओंके घात-प्रतिघात, चरित्रोंके विकसन और मनके गहिरे-से-गहिरे प्रदेशोंको खोलकर अवचेतनाकी क्रिया दिखाई हैं, वह किसी भी भाषाके कथा-साहित्यके लिए अपूर्व रस-सर्जना बनी है।

लेखक केवल वस्तुतान्त्रिक नहीं हैं; जीवनके अन्तरालमें जो शाश्वत सत्ता विद्यमान है, उसकी एके आध झांकी भी बिजलीकी चमक-सी अपने ग्रंथके पन्नोंमें आप लाए हैं। जवान बेटा उधर फाँसीके मञ्चपर चढ़ रहा है—ऐसी परिस्थिति इधर कैदी बापको मालूम है; पिताके दुःखकी अवधि

नहीं ; समदुःखी मित्रोंको सान्त्वना देनेके लिए शब्द नहीं मिलते ; इतनेमें किसीने मन बहलानेके लिए रामधुन गाना शुरू किया—"रघुपति राघव राजा राम, पतित-पावन सीताराम"—बस, इसीसे जो हवा इस क्लिष्ट परिस्थितिमें चली, उससे पिताका मन भर गया, अथाह शान्ति और असीम मानव-प्रेमने होनहार पुत्रशोकको डुबा दिया, मानों व्यर्थ जीवनके पीछे एक सदा विद्यमान अर्घ मिला—

Surely the thought of the Gods hath balm in it
alway to win me
Far from my griefs ; and a thought, deep
in the dark of my mind,
Clings to a great Understanding. Yet all
the spirit within me
Faints, when I watch men's deeds matched
with the guerdon they find.

श्रीमान् सतीनाथने अपनी छोटी कहानियोंका एक संग्रह भी प्रकाशित किया है। हम प्रार्थना करते हैं कि उनकी लेखनी अमृतप्रसू बनी रहे, और वह साल-ब-साल ऐसी सत्य, शिव, सुन्दर तथा सार्थक साहित्य-सर्जना करते चलें।

—'विश्वजन' जाई
आनन्दे करिबे पान सुधा निरवधि ॥

कलकत्ता विश्वविद्यालय,
१४ जुलाई १९४८

सुनीति कुमार चाटुर्ज्या

# निवेदन

[ एक विचित्र वातावरणमें एक परिवारके चार व्यक्ति जग रहे हैं। परिवारके बड़े बेटे सोशलिस्ट 'बिलू'को सुबह होते ही फाँसी होगी। फाँसी सेलमें जगकर वह मृत्युकी प्रतीक्षा कर रहा है। उसी जेलके अपर डिवीजन वार्डमें गांधीवादी पिता नजरबन्द हैं। 'औरत कित्ता'में बेचारी 'माँ' हैं। जेल गेटपर है छोटा भाई नीलू, किसी फासिष्ट विरोधी दलका एक सदस्य। उसने भाईके विरुद्ध गवाही दी है और आज भाईकी लाश लेने आया है! सब अपने-अपने दृष्टिकोणसे आदर्शनिष्ठ हैं, किन्तु इसके बावजूद भी, उस घुन लगे हुए पारिवारिक जीवनकी ट्रैजेडी आज अपनी चरम सीमापर पहुँच चुकी है।

'विछिन्न चिन्ताधारा इस किताबके टेकनिककी विशेषता है। एक ही कहानी की चार बार पुनरावृत्ति होनेपर भी कहानीकी सरलतामें कोई बाधा नहीं पड़ती है, इस कठिन टेकनिककी सफलताका अनुमान इसीसे लगाया जा सकता है। किताब राजनैतिक है और लेखक निष्पक्ष, यह है लेखकके सत्साहित्यिक होनेका सबूत। ] यही कारण है कि 'जागरी' १९४५ की सर्वश्रेष्ठ बंगला रचना घोषित हुई और इसके लेखक श्री सतीनाथ भादुड़ीने, एक ही किताब लिखकर प्रथमकोटिके साहित्यकारोंमें अपना एक विशेष स्थान बना लिया। इसके पहले न तो उनकी कोई कहानी ही किसी पत्रमें छपी थी और न उनका नाम ही कहीं सुना गया था।

सिर्फ तीन वर्षोंमें ही इसके चार संस्करण हो चुके हैं। अंग्रेजी, मराठी, गुजराती आदि अन्य भाषाओंमें भी इसका अनुवाद हो रहा है।

लेखक, अनुवादकके—कलकत्तामें उपस्थित न रहनेके कारण, प्रूफमें अनेक स्थानोंमें अशुद्धियां रह गई हैं। आशा है सुविज्ञ पाठक, त्रुटिके लिये क्षमा करेंगे। द्वितीय संस्करणमें उनका संशोधन कर दिया जायगा।

प्रकाशक

# सूची


फाँसी सेल—बिलू १

अपर डिविजन वार्ड—पिता ९१

औरत किता—माँ १६३

जेल गेट—निलू २३१

# फाँसी सेल

दो नम्बर वार्डके पीपलके ऊपरकी डाली पर गोधूलिकी म्लान आभा झिलमिल कर रही है। अनेक पंछी कभी इस डालपर, कभी उस डालपर फुदक रहे हैं। एक क्षण भी चैन नहीं है। कुछ देरमें ही चारों ओर अंधेरा छा जायगा। उसके बाद सारी रात नीरवताका राज। —इसीसे शायद अन्तिम क्षण की यह चञ्चलता, इतना पंखों का फटफटाना, इतना आनन्द उत्सव—जितनासा भी आनन्द, कालसे छीन लिया जासके। सचमुच क्या इसीलिए पंछीगण संध्या समय इतने चञ्चल हो उठते हैं? इस सेलमें आनेके पहले जब वार्ड नम्बर दो में था, बन्द हो जाने (Lock-up) के पहले हमलोग भी थोड़ी देरके लिए बाहरकी खुली हवा खा लिया करते थे। सचमुच क्या जरूरत के लिए? नहीं यों तो घरमें बैठे हुए हैं? कोई जरूरत नहीं है बाहर आने की, तो भी एकबार बाहर आना चाहिए ही। अधिकांश राजबन्दियोंकी ही तो यही मनोवृत्ति देखता था। वार्डर-लोग खीझ जाते और आपसमें क्या-कुछ बोलते थे—मतलब यह कि स्वराजी लोग उन्हें जान-बूझकर दिक करते हैं। लेकिन वार्डर लोगोंको दिक करनेके लिए कोई यह काम नहीं करता था। जो कुछ भी उपभोग कर लिया जा सके, उसे कोई छोड़ेगा क्यों?

मालूम होता है वे कौवे हैं ?—इतनी दूरसे ठीक पहचानमें नहीं आते हैं।...पंछी, किन्तु रातमें भी पंख-फड़फड़ाते हैं।......

एकवार बकड़ी कोलमें मीटिंग करके लौटनेके समय कामाख्याथानके विशाल वटवृक्षके नीचे हमलोगोंको सारी रात रहना पड़ा था। यहाँ की मिट्टी पर सो रहनेसे लोग कहते हैं कि कुष्ट रोग छूट जाता है। दूर-दूरसे बहुत लोग इसी उद्देश्यसे यहाँ आते हैं। अनेक कुष्ट रोगी आसपासके वृक्षोंके नीचे सोए हुए हैं। निलू और मैं थे; और साथमें शायद सहदेव था। सारी रात चिड़ियोंके डैने फटफटानेकी क्या आवाज थी? गाछके नीचे तीन आदमी पास-पास सोए हुए हैं। इस गाछके नीचे आश्रय लेनेसे निलूका मन जैसे कुछ खीझ उठा था। मैंने पूछा,—"ये सब ऐसे पंख क्यों फड़फड़ा रहे हैं, कह सकते हो?" निलू बोला, "चीटी विंटी काटती होंगी।" उसे सोचनेमें समय नहीं लगता है। सब विषयमें उसका स्थिर मत है। उस मतका आसानीसे रद्दो-बदल भी नहीं होता है। निलू बराबर ऐसा ही है।......

संध्याकी लाली धूसर हो चली। पीपलकी फुनगी पर सिन्दूरी आकाश की आभा छाई है। गाछके पत्ते अब ठीक हरे नहीं जान पड़ते हैं। पीपल के पत्तोंकी हरियाली तो गई—यही थोड़ी सी हरियाली तो यहांसे देखी जा सकती थी। इसके अलावे देखा जा सकता है एक टुकड़ा नीला आकाश—लोहेके सींखचोंके बीचसे—लोहेके तारके टोस्टरमें एक टुकड़ा पावरोटीके तरह; सेलमें रहनेवालोंके लिए सचमुच ऐसे ही दुनिया है—'सी क्लास' कैदीके भोजन से अधिक तृप्तिकर। और देखा जा सकता है जेलकी 'गुमटी' का ऊपरी हिस्सा—उसकी दीवालमें बड़े-बड़े अंग्रेजी अक्षरोंमें लिखा है—पूर्णिया

सेन्ट्रल जेल, बिहार। आकाशका यह टुकड़ा मेरा एकदम अपना है—वह मेरी अपनी चीज है। जबतक देखा जासकता है, इस स्वच्छ नील रंगको मैंने देखा किया है। ऐसे, मेरी तरह, आकाशके ठीक इस अंशको क्या और किसीने पाया है? मेरा नीला आकाश क्षण-क्षणमें रूप बदलता है। सिंदूरी रंग बैंगनी हो गया—देखते-देखते धूसर हो चला—और अभी घने अन्धकारमें डूब जायगा। ऐसा वैचित्र्यमय रसका निर्भर जेलर साहबने क्यों एक अकिञ्चन बन्दीको व्यक्तिगत सम्पत्ति बनाने दिया, इसको ठीक समझ नहीं सकता हूं। शायद वे जानते नहीं हैं—जान लेनेपर हो सकता है कलसे 'राजमिस्त्री कमान्ड' के कैदियोंको मेरे सामनेकी दीवाल और ऊँची करनेका काम दिया जायगा— हुक्म होगा, "और ऊँचा, और भी ऊँचा, जरूरत पड़े तो आसमान तक भिड़ा दो।"—इस गाछकी हरियाली, और आकाशके टुकड़ेके सिवा, यहांसे जो कुछ देखा जाना है सो सब है केवल लोहा, ईंट और सिमेन्ट—सिमेन्ट, ईंट और लोहा। वे आँखोंको लुभाते नहीं—नजरको सिर्फ रोकते हैं, उसे ठुकराकर लौटा देते हैं। इस हरे और नीले रगको छोड़कर और जो कुछ भी रंग देखता हूं सभी रूखा और कठोर मालूम पड़ता है—आँखोको कष्ट देता है चूना फेरी हुई सेलकी सफेद दीवाल भी बड़ी प्राणहीन, बड़ी पाण्डुर। कौन जाने उसपर कितने दिनोंसे चूना नहीं फेरा? दीवालपर अनेक प्रकारके दाग भरे हैं—थूकके दाग ही अधिक हैं—कैसा एक खाकी रंग—मालूम होता है, मेरे पहलेके किसी बाशिन्दाको सिपाही जी लोगोंने 'खैनी' खिलाया था। वह तो सब कुछ छोड़कर कब किस आज्ञात देशको चला गया,—रख गया है केवल दीवालपर सिपाही जी के प्रति कृतज्ञताकी छाप।···

बातचीत करनेके लिए कोई आदमी नहीं है। इसलिए सेलसे बाहर जेल-जगतसे कान द्वारा सम्बन्ध है। बातचीत केवल वार्डरके साथ कर सकता हूं— सो भी अच्छा नहीं लगता है। चारों ओर दीवाल। जिधर देखो दृष्टि दीवालसे टकराकर लौट आती है, लेकिन हमेशा कान लगाए रहता हूं, शायद कुछ बाहरसे सुन सकूं। सोलह डेग लम्बा, दस डेग चौड़ा घर। सामने मोटे लोहेकी छड़ोंका दरवाजा। दक्खिन दीवालमें छतके करीब एक छोटी खिड़की। उसके नीचे, सहनसे सटी एक हाथ चौड़ी और डेढ़ हाथ लम्बी दो लोहेकी मोटी चादरें दीवालमें जड़ी हुई हैं। इसमें बहुत-से छेद हैं। इसकी क्या जरूरत है सो मैं नहीं जानता हूं—शायद हवा आनेके लिए! या शायद इसी छेदसे बाहर का वार्डर सुनता है कि कैदी क्या बोलता है। सामने सींखचोंवाले दरवाजेपर तो एक वार्डर रहता ही है—कैदी क्या करता है नहीं करता है, यह सब तो वह साफ तौरसे देखता ही है। तो भी क्यों यह इन्तजाम है कह नहीं सकता। घरमें आनेके बीच दो अलकतरा लगे हुए मिट्टीके बर्तन (स्थानीय जेलकी भाषामें 'टोकरी') एक कोनेमें रखे हुए हैं। इस कोनेमें सहनपर चूना पोता गया है—वृत्तके चौथे हिस्सेके आकारका। सेलके बाहर खिड़कीकी तरफ दीवालके पाससे एक चौड़ा पक्का रास्ता गया है। रास्ता वृत्ताकार होकर जेलके सब वार्डों को घेरे हुए है। इस रास्तेके दूसरी ओर जेल अस्पतालकी दीवाल है, इस रास्तेसे बहुत लोग जाते आते हैं—कितने कैदी, वार्डर, डाक्टर, कम्पाउन्डर, ठीकेदार, अफसर, मिस्त्री—और भी बहुत लोग। दिनके वक्त मुफस्सिल शहरके अच्छे-खासे चालू रास्तेकी तरह मालूम होता है। और यह विशाल पूर्णिया सेन्ट्रल जेल—शहरसे क्या कम है? आमतौरसे इसमें करीब पच्चीससौ कैदी रहते हैं। और अभी—

१९४३ सालके मई महीनेमें हैं साढ़े चार हजार। और बढ़ क्यों नहीं रहे हैं यही आश्चर्य है। बाहर खाना न पाकर राह-घाटमें मरे-पड़े रहेंगे—तो भी हमारे देशके लोग ऐसा कुछ नहीं करेंगे, जिससे उन्हें जेलमें आना पड़े। एकदफा 'इन्कलाब जिन्दाबाद' कहनेसे या हलवाईकी दूकानसे एक मुट्ठी खाना उठानेसे अगर छः महीनेके लिए अन्न-जल और माथा घुसानेके लिए जगहका बन्दोवस्त हो जाय तो नहीं खाकर मरनेकी क्या जरूरत है ?···साढ़े चार हजार ···किसी शहरमें पाँच हजारकी बस्ती हो जानेसे उसे म्युनिसिपेलीटीकी श्रेणीमें रखा जा सकता है। जेल भी एक छोटामोटा शहर है। इस शहरका नाम "लौहगराद" होनेसे अच्छा रहेगा,—ठीक लेनिनग्रादकी तरह सुननेमें लगता है।······लोहेकी चादरके छेदमें कान लगाए बैठा रहता हूं। आदमी के गलेकी आवाज बड़ी मीठी लगती है। जेलकी पौलिटिक्स, जेलके बाहरकी पौलिटिक्स, सब यहाँ बैठे रहनेसे जानी जा सकती है।—सुपरिन्टडेन्टके साथ जेलर बाबूका अनबन चलता है, हेड जमादारको जेलर बाबू 'आप' बोलते हैं कि 'तुम' बोलते हैं, जापानियोंके रण-कौशलकी कहानी, जेलमें कैदियोंके बढ़ जानेसे बहुत-से कैदी छोड़ दिए जायँगे (जेलकी भाषामें "छँठइया") बर्माके जेल कर्मचारी लोग बिहारी जेल कर्मचारियों पर रोब गालिब करनेकी चेष्टा कर रहे हैं—यह सब बात—और भी बहुत-सी बातें कानोंमें आती हैं। राज-बन्दियोंके ऊपर उस दिन लाठी चार्ज होनेपर कितनी दफे स्ट्रेचर आया-गया, उसका हिसाब यहीं बैठकर किया गया था।: लोहेकी झन-झन आवाज सुन कर ही समझ जाता हूं कि जो कैदी जारहा है उसे 'बार फेटर्स' (स्थानीय भाषामें "डण्डा बेड़ी") की सजा हुई है, शायद उसने किसी जेल-कर्मचारीका हुक्म नहीं माना था।···

क्या मच्छड़ है ! सन्ध्या होने पर क्या कहीं पनाह है ! उस दिन सुपरिन्टेंडेन्टने आकर पूछा था—किसी चीजकी जरूरत है कि नहीं ; अर्थात् जो चाहो सम्भव होने पर दिया जायगा। बचपनसे सुनता आरहा हूं कि फांसी पानेवाले कैदीको इस तरह पूछा जाता है ; और अधिकांश लोग अच्छी-अच्छी चीजें खानेकी इच्छा जनाते हैं। नए सुपरिटेन्डेन्ट भी क्या मुझसे ऐसी ही प्रार्थनाकी उम्मीद करते थे ? मुझे बड़ा लोभ हुआ था कि एक मशहरीके लिए कहूं—जो कुछ दिन आरामसे तो सो लिया जाय, लेकिन कहनेके समय कह न सका। आत्म-सम्मानको जैसे चोट पहुँचने लगी। बोला,—"धन्यवाद मैं काफी आरामसे हूं। किसी चीजकी जरूरत नहीं है।" पीछे वार्डर मुझ से बोला—"उड़ीसाके किसी करदराज्यके दो स्वराजी बाबुओंको इसी जेलमें फाँसी दी गई थी—एक आदमी आपके इसी एक नम्बर सेलमें था, और एक आदमी दो नम्बरमें—उन्होंने साहब मारा था—एक दम जान से—पाँच सालकी बात—उन्होंने शायद फांसीके पिछले दिन बहुत-से मुर्गों के अण्डे भूंज कर खाए थे। उसके बाद रातमें 'इन्कलाब जिन्दाबाद' और भी क्या-क्या नारा लगाते रहे। अन्त समय तक वे नारा लगाते रहे। उस रातमें कोई कैदी सो न सका। आप भी जो जीज खाना चाहते हैं, माँगी क्यों नहीं ?"

वार्डरकी बातका मैं अविश्वास नहीं करता हूं। लेकिन उसके उपदेशको मन नहीं मानता है। ये वार्डर लोग अशिक्षित हैं ; सुबिधा पाने पर चोरी करते हैं ; कैदियोंके ऊपर रोब जमाते हैं। कमजोर दिल कैदियों पर अमानुषिक अत्याचार करते हैं। गम्भीर स्वभावके कैदियोंसे अदब करते हैं। ये लोग सीधे-सादे आदमी हैं—दाव-पेंच समझते हैं नहीं—भलमन-

साहतका ताकाजा मानते नहीं। सुपरिटेन्डेन्ट वगैरह शिष्टाचारके नाते मेरे सामने फाँसी या उस सम्बन्धकी बातचीत नहीं करते हैं। लेकिन ये लोग दो एक बात बोलनेके बाद फाँसीकी बात छेड़ते हैं। पहले कई एक दिन यह बात सुननेसे दिलके अन्दर धक्से कर उठता था—मनमें कुछ-कुछ कमजोरी-सी मालूम पड़नी थी, एक अजीब अनमना-सा हो जाता था। फाँसीका सारा दृश्य मेरी आँखोंके सामने नाच उठता था। शायद मेरी फाँसीका हुक्म रद्द हो जा सकता है—यही समझकर अपने मनको ढाढ़स देता था। कुछ दिनों में ही यह बात वर्दाश्त हो गई। अब उस बातसे मनपर कोई असर नहीं होता है। सेलके ठीक पच्छिम तरफ फाँसीका तख्ता है। वार्डर लोग ही आकर खबर देते थे—आज फाँसीके तख्ते पर काला रंग चढ़ाया गया है—आज मेरे वजनका बालूका एक बोरा रस्सीसे बाँधकर जाँच की जा रही है कि रस्सी ठीक मजबूत है कि नहीं;—और भी बहुतसी ऐसी ही खबरें।

मेरे मनकी गति विचित्र है! काले रंगकी बात सुनकर सोचता हूं ब्लैक-जापान या अलकतरा? वार्डरको पूछता हूं अलकतरा था क्या? रस्सी किस चीजकी थी? सनकी? अपने मनकी स्वयं ही हँसी उड़ानेकी इच्छा होती है। रस्सी किस चीजकी बनी है, अब भी क्या मेरे लिए यही जानना विशेष जरूरी है? सब कोई—परीक्षाके पहले, सवालोंको हल करनेकी तैयारी (कर रहे हैं—) सभी करते हैं—और मेरी तैयारी नहीं होनेपर भी—हो सकता है—तत्सम्बन्धी किसी मामूली बात पर मेरा मन लगा हुआ है। रेखागणितके आवश्यक साध्योंकी अपेक्षा अनावश्यक अनुमानोंमें मेरा मन जरूरतसे ज्यदा लगता है;—फुटनोट, भूमिका आदि तो परीक्षाके पूर्व दिन भी देखता हूं। वर्षके आरम्भसे ही सोचता हूं—आवश्यक बातें तो पीछे पढ़नी ही

होंगी—अभी इधर-उधरकी चीजें पढ़ूं। और शायद अन्त तक भी असली चीज पढ़ी न गई।

याद आती है काशी विद्यापीठमें पढ़नेके समयकी एक रातकी बात। सकलदेव और हम रातमें जाग कर पढ़ रहे हैं। जरासा नस लेकर दोपहर रातमें वह "आज" का सम्पादकीय पढ़कर मुझे सुनाने लगा। ..................काशी विद्यापीठमें पढ़नेके समय जब पुलिसने मुझे गिरफ्तार कर लिया—राजनीतिक हत्याकाण्डके अभियोगमें सन्देह करके—तब भी फाँसीकी बात अपने आप मनमें आती थी। पीछे पुलिसने सबूत नहीं मिलने पर मुझे छोड़ दिया। सचमुच उसमें मैं था भी नहीं। किन्तु फाँसी पड़नेका मुझे एक अजीब डर था। शायद अबकी सचमुच फाँसीका हुक्म हो गया है, इसलिए डर कम गया है। दूरसे ही डर ज्यादा मालूम पड़ता है। जो जेल नहीं आए हैं वे जेल आनेको ही कितना मुश्किल काम समझते हैं, लेकिन आ जानेसे डर छूट जाता है।

उफ! मच्छड़ काटनेसे सचमुच बड़ी तकलीफ होती है। न जाने क्यों, हम लोगोंके गान्धी-आश्रमके मच्छड़ इन मच्छड़ोंसे ज्यादे जोरसे भनभनाते हैं, आकारमें भी बड़े हैं, लेकिन लगता है काटनेसे लहर कम होती है। निलू होता तो जरूर माँ से हँसीमें कहता, "ये आश्रमके मच्छड़ हैं न—अहिंसाके ढंगसे खून पीना सीख चुके हैं।" माँ हँसी रोककर खिन्नताका भाव लाकर बोलती, "अच्छा, बहुत हुआ अभी आप जरा आइए तो।" माँका इस समयका मुख जैसे साफ देख रहा हूं। आँखोंके कोनेमें झुर्रियोंकी दो-दो रेखाएँ पड़ी हैं।......माँके मनमें हमेशा एक डरा हुआ सा भाव समाया रहता है—मालूम होता है शायद पिताको ही लक्ष्य करके नीलू कुछ

कहेगा, ऐसा कुछ बोला। फिर भी कुछ बोलनेसे यह बात पिताके कानमें जिससे न पड़े इसकी भी काफी कोशिश देखी है। नीलू सदा स्पष्टवक्ता है। इसके लिए कितनी दफा बहुत गोलमालमें पड़ा है। किन्तु दूसरे लोग उसकी बातसे दुःखित होते हैं या उसके कामसे क्षुब्ध होते हैं, इस बातकी उसने कभी पर्वाह नहीं की। सूक्ष्म बात उसके मनपर प्रभाव नहीं डालती है। नीलूका मन और दृष्टिकोण स्थूल है। कलम और कूंची उसके लिए नहीं है—वह शारीरिक श्रमकी बात समझता है, हँसिया हथौड़ेकी बात; और उसके हाथमें इस्पातकी तेज तलवार शोभा पाती है—परशुरामके कुठारकी तरह निष्ठुर और कर्त्तव्यनिष्ठ। एक वार नीलू बोला था कि उसे कविता अच्छी नहीं लगती है। मैंने कहा था कि ऐसी कविता लिख दूँगा जो तुम्हें जरूर अच्छी लगेगी। और लिख दिया था मैंने धनिक श्रमिक आदि देकर एक लट्ठमार किस्मका सानेट ( Sonnet )। नीलूको खूब अच्छा लगा। कविता याद नहीं—एक पंक्ति भी नहीं। नीलूने उसे बाँधकर आश्रमके घरमें लटकाकर रख दिया था—माँके घरमें····

मालूम होता है माँ बरामदेमें बैठी हैं। सिर हिलाते हिलाते नीलूकी ओर देखकर, दन्तमूलमें जीभ सटाकर एक आवाज की—'चिक्'। उसके बाद बोली "मरनेपर भी स्वभाव नहीं जाता"। नीलूने मेरी ओर नजर करके इशारा किया—मतलब यह कि "भैया, इस वार!" दोनोंने जो सोचा था—ठीक जो सोचा था—माँने संस्कृत श्लोक कहना शुरू किया—"अंगार शतधौतेन मलिनस्यनः मुञ्चते।" हमलोग दोनों आदमी हँसने लगे—माँने ठीक 'मलिनस्त्व' कहा था। बोली—"दुर्, याद क्या रहता है?" नीलू बोला—"तब कहनेकी क्या जरूरत?" माँ की बातोंकी ये भूलें हम लोगोंको कण्ठस्थ

हैं। यह ठीक है कि नीलूने ही दिखला दी थी।—ऐसा न होता तो शायद ख्याल भी न करता। माँ बोलती हैं "दयादाक्षिणात्य"। मैंने एक दिन माँसे कह भी दिया था—'दयादाक्षिण्य' कहनेके लिए। बात कहनेके समय, देखा है, माँ को यह याद ही नहीं रहता है। कह देनेसे झेंप जाती हैं इसलिए मैं और गलती दिखलाता भी नहीं हूं। नीलू लेकिन यह बात ठीक तरहसे समझता नहीं है। दूसरे की किसी कमजोरी, चालचलन में मखौलकी खुराक, सहजही उसकी नजरमें पड़ जाती है। लेकिन उसकी बातसे दूसरेके मनपर कैसी चोट लगती है, इस ओर वह सोचकर भी देखता नहीं है............पिता से हम लोग बराबर कुछ दूर ही दूर रहते हैं। जरूरी बातों के सिवा और कोई बात ज्यादा होती नहीं। इसीलिए पिताजी और आश्रमके दूसरे लोगोंके खा लेनेके बाद नीलू और मैं माँ के साथ खाने के लिए बैठते हैं। थोड़ा दूध न होनेसे माँ का खाना होता नहीं है। यही एक शायद माँ की विलासिता है। आश्रममें बहुतसे आदमी रहते हैं। और समय असमयमें नये अतिथि आते ही रहते हैं, यह भी प्रायः नैमित्तिक क्रिया है। इसीलिए अक्सर दूध कम रह जाता था। थोड़ा दूध है, माँ प्रायः मुझको और नीलूको दे देतीं। हम लोग एक कटोरेमें अपने-अपने कटोरों से थोड़ा-थोड़ा ढालकर माँ के लिए रख देते थे। देखता हूं नीलू ऐसे समयमें अवश्य कहेगा "दूध न होनेसे माँ का खाना नहीं होता है।" बात ऐसी कुछ नहीं है। लेकिन माँ के चेहरे पर कुछ झेंप आगई,—जैसे कोई छिपी हुई कमजोरी पकड़ी गई हो। इतनी बातों पर नीलू की नजर पड़ती है, किन्तु इस पर नहीं।.......

माँके बीमार हो जाने पर बीमारी कुछ ज्यादा है ऐसा कहनेसे जैसे खुश

होती हैं। इसलिए जान बूझकर भी मांके सिर पर हाथ रखकर बोला—"देह तो जल रही है—बहुत बुखार है।" नीलू वहां पर रहे तो—हाः हाः करके घर कँपाते हुए हँसने लगेगा।······

······सुपरिटेण्डेण्टको मुझे किसी चीजकी जरूरत नहीं है, कहकर उस दिन मनको बड़ी तृप्ति हुई थी—केवल तृप्ति ही नहीं, गर्व भी। "साहब" तो अकेले आते नहीं हैं; साथमें जेलर, डाक्टर, असिस्टेण्ट जेलर, जमादार और कई एक अगरक्षक वार्डर और मेट सभी थे। हाँ, और जो सिख कैदी साहबके खाकी रंगके विशाल राजछत्रको लेकर उसके साथ-साथ दौड़ता है, उसके बारेमें तो कहना भूल ही गया था। सचमुच दोर्दण्ड-प्रताप सुपरिण्टे-ण्डेण्ट जेल-साम्राज्यके एक छत्राधिपति हैं।······उस दिन उसके प्रश्नका उत्तर देकर किसीके भी मुँहकी ओर देख न सका। कैसा कुछ हलचल हो गया—और इच्छा होती भी यह जाननेकी कि मेरी बातका उन पर कैसा असर हुआ। मनमें होता था जैसे मैं नाटकका नायक हूं।······बचपनमें सन्तोष-दाके मुखसे स्वदेशी युगकी कहानी सुनकर कई बार आंखोंमें आँसू आ गए थे—अमर शहीदकी वही याद मेरी आँखोंके आगे नाच उठी। "तंग मत करो, अब शांतिसे मरने दो।" अपनी बातकी तुलना मैंने बंदूकसे घायल मरणासन्न शहीदकी बातोंसे की थी। इस कहानीको सुनकर मेरी आँखोंमें आँसू आते थे—और मेरी बात क्या? सुननेवालोंके मनमें कोई असर नहीं पैदा किया होगा? शायद नहीं। ये लोग रोज ही ऐसी बातें देखते हैं। ये लोग वयस्क हैं, संसारसे अभिज्ञ—बच्चोंकी तरह भावुक नहीं। लोग मेरी प्रशंसा करें, मेरी चर्चा करें, यही जैसे मैं चाहता हूं—यह मेरे मनकी दुर्बलता है। कभी-कभी अपने ऊपर सन्देह होता है, शायद देशके भविष्यकी अपेक्षा

अपने नामके भविष्यके बारेमें मैं अधिक सजग हूं। सचमुच क्या यही बात है? एक दिनके लिए भी जीवनके स्थूल उपभोगमें अपनेको डुबाया नहीं। देशके लिए जो काम करना अच्छा समझा है, उसे करनेमें तिलमात्र भी विचलित नहीं हुआ हूं। मैंने अपने व्यक्तिगत सुख-दुःख, भविष्यकी बात सोची नहीं। उसके बदले अगर इच्छा करता हूं कि देशके लोग मेरे बारेमें दो एक तारीफकी बात कहें तो क्या मेरी यह इच्छा अनुचित है? जेल-डाक्टरने अपने घरमें अवश्य मेरी चर्चा की है। असिस्टेण्ट जेलर शायद उसी समय ऊँचे दर्जेके कैदियोंके वार्डमें जाकर इसके बारेमें कह आया है। पिताजी भी तो उसी वार्डमें रहते हैं! उनके कानमें भी अवश्य यह बात जायगी। पिताजी निर्विकार आदमी हैं; बाहरसे देखकर मनका भाव जाननेका उपाय नहीं है। एकान्तमें बैठकर चर्खा कात रहे हैं। आँखोंके कोनेके दो बूँद पानीके कारण सूत धुँधला पड़ गया।...न, पिताजीसे इतनी व्याकुलताकी उमीद नहीं करता हूं। शायद कुछ अनमना होंगे; चरखेकी तन्मयता शायद कुछ देरके लिए कम जा सकती है—सूत दो एक बार बेशी टूट सकता है, बस।........अपने मनमें सन्देह होता है, आशंका होती है कि जेल-कर्मचारियोंके मनमें, जैसे भावकी आशा की थी, वैसा भाव उद्रेक कर न सका। जोरदार आवाजसे बात कह न सका—आँखें नीची कर लीं। शायद उन्होंने सोचा मेरा मन सबल नहीं है। मेरा हावभाव जैसे सरकारके विरुद्ध मान-अभिमान दिखलानेके समान लगा। वे लोग दिन-रात चोर, डकैत, खूनीके साथ काम करते हैं। जिससे उनके मनकी भावुकता और बहुत-सी कोमल वृत्तियाँ सूख जाती हैं। राजवन्दियोंको ये चोर, डकैतसे अलग नहीं समझते हैं। व्यवहारमें जो कुछ भेद है सो केवल गोल्मालके डरसे, नहीं

तो स्वार्थके लिए। जो डाक्टर तीसरे दर्जेके राजवन्दियोंको बीमार होने पर गाली-गुफ्ता करता है, 'पेट खराब है, दवा दो', कहनेसे कहता है "But don't expoct Dahi" अर्थात् अगर दही खानेकी उमीदमें कोशिश करके बीमार पड़े हैं तो निराश होना पड़ेगा ;—वही डाक्टर ऊँचे दर्जेके राज-बन्दियोंके सामने कैसा मिट्टीका माधो बन जाता है! यही तो दो बरस पहले व्यक्तिगत सत्याग्रहके समय इन्हीं जेल-कर्मचारियोंको, कांग्रेसके नेता लोगोंके आसपास चक्कर काटते और जब तब खुशामद करते देखा है। उस समय भी वे लोग सोचते थे कि कांग्रेस फिर बिहारका मन्त्रित्व ग्रहण कर सकती है। और आज!........

इन्हीं जेलकर्मचारियोंको क्या उस दिन अपनी बात और व्यवहारसे प्रभावित कर सका? इसकी अपेक्षा अगर नाटकीय ढंगपे जोरदार आबाजमें कह सकता—"जूता मारके जाय दान! तुमलोगोंसे मैं कृपा नहीं माँगता हूं" या इसी किस्मका और कुछ, तब इससे ज्यादा प्रभावित होते। वह थोड़ा नाटकीय भाव दिखलाता जरूर लेकिन जो चाहता सो हो जाता। याद आता है—दो नवम्बर वार्डमें अक्टूबर महीनेमें लाठी-चार्जके बाद माथा फूटनेकी अवस्थामें शुकदेवकी वक्तृता—सोए-सोए—एक ही सुरमें—नाटकके मृत्युके दृश्यकी तरह। —"तुम लोगोंको शर्म नहीं आती" कहकर शुरू—अभी भी कानमें साफ आवाज आती है। मैंने एकबार स्कूलमें पारि-तोषिक बाँटने के समय 'मेघनाद बध' की आवृत्ति की थी। असिस्टेण्ट हेड-मास्टर काली बाबू सिखलाते थे। यहाँ तक सोए-सोए केहुनीपर भार देकर बोलोगे—उसके बाद एकदम सोकर आँखें बन्द करके धीरे-धीरे कहोगे, 'के वा ए कलंक तोर भुञ्जिवे जगते कलंकि! ×···' शुकदेवकी वक्तृता

उसकी अगल-बगलकी हालतके साथ पूरा-पूरा मेल नहीं खाती है। लेकिन मैंने देखा कि इसकी विभिन्नता थोड़े ही लोगोंकी नजरमें पड़ी थी।···

"बाबू विजे भैल बा?"

विचारकी धारा टूट गई। देखा वार्डर साहब सामने हैं। बातके स्वरमें जैसे सहानुभूति कुछ मिली हुई थी। बहुत देर हुई कि बाहर रोशनी दे गया है, अब तक देखा नहीं था। रोशनी सेलके भीतर दी जाती तो इनकी क्या हानि हो जाती समझ न सका। किरासन तेल लगाकर आत्महत्या करना बहुत आरामदेह नहीं है। तो भी ये लोग साहस नहीं करते हैं। हो भी सकता है। उन लोगोंके हरेक नियम बहुत जानकारीसे बनाए गए हैं। केवल ऐसे ही एक बिल्कुल तुच्छ नियमके कारण बीते सालका जेल-विद्रोह सफल नहीं हो सका। गेट-वार्डरको मारकर चाबीका गुच्छा कैदी-दलके हाथ लगा था। लेकिन चाबीके बहुत बड़े छल्लेमें लगभग दोसौसे अधिक चाबियाँ थीं, और उनमें अधिकांश बेकार थीं। जेलका नियम है, ऐसी बहुतसी बेकार चाबियाँ छल्लेमें रखनी पड़ेंगी। जेल-विद्रोही इस चाबीके छल्लेके हाथ आनेपर भी कौन चाबी तालेमें लगेगी यह ठीक नहीं कर सका, कोशिश करते-करते पाँच मिनट लग गए। इसी बीच "पगली" (alarm) बजी—बन्दूक, सिपाही, फौज पहुँच गई। ·· उसके बाद ····

सिपाहीजीके प्रश्नका जवाब न देकर पूछा "अभी कितना बजा है?"

सिपाहीजीने कहा "दफा बदलनेका 'टैन' होगया है"—यानी इन लोगोंकी जगहपर ड्यूटी देनेके लिए वार्डरोंका दल आगया है। गुमटीमें (central tower) अभी किस वार्डमें कितने कैदी बन्द हुए, नए कैदीकी आज कितनी "आमदमी" हुई, कितना "खर्चा" यानी छोड़ा गया,

इसके बाद टोटल मिला कि नहीं इसका हिसाब हो रहा है। देखता हूं सिपाहीजी तोभी अपना प्रश्न भूला नहीं है। फिर पूछता है "भोजन नहीं किया?"

देखा कि उसने लक्ष्य किया है कि मैंने भात नहीं खाया है। बोला—"नहीं,भूख नहीं है।"

वह बोला "दही है; थोड़ा भोजन कर लिया जाय।" हप्तेमें एक दिन नीचे दर्जेके राजबन्दी लोग खानेके लिए दही पाते हैं—पीतलकी थालीमें पतला महुआ दही—और उसमें एक किस्मकी जली हुई गन्ध;—कांग्रेस मिनिस्ट्रीका चलाया हुआ नियम—तीसरे दर्जेके राजबन्दियोंके लिए रोजके मजाक की चीज। लक्ष्य कांग्रेसके महारथियों के प्रति—क्यों नहीं उन लोगोंने सभी राजबन्दियोंकी एक ही श्रेणी बनाई? ऊँचे दर्जे और नीचे दर्जेके राजबन्दी रखनेका क्या अर्थ ? ऊँचे दर्जेकी "खुराकी" दस आना और नीचे दर्जेकी साढ़े तीन आना—इसके बीचोबीच एक श्रेणी केवल राजबन्दियोंके लिए करनेमें क्या हर्ज था? नीचे दर्जेके राजबन्दियोंको अपना पैसा खर्च करनेका अधिकार देनेसे क्या होता? बाहरसे उन लोगोंके लिए खानेके लिए या और कोई चीज आनेसे, उसे लेने दिया जानेसे महारथियोंके किस पक्के ध्यानमें खलल पड़ जाता? महीनेमें दो चिट्ठियाँ लिख देनेसे कौन महाभारत अशुद्ध हो जाता? अपने पैसेसे बीड़ी-सिगरेट पीनेका अधिकार देनेसे उनका क्या बिगड़ जाता? और भी कितने ही अभियोग!

ऊँची गुमटी परसे मेघमलार स्वरमें रागिनी उठी "बोलो रे एक नम्बर! बोलोरे द नम्बर! बोलोरे ती-ई-ई-न नम्बर! बोलोरे चा-आ-र नम्बर!

उसकी अगल-बगलकी हालतके साथ पूरा-पूरा मेल नहीं खाती है। लेकिन मैंने देखा कि इसकी विभिन्नता थोड़े ही लोगोंकी नजरमें पड़ी थी।…

"बाबू विजे भैल बा?"

विचारकी धारा टूट गई। देखा वार्डर साहब सामने हैं। बातके स्वरमें जैसे सहानुभूति कुछ मिली हुई थी। बहुत देर हुई कि बाहर रोशनी दे गया है, अब तक देखा नहीं था। रोशनी सेलके भीतर दी जाती तो इनकी क्या हानि हो जाती समझ न सका। किरासन तेल लगाकर आत्महत्या करना बहुत आरामदेह नहीं है। तो भी ये लोग साहस नहीं करते हैं। हो भी सकता है। उन लोगोंके हरेक नियम बहुत जानकारीसे बनाए गए हैं। केवल ऐसे ही एक बिल्कुल तुच्छ नियमके कारण बीते सालका जेल-विद्रोह सफल नहीं हो सका। गेट-वार्डरको मारकर चाबीका गुच्छा कैदी-दलके हाथ लगा था। लेकिन चाबीके बहुत बड़े छल्लेमें लगभग दोसौसे अधिक चाबियाँ थीं, और उनमें अधिकांश बेकार थीं। जेलका नियम है, ऐसी बहुतसी बेकार चाबियाँ छल्लेमें रखनी पड़ेंगी। जेल-विद्रोही इस चाबीके छल्लेके हाथ आनेपर भी कौन चाबी तालेमें लगेगी यह ठीक नहीं कर सका, कोशिश करते-करते पाँच मिनट लग गए। इसी बीच "पगली" (alarm) बजी—बन्दूक, सिपाही, फौज पहुँच गई।·· उसके बाद ····

सिपाहीजीके प्रश्नका जवाब न देकर पूछा "अभी कितना बजा है?"

सिपाहीजीने कहा "दफा बदलनेका 'टैन' होगया है"—यानी इन लोगोंकी जगहपर ड्यूटी देनेके लिए वार्डरोंका दल आगया है। गुमटीमें (central tower) अभी किस वार्डमें कितने कैदी बन्द हुए, नए कैदीकी आज कितनी "आमदमी" हुई, कितना "खर्चा" यानी छोड़ा गया,

इसके बाद टोटल मिला कि नहीं इसका हिसाब हो रहा है। देखता हूं सिपाहीजी नोभी अपना प्रश्न भूला नहीं है। फिर पूछता है "भोजन नहीं किया ?"

देखा कि उसने लक्ष्य किया है कि मैंने भात नहीं खाया है। बोला—"नहीं,भूख नहीं है।"

वह बोला "दही है; थोड़ा भोजन कर लिया जाय।" हतेमें एक दिन नीचे दर्जेके राजबन्दी लोग खानेके लिए दही पाते हैं—पीतलकी थालीमें पतला महुआ दही—और उसमें एक किस्मकी जली हुई गन्ध;—कांग्रेस मिनिस्ट्रीका चलाया हुआ नियम—तीसरे दर्जेके राजबन्दियोंके लिए रोजके मजाक की चीज। लक्ष्य कांग्रेसके महारथियों के प्रति—क्यों नहीं उन लोगोंने सभी राजबन्दियोंकी एक ही श्रेणी बनाई ? ऊँचे दर्जे और नीचे दर्जेके राजबन्दी रखनेका क्या अर्थ ? ऊँचे दर्जेकी "खुराकी" दस आना और नीचे दर्जेकी साढ़े तीन आना—इसके बीचोबीच एक श्रेणी केवल राजबन्दियोंके लिए करनेमें क्या हर्ज था ? नीचे दर्जेके राजबन्दियोंको अपना पैसा खर्च करनेका अधिकार देनेसे क्या होता ? बाहरसे उन लोगोंके लिए खानेके लिए या और कोई चीज आनेसे, उसे लेने दिया जानेसे महारथियोंके किस पके ध्यानमें खलल पड़ जाता ? महीनेमें दो चिट्ठियाँ लिख देनेसे कौन महाभारत अशुद्ध हो जाता ? अपने पैसेसे बीड़ी-सिगरेट पीनेका अधिकार देनेसे उनका क्या बिगड़ जाता ? और भी कितने ही अभियोग !

ऊँची गुमटी परसे मेघमलार स्वरमें रागिनी उठी "बोलो रे एक नम्बर ! बोलोरे दू नम्बर ! बोलोरे ती-ई-ई-न नम्बर ! बोलोरे चा-आ-र नम्बर !

बोलोरे-ए-ए-ए पाँच नम्बर ! बोलोरे-ए छे-ए नम्ब-अ-अ-अर ! बोलोरे-ए-ए-ए नया गोल ! बोलोरे-ए औरत किता-आ-आ !

सब वार्डका जवाब नहीं आया—मालूम होता है मेरे सेल तक आवाज पहुँची नहीं। गुमटीके ऊपरका सिपाही भी जैसे सब वार्डसे जवाब की उमीद नहीं करता है। उसका काम यन्त्रके समान है, ग्रामोफोनके गीतकी तरह एक दफा चिल्ला जाना। हरेक वार्डसे जवाब आना इसलिए जरूरी है कि कितने कैदी हरेक वार्डमें बन्द हुए हैं। इसका टोटल पहले ही गुमटीके नीचेके तल्लेमें जेल-कर्मचारियोंने करके रख दिया है—पुकारना केवल एक नियमकी रक्षा मात्र है। सब वार्डके मेट या 'पहरा' इस बातको जानते हैं। इसलिए इसका जवाब देकर बेकार मिहनत करना नहीं चाहते। टन्-टन् करके दो बार घण्टा बजा। "गिनती मिलान" हो गया। नौ बज गया। कलका "गिनती मिलान" और नहीं सुनना होगा।...गुमटीके ऊपरकी रोशनी अवश्य पचास कैन्डल पावर (Candle power) की है। ब्लैक आउट (Black out) के लिए उसके ऊपर काला ढक्कन पड़ा है। लेकिन ठीक उसके नीचे बाँसकी चटाईका बुना हुआ एक बड़ासा छाता है—वार्डरको धूप और वर्षासे बचावके लिए ब्लैक आउटके लिए गुमटीको काले रंगसे पोता गया है। लेकिन इस छाते पर रोशनी पड़ करके इतना प्रकाश चारों ओर फैल जाता है कि अधिक देर तक लगातार उस ओर देखा नहीं जाता है। छातेने ब्लैक आउटकी सारी कोशिश बेकार कर दी है।....गुमटी और उसके ऊपरके छातेको देखकर काशीके अहिल्याबाई घाटकी बात याद आती है। घाटके उसी गुम्बजके ऊपर हमलोगोंका; रोज ही शामके वक्त, अड्डा रहता था।.... सिहेश्वर सुकुलने एकदिन उसके ऊपरसे पानकी पीक फेंक दी थी—उसकी

नहसे कैसा हो-हल्ला मचा था! सिंहेश्वरका साहस आश्चर्यजनक है! देखा उसको मरनेका जरा भी भय नहीं है। वह ऐसी लापर्वाहीसे फाँसी पर ढ़नेकी बात करता था कि सुनकर मुझे इर्ष्या होती थी। मालूम हुआ था कि वह मुझको अपने दलका सदस्य बनाना चहता था; लेकिन उसकी इच्छा री न कर सका। अपने अन्दर जब खोज कर देखता हूं तो कभी-कभी नमें होता है कि अपने साहसकी कमीसे ही शायद उसकी मनोकामना पूरी हीं कर सका—उसका कार्यक्रम मुझे पसन्द नहीं था इसलिये नहीं। लेकिन ाज वह डर कहाँ चला गया? उम्र बढ़नेसे सुना है लोगोंका मरनेका डर ी बढ़ता है। मेरे लिए यह नियम टूट गया था क्या? सिंहेश्वरके साथ लाकात होनेसे अभी कितनी बातें होतीं? बहुत दिनके बाद रामगढ़ ांग्रेसके समय हठात् उससे मुलाकात हुई। वह कांग्रेस मिनिस्ट्रीके वक्त रेली जेलसे छोड़ा गया;—डाक-गाड़ीमें डकैती करनेके कारण उसे सजा हुई ।—लखनऊके नजदीककी उस जगहका नाम याद नहीं आता, पीपराहा या या नाम था........

नया सिपाही किस वक्त आया मालूम नहीं। ध्यान टूटा जब उसने छा "बाबू एक बीड़ी पीजिएगा?"

आज वॉडर तक अन्तरग होना चाहता है—अगर मेरा कोई उपकार र सके—यदि मुझे जरा खुश कर सके। यह सहानूभूति अपने आप उपजी —इसमें कुछ भी बनावट नहीं। उसकी सहानुभूति का दान इन्कार करनेसे ालूम होता है वह जरा खिन्न होगया। थोड़ा 'किन्तु-परन्तु' करके उसने पना काम पूरा किया। पहले खटाक् से आवाज करके ताला हिलाया। सके बाद हड़हड़ करके सींखचोंवाले दरवाजे को हिला दिया। यह काम

उसे पहले ही करना चाहिए था—पहलेवाले पहरेदार के सामने ही। मतलब यह कि दरवाजा ठीक बन्द है कि नहीं और किल्ली ठीक लगी है कि नहीं। पहले के वार्डर के साथ बन्दोबस्त करके कैदी ताला खुलवा कर रख सकता है,—किन्तु कैदी भाग जानेसे पहलेवाले पहरेदार की कोई जिम्मेदारी नहीं है; क्योंकि उसने अपने बाद वाले वार्डर को चार्ज सुपुर्द कर दिया है। इसीलिए इतनी खबरदारी, इतना इन्तजाम है। लेकिन पहले का वार्डर चला गया, घर मुंहाबेल—जरा भी रुक नहीं सकता। लगातार दिनमें आठ घण्टा ड्यूटी बजाई है—उनका क्या कसूर?

सिपाहीजी जरा खिन्न हो गया है, जानकर उससे मैंने बातें कीं, पूछताछ की, उस तरफ की 'डिगरी' ( Cell ) का काम खत्म करके आ रहा है क्या?

बोला—"हाँ। दस नम्बर, नौ नम्बर, सात नम्बर, तीन नम्बर और एक नम्बर इन पाँच 'डिगरी' में 'आसामी' हैं। आज दस नम्बर से शुरू किया। वार्ड का सिपाही तो कहीं बाहर बैठकर गप्प लड़ा रहा है, मेरे और तीन नम्बर के सिपाही पर ही 'गिनती' का भार दिया गया है।...."

'कण्डेम्ड सेल' ( Condemned Cell ) के पाँच कैदी। जेल की भाषा में इस वार्ड का नाम फाँसीसेल है।. ( Condemned Cells ) सुनकर ही मेरे मनमें होता है जैसे ये सेल इञ्जीनीयरिंग विभाग द्वारा तिरस्कृत ( Condemned ) हैं; ये तिरस्कृत कैदियों के लिए हैं—एसीलिए इस वार्ड का यह नाम है, यह बात पहले मनमें नहीं आती। नौ और दस नम्बर सेलमें दो बम केसके आसामी हैं—विचाराधीन ( Undertrial )। उन्हें इन सेलों में क्यों रखा है मालूम नहीं। "फाँसी सेल" के बीस सेल

के अलावे इस जेलमें और भी चालीस पचास सेल हैं। तोभी क्यों इनको यहाँ रखा गया है, कहना मुश्किल है। हो सकता है पुलिस का ऐसा ही हुक्म हो। मालूम होता है पुलिस इनसे अपराध स्वीकार करनेकी उम्मीद रखती है। इसीलिए दूसरे राजबन्दियों के साथ मेलजोल करने देना नहीं चाहती है। सात नम्बर में एक पागल है। वह अपने आप बकता रहता है। वार्डर को देखने से ही अश्लील भाषा में गालीगलौज करता है। नौ और दस नम्बरके दोनों कैदियोंके सेलका दरवाजा दिनभर खुला रहता है। दोपहरको किसी-किसी दिन मेरे सेलके खास वार्डरको बीड़ी, चीनी वगैरह देकर उसके बदले वे लोग मेरे साथ दो एक बात कर लेते हैं। शामके वक्त उन लोगोंका दरवाजा बन्द हो जानेपर वे अपने-अपने सेलसे पागल कैदी को चिढ़ाते रहते हैं। उसका नाम लेकर पुकारने से ही वह गाली बकना शुरू करता है। वार्डर लोग कहते हैं कि वह झूठमूठ पागलपनका ढोंग करता है। ऐसा उन्होंने बहुत देखा है। "सरकार उत्ता बुड़बक नहीं है।" रिहाई पाना इतना सहज नहीं है।····तीन नम्बर में एक खूनी आसामी रहता है। भाई का खून किया है! वह एक बहुत बेहूदी कहानी है। उसके परिवारके जीवनकी वाहियात गन्दगीका वर्णन उसकी स्त्रीने जज-साहेबके इजलास पर सबके सामने किया है। हाईकोर्टमें अपील हुई थी, वहाँसे खारिज हो गई। वह दिनरात 'सीताराम, सीताराम' कहता रहता है और भजन गाता है।

वार्डरने जो मुझे 'आसामी' कहा सो मुझे अच्छा नहीं लगा। मुझको लगा कि इससे अधिक भद्र भाषा व्यवहार करना उसे उचित था। बचपनकी शिक्षा, दिक्षा, संस्कारने जो छाप मन पर डाली है, उसे एकदम मिटा देना

कठिन है। सच तो, वार्डरने तो ठीक ही कहा है। मुझे आसामी न कहेगा तो क्या कहेगा ? मैं तो आज जेलमें सबसे बड़ा आसामी हूं। जिसको फाँसी जल्द ही होगी, वही एक नम्बर सेलमें रहता है। एक नम्बर सेलके बाद ही एक दरवाजा है। सिर्फ फांसी देनेके समय इस दरवाजेको खोलकर आसामीको फांसीके तख्ते पर ले जाया जाता है। और समय दरवाजा बन्द रहता है।....उस चरम मूहूर्तके पहले एक बार दरवाजेको देखनेकी इच्छा होती है। उसके तालेमें क्या जग लग गया है ?

मेरे और मृत्युके बीच बस सिर्फ इसी दरवाजेका व्यवधान है। तो भी 'आसामी' कहनेसे मेरे मनमें क्षोभ हो रहा है। बमवाले बाबू लोगोंको भी तो सिपाहीजीने 'आसामी' कहा था, लेकिन वह मेरे कानोंको कड़वा नहीं लगा। मालूम होता है 'बमके मामलेका आसामी' वाली बातोंसे मेरा कान अभ्यस्त है। इन बातोंके साथ देशसेवकोंके स्वदेश-प्रेमकी अनेक स्मृतियाँ सम्बद्ध हैं—कम-से-कम मेरे मनमें। लेकिन फांसीके आसामीकी बात सुनते ही मेरे मनमें साधारण खूनी-डकैतकी बात उठती है। इन लोगोंका चित्र इन बातोंके साथ मेरे मनमें जमके बैठ गया है। मनमें होता है सिपाहीजीने आसामी शब्दका व्यवहार करके मुझे चोर-डकैतके साथ एक कर दिया। इसी लिए शायद यह बात मुझे नापसन्द है और इस पर आपत्ति है। अन्तरमें वेदनाकी अनुभूति जागती है—एक वार्डरकी नजरमें भी मैं पूज्य देशसेवक नहीं। मैं उससे तारीफकी उमीद करता हूं—बातसे न हो कम-से-कम हाव-भावसे ही सही, मेरे त्यागके लिए। इन लोगोंके लिए मैं जान दे रहा हूं, कहाँ तो ये लोग कृतज्ञ रहेंगे—सो नहीं, कृतज्ञताके बदले ये लोग देना जानते हैं सहानुभूति,—शहीदके प्रति सहानुभूति नहीं, जो अभागा बस

केवल कई एक घण्टा और इस लीलामयी पृथ्वीको भोग सकेगा, उसके प्रति करुणा।........

मौसीकी याद आई। नैहाटी स्टेशन पर मौसीको पच्छिमकी गाड़ी पर सवार कराने गया था। मौसीके सिरके बाल छोटे करके छाँटे हुए हैं, गेरुआ कपड़ा पहने हुए हैं, गलेमें तुलसीकी माला। अपना संसारसे कोई विशेष सम्बन्ध नहीं। मठ या आश्रममें रहती हैं। नवद्वीपसे बृन्दावन जा रही हैं। साथमें भारी—सोना मूंगका गट्ठर, डाव, मिठाईका कनस्तर, साफ किया हुआ तिल, गुरु भाई-बहनके लिए जा रहा है। इन चीजोंको गाड़ीमें चढ़ानेके लिए ही मैं गया था। मौसी गाड़ी पर सवार हुईं। सब चीजें कुलीके माथेसे उतारकर गाड़ी पर रक्खी। मौसीने पूछा—"सब चीजें चढ़ गईं तो।" मैंने एक दो करके गिनती करके कहा, हाँ कुल बाईस अदद माल चढ़े हैं। क्षण भरमें मौसीका हँसता हुआ चेहरा मेघकी तरह अन्धकारमय हो गया। क्रोधसे, दुःखसे मौसीकी आँखोंमें आँसू आ गए। मैं तो हक्का-बक्का रह गया। मैंने सोचा अपनी मूर्खतासे कोई अपराध कर बैठा हूं। पीछे मौसीने ही उसे साफ करके कह दिया—रेशमी कपड़ेसे ढंके उनके स्वर्गीय गुरुदेवके तैलचित्रको मैंने मालमें गिनती कर लिया। उस समय मौसीका यह मनोभाव मुझे अद्भुत मालूम पड़ा था;—और आज 'आसामी' वाली बात सुननेके बाद अपने मनकी चिन्ताधारा देखकर आश्चर्य होता है।....फाँसीके आसामीको आसामी न कहना ही आश्चर्यित होनेकी बात है।....

'फाँसीका तख्ता' इस शब्दको भी जैसे कितने ही शहीदोंकी स्मृतिकी सुगन्ध घेरे हुए है; किन्तु उसीको 'फाँसीकाठ' कहो, खूनी आसामीकी बात मनमें आयगी। और सबसे बड़ा आश्चर्य मनकी आँखोंसे देखता हूं, एक मृत

देह कसरत करनेकी लकड़ीसे (Horizontal bar) झूल रही है—असार पैर दोनों शून्यमें चक्कर खाकर हिल रहे हैं—धीरे एक ही प्रकारकी गतिसे,—उत्तर, उत्तर पूर्व, पूर्व, पूर्व दक्षिण, दक्षिण, दक्षिण, पश्चिम, दक्षिण, पूर्व दक्षिण, पूर्व, उत्तर-पूर्व, उत्तर,—किसी अंग्रेजी उपन्यासमें पढ़ा हुआ एक दृश्य।····

दस नम्बर सेलसे वार्डरने ड्यूटी शुरू की थी कहा उसने। उसका अर्थ है कि ग्यारहसे लेकर बीस नम्बर तक सेल खाली हैं।....जो सब कैदी जेलका नियम या सिलसिला तोड़ते हैं, उन सबको जेल-कर्मचारी साधारणतः सेलकी सजा देते हैं। वे लोग इन सेलोंमें रहते हैं। सेलमें अकेले कुछ दिन रहना पड़ेगा यही सजा है। कुछ दिन एकान्त वास भी कोई सजा है सो मैं समझ नहीं पाता हूं। वार्डके हंगामेसे निकलकर बीच-बीचमें एकान्तवास बहुत खराब लगनेकी बात नहीं है। इन सेलोंका इस्तेमाल भी खूब होता है। आज सब घर खाली कैसे हो गए। ऐसा तो कभी नहीं होता। मालूम होता है जान बूझकर उन लोगोंको यहांसे हटाया गया है,—शायद सुपरिण्टेण्डेण्टने उन लोगोंकी सजा माफ करनेका हुक्म दिया है। शायद वह चाहते हैं कि आज रातमें जितना कम आदमी कण्डेम्ड सेल्स (Condemned cells) में रहें उतना अच्छा है। हो सकता है आज यहां रहनेसे उनके मनपर कुछ प्रतिक्रिया हो। इसीलिए जिन लोगोंको इस जगहसे हटाया जा सकता है, उन-लोगोंको हटा दिया गया है। कर्त्ताकी इच्छासे ही कर्म। तेरह नम्बरके कुष्ठ-रोगी कैदी को भी क्या साधारण वार्डमें पहुँचाया गया है? एक-एक सुपरि-ण्टेण्डेण्टका एक एक किस्मका खयाल। मेजर फिलप्टसको देखा है, औरतकी तस्वीरवाली किताब वे कभी जेलमें 'पास' नहीं करते थे। सुना था वह मानसिक बीमारीके विशेषज्ञ थे। उनका मन था कि नारी-शरीरका चित्र

ालमें बहुत दिनों तक रहने वालोंके मनपर अनेक प्रकारकी प्रतिक्रिया पैदा ःर सकता है। उस बार हजारीबाग जेलमें इसीको लेकर रामखेलावन बाबूके ाथ 'साहब' की कैसी चखचख हुई थी! बेचारेकी इतने शौककी 'रोयल ़केडमी' की उस सालके चित्रोंवाली किताब, दस पन्द्रह पन्ने कैंचीसे यत्न-र्वक काट दिए जानेके बाद, उन्हें मिली। चित्रोंके पा जानेपर उनके मनपर या प्रतिक्रिया होती सो तो शायद हमलोग देख नहीं पाते;—लेकिन नहीं ाकर उस समय क्या प्रतिक्रिया हुई थी सो हम लोगोंने भी देखा था। फ़लपटस साहबने भी देखा था। फलतः उसे चौदह दिन तनहाईकी खजा हुई।

बड़ी गर्मी है! सेलमें हवा आनेजानेका रास्ता नहीं है। वैशाखका हीना बीत चुका, अभी शायद सेलके बाहर भी ऐसी ही गर्मी है। दरवाजेके जीदक, सहनपर सींखचा पकड़कर बैठा रहता हूं,—शायद बाहरकी ढक कुछ मिल जाय। घरकी बन्द, गुमी हवासे सिर कैसा भारी-भारी ालूम होता है। देखा है कि ऐसे वक्तमें, कुछ देर तक सीखचोंके भीतरसे ह-नाक जहाँ तक बाहर किया जा सकता है, वहाँ तक बाहर करके बाहरकी ़ली हवा लेनेसे, धीरे-धीरे सिरका भारीपन जाता रहता है।... पहले ाथेकी तकलीफ ज्यादा रहती थी। कुछ दिनोंसे नहानेके समय वार्डर ाड़ा सरसोंका तेल देता है। कहाँसे मक्खनके एक पुराने टीनमें थोड़ासा ़ जोगाड़ किया है। फाँसीके आसामीके प्रति यह अनुकम्पा,—पहले ाचा नहीं लगा। लेकिन जब उसने बिना कुछ कहे हाथमें ढाल दिया, ा इन्कार नहीं किया,—शायद सिर दर्दका खयाल करके—और यह जो पाहीजीने बिना कुछ कहे हाथमें तेल ढाल दिया, इसे देखकर। बोलनेमें ई संयम ये लोग जानते नहीं। दिनमें आठ घण्टा ड्यूटी और रातमें

दो घण्टा। इन लोगोंका जीवन बड़ा ही एकरस है। इस ड्यूटीके वक्त बातचीत करनेसे एक रसताकी नीरसता कुछ कम जाती है। उसने कोई बात कही, सिरपर लगानेके लिए सरसोंका तेल दिया,—इतने सरसोंके तेलका मोह उसने छोड़ दिया! आश्चर्य! ये लोग जेलसे जो कुछ पाते हैं चुरा लेते हैं। कपड़े साफ करनेका साबुन, चावलका भूसा, चिनियाबदाम, आलू, नारियलकी रस्सी, लोहेकी कांटी, लालटेनकी ठेपी वगैरह कोई भी चीज इनके हाथसे बच नहीं पाती है। ऊँचे दर्जेके राजबन्दियोंके चायके प्यालेसे लेकर गमछा तक, सब चीजें रातमें चुराई जाती हैं, जिस समय वार्डरोंको छोड़कर जेलके सभी लोग वार्डमें तालेसे बन्द रहते हैं। चोर सब ताला बन्द घरमें हैं, लेकिन तो भी चोरी बन्द नहीं होती है। ऐसे वार्डरकी इस उदारताने मुझे विह्वल कर दिया। और भी आश्चर्य हुआ था जब उस दिन उसने पागल कैदीसे मेरा कुर्त्ता और जँघिया साफ करा दिया था। नहा करके मैंने सूखा पायजामा पहन लिया, और उसने एक तरहसे जोर करके ही सेलमें घुसा दिया। मुझे एतराज करनेका भी वक्त उसने नहीं दिया। उसके बाद अपने हाफपैन्टके बेल्टको हटा करके पीछेकी तरफ कमरके नीचे हाथ घुसाकर एक बीड़ी निकाली। बीड़ी पागलको देकर अपनी ही दिया-सलाईसे जला दिया,—समझा, यह उसके कपड़े साफ करनेकी मजदूरी थी। कोई बात बिना कहे अगर कोई किसी कामको करदे तो ऐसी हालतमें उसको इन्कार करना बड़ा मुश्किल है। मनमें हुआ कि सिपाहीजी मेरे त्याग और देशभक्तिको समझता है। दूसरे सिपाहीकी तरह नहीं है। मन हलका मालूम पड़ा। उसके बादसे आज कई दिनोंसे देखता हूं दिनको उसी सिपाहीकी ड्यूटी रहती है। ..

····तेल नहीं लगाता है हमारे दलका चन्द्रिमा। कहता है तेल लगानेसे उसका माथा गरम हो जाता है। नाटा छोटा मोटा आदमी,—बड़ा सीधा, गुमसुम, कामसे कभी न थकनेवाला। दूसरेका कोई काम आजानेसे कृतार्थ हो जाता है। दो नम्बर वार्डमें दिनरात चर्खीकी तरह, एक जगहसे दूसरी जगह चक्कर लगाता रहता है। सिरमें घने रूखे घुंघराले बाल, बालोंमें तेल नहीं देता है। १९३२ सालमें मिलिकगञ्ज कांग्रेस आश्रममें "जपती उद्धार" सत्याग्रह के समय, कहते हैं कि उसके कान में साइकिल के पम्प से हवा भर दी गयी थी। उसी से वह सुन नहीं सकता है।·· नजरों के सामने देखता हूं—कल सवेरे चन्द्रिमाने दो नम्बर वार्ड में घर के भीतर शोक-सभा का आयोजन किया है। नीरव शोकसभा। रामभजन बाबू सभापति हैं। सभी सभापति के साथ एक मिनिट तक चुपचाप खड़े रहे—उसके बाद धीरे-धीरे बैठ गए। चन्द्रिमा खड़ा है। इधर उधर बिखरे हुए रूखे बालों को दोनों हाथ से कान के पास समेट लिया—सिंहके केशरकी तरह उसके बाल दीख पड़ते हैं। कैदीके दोनों हाथोंमें हथकड़ी देकर खड़ा करने पर जिस ढंगसे वह खड़ा होता है, उसी तरह खड़ा होकर उसने शुरू किया "मेरे गुलाम भाइयो! आज········" चारों ओरसे आवाज गूंजने लगी। सभी चन्द्रिमा को रुकने के लिए कहने लगे;—अभी जेल-कर्मचारियों के पास मिटिंग की खबर चली जायगी; अभी ही शायद लाठी चार्ज होगा; हम ही लोगों के भीतर कितने सी० आई० डी० हैं'; 'शोक-सभामें कहीं भाषण होता है; 'बहरा है; वह कुछ नहीं सुनेगा' और भी कितने किस्म की बातें। चन्द्रिमा लेकिन मेरे बारे में कहता ही जा रहा है—मेरे त्याग की बात—मेरी देश-भक्ति की बात—अपने साथ मेरी व्यक्तिगत मित्रता की बात—ऊँचे दर्जेके

वार्डमें अभी रहने वाले मेरे पिता "मास्टर साहेब" के प्रति समवेदनाकी बात—औरत किनामें कैद देवीजी, निल बाबूकी माँ, जिससे इस चोटको सहनेकी शक्ति पावें ; इसकी इच्छा ज्ञापन—इस "राष्ट्रीय परिवार" ने भारत के सामने कैसा उज्ज्वल दृष्टान्त रखा है—श्रोता लोगोंके कर्त्तव्य—और भी बात पर बात गंथना चला जा रहा है—अधखुली आँखोंके कोनेमें आँसू आ गए हैं।········सबने पकड़ कर चन्द्रिमाको बैठाया। निश्चय हुआ कि मृतात्माके प्रति श्रद्धाञ्जलि निवेदन करनेके लिए सब लोग दिन भर उपवास करें।···चन्द्रिमाको उपवास करनेसे बराबर एतराज रहा। उसके दलके लोग राजनीतिके क्षेत्रमें उपवासकी कोई आवश्यकता नहीं मानते हैं। चन्द्रिमा कई एक दुबिधामें पड़े श्रोताओंको समझा रहा है, यह उपवास पाप के प्रायश्चित्तके लिए नहीं है, शत्रुके हृदय परिवर्त्तनके लिए नहीं है, "निलू बाबूकी प्रतिष्ठाके ख्यालसे, देश प्रेमीके नाते हमें यह करना है।"

उसके बाद दो नम्बर वार्डमें पीपल गाछके नीचे कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टीके सदस्योंकी एक बैठक हो रही है। गोरेसिंह भाषण दे रहे हैं—'सभी चीजों को ( Objectivcly ) वस्तुदृष्टिसे देखना होगा।··· हरेक मार्क्सवादी का कर्त्तव्य है····और भी क्या क्या राष्ट्रीय सघर्षमें पार्टीके दान का उन्हें गर्व है ; लेकिन एक कामरेडके मरनेसे वे लोग शोकाकुल नहीं हैं। अथवा इससे पार्टीकी बहुत हानि हुई इस तरहका भाव वे नहीं दिखाते हैं।····कितने आदमी आयँगे जायँगे।—बहुत तरहके सामाजिक बन्धन और नहीं टूटने वाली पारिवारिक शृंखला तोड़ करके वे राजनीतिके क्षेत्रमें उतरे हैं,—सभी नहीं तो बहुत से। अपने आदर्शके लिए उनमेंसे कोई भी जान देनेमें हिचकता नहीं है। अपनी जानको वे लोग जैसे कीमती नहीं समझते

हैं,—दूसरेकी जानके लिए भी उसी तरह उनको कम ही दर्द है।'—कामरेड भोला पीछे बैठकर हँस रहा है।....राजबन्दियोंके बीच मैंने एक ताज्जुबकी बात देखी है। जिस राजनैतिक कैदीने देशके लिए अपने सभी स्वार्थ और भविष्यको तिलाञ्जलि दे दी हैं, जो स्वदेशके लिए हँसते हुए हमेशा मरनेके लिए तैयार रहता है, उसीको जेलमें, मामूली स्वार्थके लिए अपनी नीचताका परिचय देते हुए देखा है।....कामरेड भोला फाँसीकी सजासे बच गया है, लेकिन कई एक मुकदमा मिलाकर उसे कुल तेतीस सालकी सजा हुई है। बलाका फुर्तीबाज, हमेशा हँसमुख,—फाँसी की सजा होने पर भी मुखके कोनेमें निश्चय हँसी लिए रहता,—जिस काममें जितनी विपत्ति हो उसमें उसे उतना ही अधिक आनन्द आता है। इस बच्चेकी तरह सरल, एक निष्ठ स्वदेश प्रेमीमें सोचनेकी ताकत कम है, लेकिन हुकुम बजा लानेमें उसे कोई दुविधा नहीं होती है। इस कामरेडको भी जो दो नम्बर वार्डमें रहनेके समय दालकी लाल मिर्चको लेकर कलेश्वरप्रसादके साथ सिर फुड़ोवल करते देखा है।

राजबन्दियोंकी यह सब दुर्बलता रोज जेल-कर्मचारियोंकी नजरमें पड़ती है। देशके लोग राजबन्दियोंको जिस इज्जतकी नजरसे देखते हैं, जेलके कर्मचारी लोग कैसे उन्हें उस नजरसे देखेंगे? इसी लिए शायद देशके लोगों की प्रशंसासे ज्यादा उनकी प्रशंसाके लिए मैं इतना लालायित हूं।....जेलर एक दिन सुपरिण्टेण्डेण्टको समझा रहा था कि नौ और दस नम्बरके कैदी खूब अच्छे हैं "They never Grouse and Grumble" (वे कभी न शिकायत करते हैं न घुनघुनाते हैं)—यही उन लोगोंकी प्रशंसाका मापदण्ड है।........सुपरिटेण्डेण्ट जब उस दिन मुझसे मेरी जरूरतोंके बारेमें पूछता

था। तब जेलर बाबू एक पाकेट बुक खोलकर, फाउण्टेनपेन लेकर मैं क्या माँगता हूं उसे नोट करनेके लिए एकदम तैयार थे। भले आदमीको खूब छकाया।........

........सेलके बाहर जहाँ घड़ा है, ठीक उसी जगह उस दिन जेलर बाबू खड़े थे।

........घरके बाहर दरवाजेके सामने एक घड़ेमें पानी रहता है। लेकिन यह मुझको आत्महत्यासे बचानेके लिए बाहर नहीं रक्खा जाता है; यह पानी सेलके सभी कैदियोंके पीनेके लिए है—अवश्य नौ नम्बर और दस नम्बरको छोड़कर। जिसे प्यास लगती है वह सिपाहीजीको बुलाता है, नहीं तो सेलकी घण्टी बजाता है। सिपाहीजी अपनी ख्वाहिश और फुर्सतके मुताबिक उठके उसे पानी देता है। साधारणतः जो जिस वक्त पानी माँगता है, वह उसी वक्त नहीं पाता। बहुतोंकी खुशामद चिरौटी जब एक साथ होने लगती है, तब सिपाहीजी एक दफा उठकर घड़ेसे पानी ढाल देता है। एक नम्बर सेलकी खास खातिर है, इसलिए मेरे दरवाजेके सामने घड़ा रक्खा रहता है।—घड़ेकी नली सींखचोंके भीतर खींचकर गिलासमें पानी ढाल लिया। जहाँ तक हो सका पानी सींखचोंके बाहर गिरानेकी कोशिश करते हुए, मुँह और आँख पर पानी दिया। मुँह आँखसे जैसे आग निकल रही थी। सेलमें नाली नहीं है। इसी दरवाजेके नीचे होकर ही पानी बाहर जाता है। मुँह आँख धोनेके समय पानीका ज्यादा हिस्सा भीतर ही गिरा। कुल्ली करके बाहर फेंका,—दीवाल और सहनकी जोड़परके छोटे पौधे पर। इस पौधे पर रोज कुल्ली फेंक कर मैं इसे सींचता हूं। रोज जब कुल्ली करता हूं तो कितनी दूर तक पानी फेंका जा सकता है, इसकी परीक्षा

करता हूं। इसके बारेमें मोटा-मोटी अन्दाज हो गया है। खड़ा होकर बैठकर मुँहकी शक्ल बदलकर बहुत तरहसे अपने आपसे ही होड़ लगाता हूं—पहलेकी रेकर्ड तोड़नेकी कोशिश करता हूं। दोपहरको जब बाहर वाला सिमेन्ट का सहन तप कर आग सा हो जाता है, तब कुल्ली करके उसपर पानी फेंकता हूं। उसके बाद एक दो करके गिनता रहता हूं कि कितनी देरमें पानी बिल्कुल सूख जाता है। किस किस्म का पौधा है, नहीं जानता। ताँबे के रंग का पत्ता है। पत्ते देखनेमें नीमके पत्तेकी तरह हैं। लालटेन नजदीक होने से पौधा साफ नजर आता है। एक किस्म का छोटा पौधा है, दीवाल को जकड़कर पकड़े है। लालटेनकी रोशनीमें छोटे-छोटे पीले फूल दीख नहीं पड़ते हैं। बचने की कितनी आकांक्षा है पौधे की! ईंट और सिमेन्टके बीच सँकरी दारार। उसीमेंसे यह जीवनीशक्ति खींचता है, मेरे नहीं रहने पर भी खींचता रहेगा। मेरी कुल्ली के पानी की उमीद वह नहीं रखता है। पौधे की ओर देखने से ही मनमें होता है कि उसकी डण्टी तोड़ने से सुफेद, गाढ़ा दूध के समान रस निकलेगा। खेत पापड़ा का भी, जिसको हम लोग 'खीरुई' कहते हैं, ऐसा ही रस होता है।····उसीको मेरी गर्दन के नीचे एक फोड़े पर चाची ने लगा दिया था,—फोड़ा फूटने के लिए। बसके बाद से दुर्गा दीदी के खेलने के घर के लिए एक पुराने मिट्टी के दीये में नीलू और मैंने बहुत दिन तक दूध जमा किया है।····

···दुर्गा दीदी की छोटी बहन थी टेपी, अधमैला फ्राक पहने, माथेमें चोटी गुथी हुई। नीलू और मैं उसे आश्रमके नजदीक गैन्जेस-दार्जिलिंग रोड पर रबर के पेड़ के नीचे ले गए थे, यह दिखाने के लिए कि किस तरह रबर का रस जमाके रबर बनाया जाता है। गाछ पर चढ़कर छुरीसे एक

डालके ऊपरकी छालको मैंने काट दिया। टप् टप् करके दूधके समान रस गिरने लगा। नीलूने टेपीको पकड़ कर उसके नीचे खड़ा कर दिया। बोला "ऊपर मत ताको, खबरदार! तुम्हारे माथे पर इरेजर (मिटाने को रबर) तैयार कर देता हूं।" उसके बाद टेपी बेचारी कितना रोई। रबर का रस जम करके उसके सिर के बालों में कसके जकड़ गया। उस दिन हम दोनों भाइयोंने माँ से खूब मार खाई थी। भाग्यसे पिताजी 'देहात' चले गए थे। उसके महीने दिन के बाद टेपी मर गई। नीलू को और मुझे कितनी चिन्ता हुई! कितना पश्चात्ताप! आश्रम के सीसम गाछ के नीचे बैठकर हम लोगोंने तै किया था कि रबरका रस माथेपर पड़नेसे ही उसको डिप्‌थीरिया हो गया। नीलू मुझसे पहले ही खवर ले आया था, कार्तिक डाक्टरने टेपी का गला काट के उससे रबर का रस निकाला था।····दुर्गा दीदी के घर के सब बच्चों को माँ उस दिन हमलोगों के आश्रम वाले घरमें ले आई थी। टेपी का भाई भोंदा इस साल वकील हुआ है, उस वक्त वह कितना छोटा था। माँ के पास सोया था। रातमें घर जानेके लिये जिद्द धर कर कितना रोया था!····

दरवाजे के सामने बैठने का उपाय नहीं है, पानी से भीग गया है। नीलीधारी वाले पायजामेसे पानीको पोंछ लिया।

पायजामा मैला होनेसे भी अब कोई हानि नहीं। कल तो और उसको पहनना नहीं है। नौ साल पहले भूकम्पके समय सहनमें इसी जगह गड्ढा होगया है। आजतक उसी हालतमें रहकर पी० डब्लू० डी०की कर्मनिष्ठाकी साक्षी दे रहा है। एक नम्बर सेलमें रहनेवालेके लिए इतना सोच विचार। फाँसीके तख्तेके सबसे नजदीक यह घर है, और जिस आसामीकी फाँसीका

दिन सबसे करीब है उसीका दावा इस घर पर है। जेलके साढ़े चार हजार बाशिन्दोंमें सबसे ज्यादा अधिकार मेरा ही इस घर पर है।....पी० डब्लू डी०के आदमियोंने ठीक ही सोचा है—भींगे हुए सहनपर बैठनेसे जितने दिनमें बातरोग धरेगा, उतने दिन तक इस नम्बरके बाशिन्दाको रहना नहीं पड़ेगा। और अगर बिल्लीके भागसे छींका टूटकर उसकी दयाकी भिक्षा (mercy petition) मन्जूर हो जाय तो मामूली बीमारीकी क्या गिनती? लेकिन आजके दिन भी मनमें होता है कि इस भीगी हुई जमीनपर बैठनेसे बीमार हो सकता हूं। एक कहानी पढ़ी थी;—एक आदमी आत्महत्या करनेके लिए तैयार था। जहरकी शीशी मुंहके पास ले गया है। अचानक उसका मित्र बाहरसे यह देखकर उसकी ओर पिस्तौलका निशाना करके बोला,— "कहता हूं गिलास फेंक दो, नहीं तो अभी गोली मार दूंगा।" हाथसे गिलास गिर पड़ा। मनकी यह दशा कौन समझ सकता है?

हो सकता है दरवाजेके सामनेका यह गड्ढा भूकम्पके बाद मरम्मतके वक्त नजर नहीं आया हो। इन्जीनियरका विशेष दोष नहीं है। यह जल्दी नजर आता भी नहीं है। आसपासमें पानी गिरनेसे सब पानी इसी जगह जमा हो जाता है—तब मालूम पड़ता है कि इस जगह इतना गड्ढा है।.... उस साल भूकम्पके समय कैसा काण्ड होगया? १९३४ सालके भूकम्पकी बात कहता हूं।—पटना कैम्प जेलसे उत्तर बिहारके सभी राजबन्दियोंको गवर्नमेंटने छोड़ दिया—भूकम्प पीड़ित लोगोंकी सेवाके लिए। नीलू १९३२ के अन्तमें छोड़ा गया था। पिताजी और मां दोनों जेलमें। नीलू चाचीके घर पर रह गया। हम लोग बी० एन० डब्लू० गाड़ीसे आ रहे थे। हरेक स्टेशनपर भूकम्पकी ध्वंसलीलाके चिन्ह मौजूद थे। पसराहा या ऐसे ही किसी

स्टेशनके पास एक दिन बैठे रहना पड़ा। पुल टूट गया था। नावसे पार होने बन्दोबस्त हुआ है। गवर्नमेंटकी ओरसे तीन आना खुराकी मिली थी उसी नदीके किनारेवाले बाजारमें दहीवालेके साथ ठीका हुआ कि चार पैसे जो जितना दही खा सके। नगिन्दर सिंह करीब चार पाँच सेर खा गया—विना मीठाके लालरगका महुआ दही। हाथमें पैसा नहीं। काढ़ागोला रो स्टेशन पूर्णियाँ तक पैदल जाना पड़ेगा। गैञ्जेस-दार्जलिंगरोडपर कैसी ब बड़ी दरारें पड़ी थीं। हरदाका पुल टूट गया था। हरदा बाजारके पार जाकर पाँवने जवाब देदिया। दुबेजी कांग्रेसके कार्यकर्त्ता। उसकी दुकान पहुँचनेपर उसकी स्त्री दौड़कर अन्दर चली गई, थोड़ी देर बाद ही "परनाम" करते-करते बाहर आई। देखा मिलकी साड़ी बदलकर हरी किनारीकी खद्दरकी साड़ी पहनकर आई है। इतनी उम्र होनेपर भी शरीरका रग सुन्दर —सीधी देह, सुग्गेकी चोंचकी तरह तिरछी नाक—सबसे बेशी आँख महवे आत्म-मर्यादाके भावने बूढ़ीके रूपको और भी सुन्दर कर दिया है।....दुबेज और दुबेजीकी स्त्रीने कितनी खातिर की! दूधमें चूड़ा भिंगोकर उसी चूड़ामें दही मिलाकर हमलोगोंने रंग कौतुकके साथ तृप्त होकर खाया। कौतुकके लक्ष्य दुबेजी थे। सभी उसकी भोजपुरी बोलीकी नकल करके बोलनेकी कोशिश करते हैं। दुबेजी 'पहुँचने' को 'चहुँचना' कहते हैं, इसपर कितनी हँसी हुई! बूढ़ा और बूढ़ी भी इस हँसीमें साथ देते रहे। आगके 'धूरे' के पास बहुत रात तक दुबेइनके साथ गप्पें चलती रहीं,—माँकी बात,—इसबार शादी करनी होगी—और भी क्या क्या, याद नहीं आती। दुबेइन "निमक सत्याग्रह" के समय नमक तैयार करके जेल गई थी। लेकिन मालूम नहीं क्यों पुलिसने दुबेजीको नहीं पकड़ा, शायद बुढ़ापेकी वजहसे। उसके बादसे

दुबेइन अपनेको दुबेसे बढ़कर समझती है—दुबेजीने मेरे पास इसकी नालिश की। ये स्वामी-स्त्री दोनों बड़े ही सरल स्वभावके हैं।

अपनी जो जमीन-जायदाद थी, उन्होंने कांग्रेसको दान कर दी। रात में सोया हूं। उन्होंने सोचा हम लोग सो गए हैं। जिसमें हम लोगोंके सोने में तकलीफ न हो, इसलिए हमलोगों के कम्बल के ऊपर और एक-एक कम्बल ओढ़ा दिया। उसके बाद इस जगहसे रवाना होनेके पहले स्थानीय प्राइमरी स्कूल की ओर मुझे एकान्तमें ले जाकर बोला, "हमलोगों का अनुरोध रखना होगा। हमलोगों के बाल-बच्चे नहीं हैं, तुमको कितने दिनों से, जबकि तुम बहुत बच्चे थे, तभी से देख रहा हूं। मास्टर साहब का लड़का तो हमलोगों का भी लड़का है। हमलोग गरीब आदमी हैं और तुम लोग ठहरे, बंगाली—निलू बाबू। लेकिन हम लोगों के एक काम की जवाबदेही तुमको लेनी ही पड़ेगी। हमलोगों की जो कई-एक बीघा जमीन है, उसकी आमदनी मैं कांग्रेस के काम में ही खर्च करता हूं। इनकी लिखापढ़ी कर देना चाहता हूं। हमलोगों के मर जाने पर इन्हें तुम महात्माजी के काममें लगाना। हमलोग और कितने दिन बचेंगे ही?"··· उन लोगोंको मैंने बात दी थी। दुबेइन शायद अभी भी उसी रंगीन कागज के रथ के बीच बैठे हुए रामजी की 'मूरत' के सामने बैठकर दीये की रोशनी में तकली से अण्डी का सूता कात रही है।····

दूसरे दिन दोपहरको हरदाबाजारसे पूर्णियां पहुँचा। 'गांधी आश्रम' को सरकारने जप्त कर लिया है। तो भी उसी ओर चला।····दूरसे देखता हूं, जिला कांग्रेस आफिस घरके पास सीसम गाछ हल्के पीले रंगके विगनोनिया फूलों से भर गया है। मैंने एकवार लत्ती को उस गाछ पर चढ़ा दिया था।

पहले झँडे के खम्भे पर राष्ट्रीय झंडा बहुत दूर से दीख पड़ता था। अभी वह नहीं है। लेकिन चमकते हुए उजले बादलों की पृष्ठभूमि पर विजनोनिया फूलोंसे लदा सीसम गाछ राष्ट्रीय झंडेका काम कर रहा है—उजला, जाफरानी हरा; तीनों रंग।··· आश्रमके घर फूसके हैं। हम लोगोंके घरका वेढ़ा टूट गया है। पानीके कल का ऊपरी हिस्सा नहीं है। एस. डी. ओ. साहब के मुहर किये हुए दरवाजे के ताले का नमोनिशान नहीं है। चौकी और बड़ी आलमारी छोड़कर बाकी कोई चीज घरमें नहीं है। छोटी मोटी सभी चीजें जिसने पाई, ले गया है। रसोईघरके दरवाजेकी किवाड़ीके दोनों पल्लोंको भी कोई खोल कर ले गया है। महात्माजीकी तस्वीर भी चोरी चली गई है। सँझली दीदीका तैयार किया हुआ, फ्रेममें बँधाया हुआ, रुईका उल्लू नहीं देखा। सहदेवकी बहन सरस्वतीका बचपनमें तैयार किए हुए कार्पेट पर जो ( Untouchability is a sin ) बुना हुआ था—Sin का N लिखा हुआ था Z की तरह—सो भी नहीं है। मेरी लिखी हुई एक कविता जिसे नीलूने कुट पर लगा करके टाँग दिया था, सो रह गया है। लिखावट धुंधली पड़ गई है। और कुट पर लगी हुई मेरी ही खींची हुई रवि बाबूकी तस्वीरको भी देखा कि किसीने लेने लायक चीज नहीं समझी। शायद फ्रेममें बँधी नहीं थी, इस लिए छोड़ गया है। फूलके पौधे चुरा लिए गए हैं। सिर्फ गुलाबी और सफेद फूलोंसे अँगना भर गया है, मालूम होता है उसके पौधे गाय-बकरी नहीं खाती। बीच-बीचमें दो एक भरेण्डा के पौधे सिर ऊँचा किए हुए; ओछे, नगण्य भिनकाको नीचा दिखानेके लिए। रेशमके कीड़े का घर एकदम गिर गया है। बैलगाड़ीके दोनों पहिए कोई खोल कर ले गया है। तेलके कोल्हू वाला घर खड़ा है। लेकिन घरके

अन्दर एक किस्मके बनैले पौधे भरे हैं, जो देखनेमें अरहरके पौधोंकी तरह हैं ( चकोड़े )। अन्दर जानेका उपाय नहीं है। आश्रमके पुस्तकालयकी एक भी किताब नहीं है। बड़े कमरेमें देखा कूड़ेकी ढेर पड़ी—बहुतसी बकरियाँ और गायें रोज बाँधनेके चिन्ह वहाँ मौजूद हैं। देखता हूं पड़ोसी लोगों की कृपा इस घर पर कांग्रेसके इस बुरे दिनमें भी रही है।····

मन उदास हो गया। आश्रमसे बाहर होकर चाचीके घरके गेटमें घुसा ; यह पिताजीके अन्तरङ्ग मित्रका घर है। घरके ठीक सामनेमें एक तम्बू है। तम्बूके दरवाजे पर एक सफेद रंगकी बकरी मुंह उठा करके एकाग्र चित्तसे एक ऊनी पत्तीका कसींदा कढ़ा हुआ मेजपोश चबा रही है। ननी दीदीकी लड़की बुढ़िया और उसकी खेलकी साथिनें मैदानमें जो बड़ी सी दरार हो गई है, उसके बीच नजर गड़ाकर पट होकर लेटी हुई हैं। मुझे देखकर सभी दौड़कर आईं। मैंने पूछा "वहां क्या कर रही थी ?" बोली छोटे मांमा बोलते हैं कि दरारके नीचेसे अमेरिका दीख पड़ता है।····बाहरसे चिल्लाती हुई बुढ़िया घरमें घुसी—"ननी देखो, कौन आया है ?" चाची और सँझली दीदी 'हविष्य' घरमें खानेके लिए बैठी हैं। "सँझली दीदी कहाँ है ?" कहकर घुसते ही दोनों खाना छोड़कर बाहर आईं। चाचीका दाहिना हाथ जूठा है। बाएँ हाथसे उन्होंने मुझे पास खींच लिया। नीलू देखता हूं घरमें ही है। आंखें मलते-मलते बाहर आया। "चाची का खाना बर्बाद कर दिया—अब तो चाचीकी पत्तल पर की उन सब चीजों को निगलो"—कहकर बड़े जोरोंसे हँसने लगा। सँझली दीदी बोली—'देखा, देखा, हम लोगोंका खाना तो हो ही गया था।' सँझली दीदीके चेहरे पर झूठे क्रोधके चिन्ह थे। चाची नीलूको डाँटती हुई बोली "तुम फिर उस टूटे हुए घरमें सोए थे! घरसे

दबके मरोगे क्या ? तुमसे मैं भर पाई। और मैं तुम्हें यहाँ नहीं रक्खूगी। भेज दूंगी मामाके यहाँ कैसा डकैत है। कल रातमें भी उसी टूटे फूटे घरमें सोया था। उसके बाद कितनी बातें, कितनी गप्पें ! नीलूकी बात सच हो गई। उसी पतेमें मुझे खाना पड़ा। हम लोग कभी चाचीके घरको अपना घर छोड़कर कुछ दूसरा नहीं समझ सकते हैं। चाचीका घर बराबर हम लोगों का अपना घर ही सा रहा है।

चाचीकी याद आ रही है—सामनेके दो बड़े-बड़े दांत मुंहसे बाहर आ गए हैं। ललाट पर दोनों भवोंके बीच एक नीले गोदनेका दाग। सिरपर कच्चे-पक्के बाल, छोटासा मुह। मुहपर हँसी। और हँसनेसे मालूम होता है सामनेके नीचेके दो दांत गिर गए हैं। मटके का कपड़ा पहने हुई है। चाचीके चेहरेपर, बोलचालमें मातृत्वका ऐसा भाव है जो साधारणतया देखा नहीं जा सकता है। रफायल (Raphael) की मातृमूर्ति बड़ी गम्भीर है ; कैसी एक निर्जीवताका भाव ; सारे शरीरमें सहज लय और स्वच्छन्दगतिका अभाव ; अस्पताल की नर्सों की मेट्रन की तरह कृत्रिम गम्भीरता भरी। किन्तु चाची जैसे देशी चितेरेकी खिंची हुई यशोमती की तस्वीर ;—वाक्य चिक्य नहीं, किन्तु दिलपर असर करने वाली। मेरी माँ का जो भाव मेरे और निलूके प्रति है, वही भाव चाचीका मुहल्लेके सब लड़के-लड़कियोंके प्रति है। सबके लिए यहांका दरवाजा खुला है। लेकिन मुझे गर्व है कि मेरा स्थान उन सबोंसे ऊँचा है। निलू तो जब तब यह कहकर चाचीको चिढ़ाता है कि वह मेरा पक्षपात करती हैं, और सभीको नहीं देकर मेरे लिए खानेकी चीजें छिपाकर रख देती हैं। मैं जिस समय जेलमें था, चाची एक बार बहुत बीमार पड़ी। उस समय लोग कहते हैं कि अपनी सब सम्पत्ति मुझे दे

नेकी ख्वाहिश उन्होंने जाहिर की थी। उस समय उनकी सम्पत्तिमें थे
; पुराने तकिएके खोलमें छब्बीस रुपये और एक कलसी पुराना घी—हरेक
ोने कुछ-कुछ जमा किया हुआ। निलू बढ़ा-चढ़ाके ये सब गप्पें करता है,
र जब नब चाचीको इसीके लिए परेशान कर देता है।····

····एक बार चाचीके भाईकी पोतीकी शादीमें चाचीको उनके पीहरमें
चानेके लिए ले गया था। पवना जिला का एक छोटा गाँव ; यमुना नदीके
गारे। चाचीके साथ उन लोगोंके गाँवको देखनेके लिए निकला था। उनके
ाराज दादाका डीह, गाँवके जमीन्दारका टूटा हुआ मन्दिर ; भैरव भुंइया—
उके नामसे सूखे गाछमें फल लगते थे ; बाघ, बकरी एक घाटमें पानी पीते
; उन लोगोंका पुराना डीह ; और भी बहुत जगहें देखीं। चाचीसे इन
जगहोंके बारेमें बचपनसे ही इतनी बातें सुनी थीं कि कुछ भी जैसे नया
ीं लगता था। उसके बाद जमायदिघीकी धारके बाँधपरसे जा रहा हूं,—
चीने दिखलाया, यहाँपर नवद्वीप डाक्टर साइकिलसे गिर गया था। "उस
; इस जिलेमें एक ही साइकिल थी। साइकिल देखनेके लिए मुहल्ले के
लोग सब यहाँ आकर खड़े हो गए—बेचारा हड़बड़ा कर दिघीके पानीमें
: पड़ा, एकदम साइकिल वाइकिल लिए हुए!" मैंने कहा, "चाची, सो
तुमने फेरीमेन्टके रास्तेपर कहा था ( ठीक शब्द है Ferry fund )।'
रे! इसी बाँधपरसे होकरके तो फेरीमेन्टका रास्ता है। और देख,
एक बात कहती हूं, बैठ यहाँ पर। तू जो मुझे चाची-चाची कहके पुकारता
सो मुझे जरा भी अच्छा नहीं लगता है। मुझे माँ नहीं कह सकता?"
ैसे हक्काबक्का रह गया। उसके मुंहकी ओर देखा कि वह आग्रहके
से, जिज्ञासु नेत्रोंसे मेरे उत्तरकी प्रतीक्षामें मेरी ओर देख रही है।

प्रगाढ़ स्नेहसे भरे मातृत्वकी झलक चेहरे पर छाई है, प्रश्न ऐसा अप्रत्याशित था कि मेरे मुहसे जवाब निकलनेमें काफी देर हो गई। सोच विचारके बोला, "जो माँ है, सो चाची भी है। दोनों तो एक ही हैं।" देखा, मेरे जवाब से वह कुछ अजीब सी खिन्न हो गई। अपराधीके स्वरमें बोली, 'तेरी माँ है ; तुझसे यह अनुरोध करना मेरा अन्याय है।' उसकी नजर दिघीके उस पार थी, लेकिन किसी खास चीज पर नहीं........।

उस दिनसे किसीके नहीं रहने पर चाचीको माँ कहके पुकारता हूं। सभी यह बात जानते हैं। लेकिन बचपनसे 'चाची' कहकर पुकारनेका अभ्यस्त होनेके कारण सबके सामने माँ कहकर पुकारनेमें, कैसा एक सकोच होता है। नवद्वीप डाक्टरके साइकिलसे गिरनेकी जगह दिखानेके समय क्यों चाचीको अचानक मेरी माँ बननेकी इच्छा हुई, सो आज भी समझ नहीं सका हूं।........

........इसके कुछ दिन बादकी बात है। जिस बातका डर था वही हुई। मेरा चाचीको 'माँ' कहना मेरी माँ को पसन्द नहीं आया। निलू और मैं रसोई घरके ओसारे पर खानेके लिए बैठे हैं। माँ परोस रही हैं। परोस करके माँ हम लोगोंके साथ ही खाने बैठी। मैंने अचानक कह दिया, "माँ, जानती हो, चाची पिसा हुआ तिल देकर एक किस्मका ऐसा बढ़िया झिंगेका झोल बनाती है?" "तो वहीं खा सकते हो। यहाँ और खानेकी क्या जरूरत है?" किस बातका क्या जवाब! माँ स्वभावतः मीठी बात बोलती है। उसकी बातोंको इस आकस्मिक झंकारने मुझे अवाक् कर दिया। निलू अचानक बोल उठा,—"आज माँसे कहा है न कि तुम चाचीको 'माँ' कहते हो, इसीसे माँ गुस्सा हो गई है। देखा नहीं 'तुम' कहती हैं।"

सचमुच माँ अधिक क्रोध करने पर हम लोगोंको 'तू' नहीं कहती है। ..और निलू भी ऐसा बेवकूफ है; माँसे छिपाके यह खबर मुझे दे देता। देखा माँकी दोनों आखोंसे आँसू गिर रहे हैं; उसे छिपानेके लिए वह रसोई-घरमें घुस गई। मेरे मनमें होने लगा कि एक भीषण अपराध कर बैठा हूं।......

...माँ जिस वार्डमें हैं, उसका नाम है 'औरत किता'। आज और सो नहीं सकेंगी। माँ शायद मशहरी फेंक कर जप करने बैठी हैं, मन खराब होनेसे माँ जप करने बैठती हैं। जब निलू देवलीमें पिछले साल शुरूमें बीमार पड़ा था, उस समयकी बात कहता हूं। अचानक खबर आई कि अजमेर अस्पतालमें निलूका अपेन्डिसाइटिस् आपरेशन हुआ है। उस दिन सारी रात माँ पूजाघरमें रहीं। रातमें लगभग ग्यारह बजे सिर्फ एक दफा मेरे घरमें आकर आइनाके नजदीक और टांड पर शीशियोंके बीच कुछ ढूँढ़ने लगीं। मेरे मनमें हुआ कि माँ शायद निलूकी बीमारीके बारेमें मेरे साथ कुछ बात करना चाहती है। किन्तु साहस नहीं होता है, कहीं मैं बीमारीके कठिन होने या जानके डरके बारेमें कुछ कह न दूँ। मालूम होता है जप करके मनमें पूरा बल नहीं मिला। माँने सोचा मेरी नजर किताब पर गड़ी है—उसे मैं देख नहीं रहा हूं। देखा अत्यन्त भक्तिभावसे दीवाल पर टगी गाँधीजीकी तस्वीरको उसने प्रणाम किया। अलगनी पर टगे अपने सहेजे हुए कपड़ोंको फिरसे सहेजने लगी। तब मैंने माँसे कहा, "अपेन्डिसाइटिस् आपरेशन बहुत साधारण बात है। सभीका ठीक हो जाता है। आजकल विलायतमें स्वस्थ लोग भी यह आपरेशन करा लेते हैं।" माँने ऐसा भाव दिखलाया जैसे इसके बारेमें उसे कोई चिन्ता या उत्सुकता नहीं है। "देवलीसे अजमेर कितनी दूर है रे?"....फिर सारी रात जपमें ही कटी।......

गुमटी परसे एक वार्डर लगातार चिल्ला उठा—"बोलोरे नया गोल ; बोलोरे जुमलिन ( Juvenile Ward )।" रात अभी भी कुछ ज्यादा नहीं हुई। किन्तु इसी बीच अधिकतर वार्डके पहरेवाले 'पहरा' रस्म अदा करनेके लिए जवाब देने लगे। वार्डर गानेकी तरह सुरमें बोलता है 'बोलोरे…'। "बोलोरे पाँच नम्बर" कहनेमें, मुझे सोलह गिननेमें जितना समय लगा, उतना समय लग गया। एक वार्डर मुझे एक दिन समझा रहा था, वे लोग जो गानेके सुरमें पुकारते हैं, उससे तकलीफ कम होती है, और आवाज फटनेकी सम्भावना नहीं रहती है। प्रत्येक वार्डमें चार-चार बड़े-बड़े हाल हैं—दो ऊपर, दो नीचे। जेलकी भाषामें इन हालोंका नाम है "खटाल"! पाँच नम्बर वार्डके पहले हालसे जवाब आया—फटी हुई झन्नाती आवाजमें, "पाँच नम्बर, पहला खटाल—जमा एकसौ सन्तावन—आसामी, ताला, बत्ती ठीक है।" उस आदमीकी आवाज सुन कर ही मालूम होता है कि उसके चेहरे पर कड़ी-कड़ी कच्ची-पक्की मूछें हैं ; बड़ा कर्त्तव्यनिष्ठ ; उसके माथे पर नीली टोपी है, यानी वह 'पहरा' है। महीनेमें चार आना करके दरमाहा उसके नामसे सरकार बहादुरकी तरफसे जमा होता है। उसके बदले रातमें दो घण्टे जाग करके यह पहरा देनेका काम करता है। वह सरकारका 'निमक' खाता है, काममें ढिलाई क्यों करेगा ? पाँच नम्बरके और तीन खटालसे जो जवाब आया सो इतना साफ नहीं था। उन्होंने सब बातें कहीं भी नहीं। सिर्फ एक हो-ओ-ओ-ओ…… है की तरह आवाज मालूम पड़ी ; नींदसे बेखबर रातमें गाँवके चौकीदारकी पुकारकी तरह। गानेके सुरमें बोलनेकी कोशिश नहीं—सिर्फ रस्म अदा करनेके लिए बोला। ये लोग अवश्य ही सफेद टोपीवाले 'मेट' यानी ये लोग, पुराने कैदी हैं।

महीनेमें आठ आना करके दरमाहा पाते हैं ठीक, लेकिन उन्होंने जेलमें बहुत कुछ देखा सुना है। वे लोग जानते हैं कि इस कामको अच्छी तरह करने पर उनका "मार्का" (remission) नहीं निर्भर करता है। और जानते हैं कि हेड जमादारको कैसे संतुष्ट रखा जा सकता है। एक मेट निहायत मामूली आदमी नहीं है। उसके अधीन इतने कैदी हैं। उन लोगोंको शासनमें रखनेके लिए जेलके कर्मचारियोंके प्रति, जेलके नियम-कानूनके प्रति कुछ लापर्वाही दिखालानी ही पड़ेगी।....

"बोलोरे नया गोल" ( Segregation Ward )। जब तक "बोलोरे" बोलता था, मैं कान लगाकर सुनता था कि पांच नम्बरके बाद छः नम्बर बोलेगा कि नया गोल बोलेगा। उसीसे समझा जायगा कि वार्डर नया है या पुराना। छः नम्बरका और एक नाम है 'दामूली किता'। जिन्हें आजीवन कारावासकी सजा हुई है, वे ही इस वार्डमें रहते हैं। ये कैदी दूसरे वार्डके कैदियोंको "कद्दू चोर" कहकर मजाक करते हैं और लापरवाहीसे पेश आते हैं। वे जैसे कद्दूचोरी करके जेलमें आये हैं। वार्डर सब भी इन दामूलियों ( Lifer ) से जरा अदब करते हैं और पुराने वार्डरोंसे इनका एक किस्मका बन्दोबस्त है। उन लोगोंके गुमटी पर ड्यूटी पर रहनेसे ये लोग सारी रात चैनसे सोनें पाते हैं। मेट पहरेके चिल्लानेसे और गिनतीसे ये लोग छुट्टी पा जाते हैं। दिन भर बेचारे लोग जेलकी फैक्टरी में काम करते हैं। थोड़ीसी चैनकी नींदका मौका नहीं मिलनेसे ये लोग सारी जिन्दगी ऐसी हड्डी तोड़ खटनी कैसे खट सकेंगे?........

नया वार्डर होनेसे निश्चय 'बालोरे छ नम्बर' कहके पुकारता। दो नम्बर वार्डसे छः नम्बर वार्डकी तरफ देखनेसे मालूम पड़ता है, जैसे एक

बड़े जंकशनके प्लैट फार्म पर खड़े हैं। यह वार्ड एक राजा बहादुर का दान है। दानका पात्र, वस्तु और उद्देश्य चुननेकी प्रतिभा, राजाबहादुरकी, असाधारण कहनी पड़ेगी। जो हो, इस दानसे राजा बहादुरकी कोई गुप्त आकांक्षा सिद्ध हुई कि नहीं मालूम नहीं, लेकिन जो अभागे आजीवन कारावास काटेंगे, वे अवश्य ही उन्हें आन्तरिक धन्यवाद देंगे। दामूली लोग आम तौरसे आदमी अच्छे होते हैं। पक्के चोरकी छुछियापनी या नीचता उनमें नहीं है। जेलको ही घर बना लिया है। किसीने वार्डके आँगनमें बड़ी मिहनतसे तुलसीका पौधा लगाया है; किसीने थोड़ी-सी जगह साफ करके गोबरसे लीप करके बैठनेकी जगह बना ली है। बहुतोंके अपने लाल मिर्चके पौधे और पुदीने हैं। इन पौधों पर उनका कैसा मोह है! स्नेह, प्रेम, वात्सल्यकी स्वाभाविक प्रेरणा, इन्होंने इन्हीं पौधों पर ढाल दी है।........

......हजारीबाग जेलसे छोड़े जानेके दिन उस फिरङ्गी विलियम साहबकी वह मार्मिक रुलाई! चौदह बर्ष उसने जेलमें बिताये थे। उसका लगाया हुआ गुलाब जामुनका पेड़, पाउडरके पफ् की तरहके फूलोंसे भर गया है। पीपलके पेड़के नीचे उसने बैठनेके लिये ऊँची 'वेदी' बनवा ली थी। उसको लेकर सुपरिण्डेण्ट और पी० डब्ल्यू० डी० के इञ्जिनियरके बीच बड़ी खींचातानी हुई थी—सब चीजोंकी तरफ देखता था और फूट-फूटकर रोता था। एक बयस्क आदमीको इस तरह रोते हुए बहुत कम देखा है। घर जानेकी और अपने लोगोंको देखनेकी खुशीसे इन सब पौधोंको पालने और जेलके हितमित्रोंको छोड़ कर जानेका दुःख उसे बहुत ज्यादा था।......

एक ही तरहसे बहुत देर तक बैठनेसे दाहिना पांव सुन्नकी तरह हो गया है। कई बार घरमें टहलता रहा, पाँवकी झुनझुनी मिटानेके लिये दरवाजेके सींखचे पकड़कर उठँगकर जब भी बैठता हूं, अपने अनजानेमें ही देखता हूं, दाहिनी ओर भार देकर बैठा हूं। कभी भूलकर भी बायें कंधेको सींखचोंसे नहीं भिड़ाता हूं, बाईं ओर भार देकर नहीं बैठता हूं।

........उस समय हम लोग कितने छोटे थे? स्कूल नहीं जाते थे। बोर्डिङ्गके नजदीक हेडमास्टरका क्वार्टर। पिताजी स्कूल गये हैं। माँ बैठकर सुपारी काट रही हैं। मेरे और नीलूके बीच 'बात कट्टीअल' चल रहा है। नीलू बोलता है, माँकी दहिनी गोद उसकी है; बाईं गोद यदि मैं चाहूं तो ले सकता हूं। मालूम नहीं क्यों, मैं बाईं गोद लेनेमें अपमान अनुभव करता हूं। दोनों जने माँकी दाहिनी गोद पर हाथ रखकर अपने-अपने दावे कायम रखनेकी कोशिश करते हैं। इसी छीनाझपटीमें अचानक नीलू के पैरसे लगकर कटी सुपारी रखनेकी कट्टी उलट गई। माँने फट्-फट् करके दो थप्पड़ मेरी पीठ पर जमा दिये;—"इतना बड़ा लड़का, लाज नहीं आती, जितनी उम्र होती जाती है, उतना ही गुण बढ़ता जाता है!" मैंने जबाव दिया। "मैंने ही सुपारी गिराई है क्या?"

"फिर बोलता है! छोटा भाई दाहिनी गोद चाहता है तो इन्हें भी दाहिनी ही गोद चाहिये! दाहिनी गोद नीलूकी है और जरासा होता तो मेरा हाथ सरौतेसे कट ही जाता।"

क्रोध, लज्जा और अपमानसे आँखोंमें आंसू आ गये। थोड़ी दूर जाकर चुपचाप बैठ रहा। नीलू कुछ देरके बाद उठकर चला गया,—शायद

दावीदार नहीं रहनेसे उसकी झगड़ा करनेकी साध मिट गयी। बहुत देरसे अनुभव करता था कि माँ बीच-बीचमें नजरें बचाकर, मैं क्या करता हूं, देखती है। उसके बाद सुपारी काटना खत्म होनेपर दराजके ऊपर सुपारी रखकर, वह मेरे पास आकर बोली,—"तुम इतने बेवकूफ क्यों हो? बाई गोद ही तो अच्छी है।—देखते नहीं, चम्मचसे दूध पिलानेके समय दाहिने हाथसे दूध पिलाया जाता है; बाईं गोदमें सिर रखकर बच्चे सोते हैं? तुम तो दाहिनी गोदमें भी सोये हो। अब बाईं गोद तुम्हारी हुई। उठ, देख, वह बदमाश कहाँ गया?" उस समय यह युक्ति अकाट्य मालूम पड़ी थी।···

दाहिने पैरकी झुनझुनी खत्म हो गई। घरके अन्दर टहल रहा हूं, देखकर वार्डर दरवाजेके नजदीक आया,—जैसे जानना चाहता है कि मैं क्या सोच रहा हूं।—क्यों मैंने अचानक आधी रातको अन्धेरे घरमें टहलना शुरू किया। शायद सोचता है कि बाबूके मनका कुछ ठीक नहीं और आजके दिन तो ठीक रहनेकी बात भी नहीं है। सींखचों के बाहरसे वार्डर देखता है। मालूम होता है जैसे चिड़ियां खाना देखनेवाले पिंजड़ेके भीतर किसी जङ्गली जानवरको देखती है।

चिड़ियाँ खानेकी बात उठनेपर एक बात याद आई।........काशीमें मेरे मित्र नीरेशकी छोटी दादी तीर्थ करने गई थी। दूरके रिश्तेकी छोटी दादी। इनके साथ एक बूढ़े जमींदारकी दूसरी शादी हुई थी। शादीके कुछ ही दिन बाद विधवा हो गई। काशीमें साथमें आये थे, छोटी दादीकी माँ और पिता। नाम छोटी दादी, लेकिन उम्र इतनी कम देखकर अवाक् हो गया था। उनको साथ लेकर नीरेश और मैं बहुत उत्साह के साथ काशीके देखने योग्य स्थानोंको दिखला रहे थे। राजाका चिड़ियाखाना

देखने गया। बाघके घरके सामने खड़ा हूं। बाघने दोनों पांव आगे बढ़ाकर एक बिकट शब्द किया। उसके चेहरेका भाव जम्हाई लेनेकी तरह लगा। नीरेशकी छोटी दादीने "मैया रे" कहकर मुझे कसकर पकड़ लिया, शायद मालूम होता है डरसे। सिर्फ कईएक सेकेण्डकी बात थी। सम्भवतः उसकी माँ, बाप या नीरेश किसीकी भी नजर इस ओर नहीं पड़ी। पड़नेसे भी कमसे कम खराब नहीं लगा। लेकिन इस छोटे क्षणको लेकर मन ही मन मैंने कितना स्वप्न जाल बुना है!...... नीरेशके कहनेके मुताबिक छोटी दादीकी माँको मौसी कहकर पुकारता था।

काशीमें उनके बासेमें नीरेशके साथ गया, एकदम रसोई-घरमें जहाँ वह खाना बना रही थी। मौसी बहुत अच्छी है, बातचीत ज्यादा नहीं कर सकती है। सिर्फ इस डरसे कि पढ़े-लिखे शहरके लड़केके साथ बातचीत करते-करते क्या से क्या न बोल दें। मेरे रसोई-घरमें घुसनेके साथ ही बोली, "आमार भांगा घरे चांदेर आलो" क्या सोचकर यह बात बोली सो ठीक समझ नहीं सका। उसके बाद छोलनी हाथमें लेकर ठिठक कर खड़ी हो गई— चेहरे पर एक अर्थहीन हँसीका भाव। इसके बाद कई दिन तक हमलोग उन्हीं लोगोंके पीछे परेशान रहे। हम लोगोंने छोटी दादीके पिताके लिए चार तरहके चार टार्च बहुत दुकानोंमें घूमकर खरीदे; बाजार निकलनेसे ही उन्हें इसी तरहकी किसी चीजको खरीदनेकी बात याद आती। भले आदमीकी बातचीत देहानी थी, मँजी हुई नहीं। लड़कीके अभिभावक थे; दामादके नहीं रहनेके कारण सम्पत्तिकी देखभाल वही करते थे। एक मात्र लड़कीके वैधव्यसे विशेष दुःखित नहीं मालूम पड़ते, वरन् अपनी गरीबीके बीते दिनोंकी अतृप्त-अभिलाषाओंको संतुष्ट करनेका सुयोग पाकर आत्मभरिता

जैसे कुछ बढ़ गई है। सिर्फ अपनी लड़कीसे डरते हैं।...काशीमें छोटी दादीकी माँ बीमार पड़ी। बीमारीके समय उन्हें झोंक चढ़ी कि मेरे सिवा और किसीके हाथसे दवा नहीं खायँगी। रोज विश्वनाथ मन्दिरके पण्डेके घरसे डाब ले जाते—रोगीके लिए। घरमें घुसते ही छोटी दादी बोलती "यह आ गए संन्यासी ठाकुर। अब माँ निश्चिन्त हुई।" उन दिनों मेरे मनमें कृच्छ्साधनका शौक हुआ था। मैं उस समय बाबड़ी केश रखता था। दाढ़ी-मूछ निकल गए थे लेकिन बनाना शुरु नहीं किया था। इसीलिए छोटी दादीने मुझे सन्यासी ठाकुर कहा। उसकी बात याद आनेसे ही उसे देखता हूं—निलाम्बरी साड़ी पहने हुई, हाथमें बम्बइया बाँकुड़ी चूड़ियाँ, गलेमें मोटा चन्दहार—मालूम होता है, उसकी माँ जी-जानसे अपनी एकलौती लड़कीको विधवाका वेश नहीं रखने देती है। शरीरका रंग काला है और उसपर चिरंतन पाढ़की नीलाम्बरी साड़ी एकदम जेब नहीं खाती है। छोटी दादी—बिल्कुल मामूली गँवईके गृहस्थ घरकी लड़की। कहनेके लायक कुछ रूप-गुण उसमें नहीं था। लेकिन मुझे आकर्षित किया था, उसके रूपकी स्निग्धताने, एकदम अपना लेनेका व्यवहार और बातचीतकी आन्तरिकताने। जिस दिन वे लोग देश लौटकर जा रहे थे, नीरेश और मैं उन्हें ट्रेनमें सवार कराने गये थे। नीरेश और छोटी दादीके पिता, आखिरी वक्तमें याद पड़ा हुआ, काशीका कुछ अच्छा जर्दा पानवालेसे खरीदने गये थे। मैं प्लेटफार्म पर खड़ा हूं,—दोनों हाथ गाड़ीकी खिड़की पर रखे हुए हैं। खिड़कीके सामने बैठकर छोटी दादीने मेरे हाथ पर हाथ रख दिया। उसकी दोनों आंखोंमें आंसू भरे हैं। मैं उसकी ओर देख नहीं सकता हूं। मुझे उसने धीरे-धीरे कहा,—"सन्यासी ठाकुर, मेरे वहाँ एक

बार आओ।" उसे मैंने बात दी थी। बहुत दिनों तक इच्छा भी थी कि बात रक्खूंगा। छोटी दादीके चले जाने पर कुछ दिन तक सब सूना-सूना मालूम होता था—किसी चीजमें मन नहीं लगता था—घूम फिर कर एक मुखड़ा आंखोंके सामने आ जाता था। चिट्ठीकी उमीदमें पोस्ट आफिस तकमें हाजिरी दे आता था।........

उसके बाद धीरे-धीरे अनजानेमें न जाने कब वह नीलाम्बरी साड़ी, वह बम्बइया बाँकुड़ी चूड़ी स्मृति परसे मिट गयी। चार-पांच बरस पहले पुरानी चिट्ठियों की थाक फेंकनेके समय एक नीले रंगके कागज पर दो पंक्तियां पढ़कर उसका अमार्जित भाव बड़ा बुरा मालूम पड़ा था—"संन्यासी ठाकुर! शादीके भोजके वक्त मुझे ठगना मत। भोजके लिये मैं पेट साफ करके बैठी हूं।" 'पेट साफ करके' शब्द, सुरुचिकी बड़ी हीनता बतलाता है। चिट्ठीमें इस किस्मकी बात लिखी जा सकती है—यह सोच कर मन अवज्ञा और उचाटसे भर जाता है।......

खट् खट् खट् खट्! पक्की अङ्गनाई पर भारी फौजी बूटकी आवाज हो रही है। तीन नये सिपाही आये। पहलेके वार्डरसे चार्ज समझकर घरका ताला ठीक है कि नहीं देखा। किसी सेलके सामने अधिक देर तक चिल्लाया नहीं। समझा, सेलका कोई भी आसामी अभी तक सोया नहीं है। सो जानेसे वार्डर अवश्य पुकार कर उठाता। जब चार्ज बदला जाता है, तब नया वार्डर हरेक सेलके आसामीको पुकारकर उठाकर देखता है कि वह जिन्दा है कि नहीं! अगर कोई सेलके दरवाजेके पास बैठा रहता है, या खांसकर या और किसी उपायसे समझा देता है कि वह स्वस्थ शरीरसे जिन्दा है, तो और उसको नहीं पुकारता है। लेकिन सो रहनेसे बच नहीं सकता। सेलका

आसामी है—उसे एक लगातार दो घण्टासे ज्यादा गाढ़ी नींदकी क्या जरूरत ? क्योंकि पूछनेसे कहता है, 'यही रूल है बाबू।' अगर कोई बेहोश हो गया है या बीमार होकर बोल नहीं सकता है तो हम लोग बिना पुकारे कैसे समझ सकते हैं ? कैसे 'डाक्टर' को खबर देंगे ? सच्ची बात बोलनेमें क्या है, इससे सेलके कैदियोंको विशेष असुविधा तो नहीं होती है। मच्छड़, खटमल, चींटी, दिनरात बेकारी, दुश्चिन्ता आदि बहुतसे कारणोंसे सेलके वासियोंके लिये स्वाभाविक कर्मजीवनकी गाढ़ी निद्रा नहीं है।......

दस नम्बर सेलसे गानेकी आवाज आती है—"शहीदोंकी टोली निकली........"

टोलीकी बात सुन कर ही पटना कैम्प जेलकी १९३२ सालकी "सेवादल" के ट्रेनिङ्गकी बात याद आती है। निलू और मैं दोनोंने 'सेवादल' की ट्रेनिङ्ग लेनेका निश्चय किया। पहले दिन कवायद खत्म होनेपर निलूने मुझसे पूछा "टोली क्या है ?" मैंने उसे समझा दिया कि कई एक सिपाही मिलकर एक टोली कहलाती है। "सिपाहीका अर्थ है 'प्राइभेट', और टोली नायक होता है एन. सी. ओ.। निलू ऊबकर बोला "वह सब तो टेन्डुल करने अच्छी तरह समझा दिया है। लेकिन मैं पूछता हूं कि 'टोली' इन लोगोंने पसन्द कैसे किया ? और कोई नाम नहीं मिला ! 'टोली, टोली' कहकर हँसने लगा। उसी दिनसे पहरेमें टेन्डुलकर जब "कदम खोल" (Stand-at-case) और "सावधान" (Attention !) का अर्थ समझा रहा था, निलू एकदम कावायद के बीच ही हँसते-हँसते लोटपोट हो गया। टेन्डुलकर तो गुस्सेसे आग हो गया। वह हुबली में हारड़िकर के कैम्पमें ट्रेनिङ्ग पा चुका है, बम्बईमें कैम्प चला चुका है ; प्रादेशिक कांग्रेस कमिटीके सभापतिके

विशेष अनुरोधसे वह महाराष्ट्र छोड़कर बिहारमें सेवादलका काम करने आया है। सेवादल ट्रेनिङ्गके बारेमें वह खूब जानता है, लेकिन कवायदके समय इस तरहका अनुशासनका अभाव उसने पहले कभी नहीं देखा था। वह अच्छी तरह हिन्दी बोल नहीं सकता था। गुस्सेसे उसका चेहरा तमतमा गया। "तुमको यही लकड़ी मिलेगी" कहकर हाथकी लाठीसे निलूको एकबार मारा। निलूने उसके हाथसे लाठी छीन ली और चिल्लाकर बोला,—"लकड़ी मिलेगा! वह सब महाराष्ट्रमें कीजियो। इहाँ ऊ सब नहीं चलेगा। राष्ट्रभाषा बोल्ने नहीं आता है। पूना शहरको पूणे बोलता है। और हिन्दीमें बात बोल्नेका सौख है!" निलूने टेन्डुलकरका हाथ धर लिया। चारों ओरसे सब लोगोंने जाकर उसे छुड़ा दिया। साथ ही साथ यह खबर जेलमें सभी जगह पहुँच गई। कैम्प जेलमें उस समय लगभग साढ़े चार हजार राजबन्दी रहते थे। जिस वार्डमें जाओ सभी जगह छोटे-छोटे दल इसी बातकी आलोचना कर रहे हैं। जेलके हरेक कोनेमें, आसमानमें, हवामें गुन-गुनाहट फैल रही है। जेलके केन्द्रमें, जिसका नाम हम लोगोंने 'चौक' रखा था, कई एक बड़े दल सिगूफा छोड़ रहे हैं। वार्डर लोग भी शुद्ध राजबन्दियोंके साथ मिलकर एक हो गए हैं। जेलके पालिटिक्समें उनका उत्साह भी कम नहीं है। एक आदमीने भाषण देकर असल परिस्थिति सबको समझा दी,—"बिहारके सुनाममें कलङ्क लगेगा; टेन्डुलकर बाहरका आदमी है। उसके प्रति क्या ऐसा ही अतिथि-सत्कार किया गया। उस परसे राष्ट्रभाषा लेकर उपहास!" उसके बाद पासके श्रोताओंको विश्वासपात्र समझकर जैसे कोई गुप्त बात कह रहा हो, गलेकी आवाज कम करके बोला—"बंगाली है न"। उसके बाद होठोंके कोनेमें जरासी हँसी लाकर उसने जाहिर करना चाहा,—"तुम लोग तो

सब जानते ही हो। तुम लोगोंको और समझाकर कहना पड़ेगा क्या ?" लज्जा और अपमानसे मेरी जान जा रही थी। ये लोग निलूके मनका भाव जानते नहीं। उसके व्यवहारका एक मनगढ़न्त अर्थ निकाल लिया है। यह अर्थ ठीक उनके मनके मुताबिक हुआ है। संध्याके बाद वार्डमें निलूसे मुलाकात हुई, खानेके वक्त। सूर्यास्तके पहले ही खाना हो जाता है। उस वक्त भूख नहीं है, कहकर हम लोग रोटी लेकर वार्डमें रख देते हैं। बादमें कुछ रात हो जाने पर खाते हैं। निलूने खुद बात निकालकर मेरा सकोच दूर कर दिया। दोपहरकी घटनासे मैं लज्जित हुआ था; निलू लेकिन बिल्कुल नहीं शर्माया था।·······वह कहने लगा—"ये सब कवायदके हुक्म अगर अंग्रेजीमें होते तो क्या हर्ज था। क्विकमार्च, स्टैण्ड-एट-ईज़ कहनेसे क्या भारतकी आजादी मिलनी मुश्किल हो जाती ? हिन्दी जानेंगे नहीं और हिन्दी बोलेंगे। मैनर्स (तहजीब) जानता नहीं है। छोटा आदमी है। उसकी खातिर कैसी ?" मैं कभी किसी विषयमें बिना पूछे निलूको उपदेश नहीं देता हूं। इस वक्त भी शायद मैं कोई बात नहीं कहता, अगर वह खुद बात नहीं निकालता। दूसरे राजबन्दियोंने निलूके आचरणको कैसा बुरा दिखलाया है, इसके बारेमें थोड़ेमें मैंने उसे समझा दिया। निलू बेतरह बिगड़ उठा—कहने लगा,—"और ये लोग स्वराज लेंगे ?" उसके बाद अंटशंट क्या-कुछ बोलने लगा। कुछ देरके बाद देखा सब गुस्सा झड़ा किसी अनजान साथी पर, जिसने उसका गुड़ चुराकर खाया था। रविवारके दिन जो सब राज-बन्दी "एतवार" करते हैं, उन्हें भातके बदले गुड़-रोटी या छः पैसेका फल खानेके लिए मिलता है। निलू गुड़ लेता है। रविवारके दिन मेरे हिस्सेका भात, हमलोग दोनों आदमी मिलकर खाते हैं। और इस सुविधाको स्वीकार

करके हमलोग थोड़ा-थोड़ा करके हप्ते भर गुड़ खाते हैं। वही गुड़ चुरा लिया गया। इसलिए निलूका मन कड़वा हो जानेमें कुछ आश्चर्य नहीं। किन्तु मुझे बुरा लगा निलूका चिल्लाना, सबको सुनाकर राजबन्दियोंको कड़ी बातें कहना,—खास करके जबकि आवोहवा उसके बिल्कुल खिलाफ है। सारी दुनियाँ निलूके खिलाफ हो जाय,—निलू कभी अपनी राहसे हटेगा नहीं। एकबार उसका मन स्थिर हो जाने पर और कोई भी उसको हटा नहीं सकेगा। मैं हमेशा डरता रहता हूं कि निलू कोई कांड न कर बैठे। जेलके राजबन्दियों को वक्त काटनेके लिए खुराक चाहिए। जेलके बाहर रहनेसे जो कर्म-प्रेरणा उनको सदा चलाती रहती है, उसीकी तृप्तिके लिए जेलमें बहुत किस्मका हँगामा, दलबन्दी और पालिटिक्स पैदा करना पड़ता है। लेकिन रोज नया कार्यक्रम नहीं मिलनेसे मन चुपचाप कैसे बैठे? इसी लिए निलूकी बात उस दफा ज्यादा दूर नहीं जा पाई। दूसरे दिन जलपान बाँटनेके समय किसीने बात उठाई कि रोज भींगा चना जलपानके लिए देता है; इसको बदलकर अगर चूड़ा मिलता तो बड़ा अच्छा होता। फिर क्या था! साथ ही साथ सुर बाँधा गया "चनाके बदले चूड़ा लेंगे!" जेल भरके लोग एक स्वरसे यह चिल्लाने लगे। साथ साथ थाली और गिलास बजने लगे। कोई मुंहसे सीटी बजाता है, कोई दरवाजेके सींखचों परसे अपनी थाली हड़हड़ करके खींचता जाता है। उससे एक विकट आवाज होती है। बहुतसे लोग खिड़कियों पर चढ़ गए हैं। दो आदमी खिड़की पर चढ़कर टीनके छप्पर पर चढ़ गए। अचानक जैसे किसी जादूकी लकड़ी छू जानेसे सभी एक साथ पागल हो गए हैं। जिन्हें बहुत धीर-गभीर जानता था, उन्हें भी देखा उत्साहके बढ़ जाने पर अपनेको रोक नहीं सकते हैं। कई एक आदमी पागलकी तरह वार्डके एक हिस्सेसे दूसरे

हिस्सेमें "कम्बल, कम्बल" चिल्लाते हुए दौड़ रहे हैं। उसकी बातसे बहुतोंको एक नया प्रोग्राम मिल गया। देखते-देखते बहुतोंने ढेरके ढेर कम्बल बाहर लाकर फेंक दिए। कम्बलोंको टुकड़े-टुकड़े करके फाड़ देनेकी कोशिस हो रही है। एक आदमीने रसोई घरसे (जेलकी भाषामें 'भट्ठा') एक जलता हुआ कोयला लाकर कई एक कम्बलों पर फेंका। उससे जरा-जरा धुंआ और कड़ी गन्ध निकलने लगी। दो आदमियोंने दौड़कर जिस लोहेके बर्त्तनमें भींगा चना रखा था, उसे उल्टा दिया। पासका वार्डर "पगली" (alarm) सीटी बजाता है। एक सुरसे सीटी बजाता जाता है। इसे सुनकर जेलमें सब जगह जहाँ जो वार्डर है, सब सीटी बजाने लगे। फुटबालके रेफरियोंके साथ जैसे इंजिन ड्राइवरों की एक लगातार सीटी बजानेकी होड़ लग गई हो। अगनित सीटियोंकी तीखी जोरदार आवाजने जेलकी आबोहवाको एक नया रूप दे दिया। गुमटी पर लगातार घण्टा बजता जा रहा है—टन्टन् टन्टन्·······। जेल-गेट पर इसी किस्मका एक और घण्टा बज रहा है। बिल्कुल किताबमें पढ़ा हुआ जहाज डूबनेका दृश्य! और इस तरफ तुमुल कोलाहल। "कम्बल जलते रहे", "थलिया बजते रहे", "नौकरशाही नाश हो" और भी क्या क्या जो ठीक सुनाई नहीं पड़ता है। जेल-कर्मचारी लोग जो जहाँ जिस अवस्थामें थे, उसी हालतमें गिरते-पड़ते दौड़ते चले आ रहे हैं। गुमटी पर एक साइनबोर्ड टाँग दिया गया है "वार्ड नम्बर १७-१८-१९-।" लाठी लेकर गेट होकर वार्डर लोग गुमटीकी ओर आ रहे हैं। बहुतोंको वर्दी नहीं है, नंगी देह, खाली पाँव। जेलके डाक्टर हरेन बाबू एक गंजी पहने आए हैं। गुमटी परसे एक वार्डर चिल्ला रहा है—"सतरह, अठारह, उन्नीस नम्बर।" और सभी इन वार्डोंकी तरफ दौड़ते जा रहे हैं। अचानक आवाज

गूंजने लगी "मिलिटरी आ रही है"। बन्दूक हाथमें लिए एक दल मिलिटरी जेल-गेटसे अन्दर घुसी। इन लोगोंके हावभावमें परेशानी नहीं थी। क्विकमार्च करते हुए ये लोग गुमटीके नजदीक आए, तब तीनों वार्डके कामन गेट (एक ही दरवाजे) पर आकर खड़े हो गए। वार्डके कोनेमें रखा था बेलोंका एक ढेर। कल बाडंका बेल गाछ काटा गया था। सभी गाछ पर चढ़कर "गांधीजीकी जय" बोलते थे, और कांग्रेसका झंडा टांग देते थे। जेलके बाहर बहुत दूरसे यह दिखाई पड़ता था। इसीलिए इस गाछको काट देनेका हुक्म हुआ था। पहले ही चार वार्डर आकर इस बेलको घेर कर खड़े हो गए—जिससे लाठी चार्जके समय कैदी लोग इन वार्डरोंके विरुद्ध कुछ कर न सकें। मिलिटरीवालोंने वार्डको घेर लिया। उसके बाद एक दल वार्डरोंका और साथमें कई एक 'मेठ' (convict overseer) और कई एक जेल कर्मचारी वार्डके भीतर घुसे। उसके बाद लाठी चार्ज शुरू हुआ—सरकारी भाषामें हल्का लाठी चार्ज। इसमें दोषी निर्दोषका कोई विचार नहीं—जो लोग विरोध नहीं करते हैं और शान्तिप्रिय हैं, वे ही लोग ज्यादा मार खाते हैं। मारनेके वक्त सिपाही लोग कैसी एक आवाज मुँहसे निकालते हैं। "उधर जाओ। उधर कई एक ठो भागा। इस बदमाशको मारो"। वार्डर लोग चिल्ला रहे हैं। "मेट" लोगोंके उत्साहका अन्त नहीं है। जिधर आफिसर लोग खड़े हैं, उधरके कैदियोंका किसी तरह छुटकारा नहीं है,—क्योंकि वार्डर लोग अपनी बहादुरी ऊपरवालोंके सामने दिखलानेके लिए परेशान हैं। कितने लोग गिर पड़े हैं; कोई माथेमें चोट खाकर बैठ गए हैं। दरभंगेका एक निरीह राजबन्दी जप करता था। उसका भी छुटकारा नहीं। वे लोग हम

लोगोंकी तरफ आ रहे हैं। बड़ी घबराहट हो रही है ;—जानता हूं मार लगेगी जरूर ; और जानता हूं कि रोक नहीं सकूँगा ; मेरे भाग्यमें कैसी चोट है, इसकी कल्पना कर रहा हूं ; एक लाठी मेरे सिरको निशाना करके चलाई गई। अपने अनजानेमें दोनों हाथसे न जाने कब सिर ढक लिया था। जब हाथ पर चोट लगी तब समझा कि लाठीके ऊपरकी तरफ एक लोहेकी चूड़ी लगी थी। उससे हाथ कट गया। और भी दो तीन लाठियाँ इसी तरफ बढ़के आ रही हैं। मैं बैठ गया हूं। निलूने मुझे कसके पकड़ लिया है। कह रहा है "फिर माथा ढंकलो ; माथा ढंकलो" निलूके ऊपर कई एक बार लाठी पड़ी,—मेरे ऊपर और एक बार। निलूके सिरसे खून निकलने लगा। वार्डर लोग दूसरी तरफ चले गए। वे लोग एक ही जगह बहुत देर तक अपना वक्त बर्बाद नहीं कर सकते हैं।······ सारे वार्डमें एक सन्नाटा छा गया है। कोई-कोई सो गया है। जो भाग्यवान मार खानेसे बच गए हैं, वे लोग किसी आहतके लिए पानी ला रहे हैं। कोई बेहोश साथीके मुँह, आँख पर पानीके छींटे दे रहा है, या कोई अखबार या गमछेसे हवा कर रहा है। जिन्हें कुछ कम चोट आई है वे खुद ही अपनी प्राथमिक चिकित्सा कर रहे हैं; जेल-अस्पताल पर निर्भर करनेसे शायद आज और कुछ होगा नहीं। जिन्हें एकदमसे कोई चोट ही नहीं लगी वे लोग आहतोंकी जेनरल इंस्पेक्शन ( जाँच ) के लिए निकले हैं—जिस तरह गाँवमें लोग देखनेके लिए निकलते हैं कि घोर काल वैशाखीके बाद गाँवकी कितनी हानि हुई।........उसके बाद मरहम पट्टी लेकर आए जेलके डाक्टर और कम्पाउन्डर ; साथमें कैदी लोग कई एक स्ट्रेचर ले आए हैं—जो लोग बहुत घायल हुए हैं, उन्हें अस्पताल ले जानेके लिए।........

"बोलो रे अस्पताल"। अस्पतालके पहरेके गलेकी आवाज यहाँसे साफ सुनी नहीं जाती है। वह आदमी बिना कुछ कहे कड़कती आवाजमें जोरसे चिल्ला उठा।—मालूम होता है ऊँघ रहा था,—अचानक चौंक कर उठा है और अपने कर्तव्यके बारेमें सजग हो गया है। इस चिल्लाहटसे अस्पतालके किसी रोगीको शायद नींद नहीं आ रही है। सेवा-शुश्रूषाके लिए तो कोई आदमी नहीं, और उस पर रोजका रतजगा। इसके पहलेके सुपरिन्टेन्डेन्टने नियम बनाया था कि रातमें गुमटीकी पुकार पर अस्पतालके पहरोंको जवाब देनेकी जरूरत नहीं। "मेडिकल ग्राउन्ड" पर सुपरिन्टेन्डेन्ट कैदियोंको बहुत तरहकी सुविधा दे सकते हैं। इस विराट् चक्कीके अन्दर इस "मेडिकल ग्राउन्ड" के छेदसे ही कुछ हवा रोशनी भीतर आ सकती है। सहानुभूति रखनेवाले कर्मचारी इसीके बल पर कैदियोंको कुछ सुख-सुविधा देते हैं। नए सुपरिन्टेन्डेन्टने आकर पहरेकी हाँकका पुराना नियम चालू कर दिया।
.......स्नेह और सेवाके लिए लालायित बीमार कैदी लोग क्या रोगशय्या पर अपने स्त्री पुत्र सम्बन्धियोंके बारेमें नहीं सोचते हैं? बीमार होनेसे ही जेलमें घरकी बहुत याद आती है। साधारण कैदी जेलके बाहर रहने पर शायद दोनों समय खाना ही नहीं पाते। जेलमें और कुछ मत हो, कमसे कम दोनों समय दो मुट्ठी भात खानेके लिए मिलनेमें कोई अनिश्चितता नहीं। लेकिन उसके होनेसे ही क्या होता है,—बीमार होनेसे वे लोग अपनेको बिल्कुल असहाय समझते हैं। ये बीमार कैदी क्या अनेक चिन्ताओंके बीच भी आज मेरे बारेमें एकवार बिना सोचे रह सकते हैं? सहानुभूतिसे न हो, आतङ्कसे ही वे लोग मेरी फाँसीकी बात अवश्य ही सोचते हैं,—ठीक मेरी बात नहीं, एक अपरिचित फाँसीके आसामीकी बात, जो एक नम्बर सेलमें है।

अस्पतालके दोतल्ले पर एक खुले बरामदेमें टी० बी० के रोगी रहते हैं। उस जगहसे फाँसीका मंच साफ दिखाई पड़ता है। आज मंचके चारों ओर उज्ज्वल रोशनी चमचमा रही है। सन्तरी लोग तख्तेकोको घेरकर पहरा दे रहे हैं—क्या मालूम यदि कोई, रुपया पैसा खर्च कर वार्डरोंके द्वारा तख्तेका कल कब्जा बेकाम करके रख दे। ये टी० बी० के रोगी इस दीवालीको देख रहे हैं, और शायद उनकी जान निकली जा रही है। बचनेकी इच्छा रहने पर भी वे तिल तिल करके मर रहे हैं। तो भी फाँसीके कैदीसे वे अपनेको भाग्यवान समझते हैं। उन लोगोंकी 'आह' और बिना मांगी हुई करुणाका बोझ, सिर पर लेकर मुझे जाना होगा। मेरी फाँसी तो, जेलके अन्दर थोड़ी देरके लिए कमसे कम परेशानी और बिबाद लावेगी। और इन लोगोंकी मौतकी बात तो कोई जान भी नहीं सकेगा! निकट सम्बन्धीके पास एक "सर्भिस-पोस्टकार्ड" पहुँचेगा, और अस्पतालकी मृत्यु संख्यामें एक वृद्धि दिखाई जायगी। उसकी मौतकी रातमें, रातकी ड्यूटीका जेल डाक्टर शायद लिहाफके अन्दरसे निकलेगा भी नहीं। अस्पताल वार्डका 'पहरा' रातमें हाँक देनेके समय 'जमा' की संख्यामेंसे अचानक 'एक' गिनती कम करके चिल्लाया करेगा, और निशीथकी नीरवता भंग करके गुमटीके वार्डरको मजाकसे खबर देगा "एक आसामी एकदम रिंहा"।

रेलगाड़ीकी सीटी सुनाई पड़ रही है। बारह कब बज गये? अब गाड़ी छूटी। स्टेशन बहुत दूर पर है, तो भी मालूम पड़ता है जैसे प्लेट-फार्मका हल्ला कानोंमें आ रहा है।······

यात्रियोंकी हड़बड़ी; कुली! कुली! इधर। वही राउतारा

स्टेशनके स्टेशन मास्टरका चिल्लाना "घण्टा! घण्टा!" सिगनलर घण्टा देता है।........

रेलगाड़ीकी सीटीकी आवाज जेलके सीमित जगतके साथ उन्मुक्त उदार पृथ्वीके सयोगका सूत्र है। इतना प्राण उदास करनेवाला, मनको उतावला करनेवाला, वंशीके ऐसे सुरकी किसी वैष्णव कविने भी कभी कल्पना नहीं की। "कानेर भीतर दिया मरमे पशिल गो"—आज केवल छन्दोवद्ध शब्द विन्यास मात्र नहीं है! कौन अज्ञात इथर (आकाश) का कम्पन, मनकी अवरुद्ध तन्त्रीको तरङ्गित कर रहा है? चटकलके भोंपूकी सुबहकी आवाज मजदूरोंकी वस्तीमें हलचल जरूर मचा देती है, लेकिन रेलकी सीटी हरेक कैदीके हृदयमें द्रुततर स्पन्दन जगाती है, प्राणोंमें कितनी मधुर स्मृतियाँ जगाती हैं, कितनी कायाहीन उत्कण्ठा और वासनाको रूप देती हैं।......रेल गाड़ीके चलनेकी आवाज सुनाई पड़ती है;—दूर, जितनी दूर चली जा रही है—अँधेरेमें दोनों ओर कुछ दिखाई नहीं पड़ता है,—केवल विशाल सीमा हीनताका अनुभव होता है—किसी प्राचीरकी बाधा नहीं है।.......

........'बी० एन० डब्लू० आर०' बदल कर मालूम होता है सभी गाड़ियों पर 'ओ० टी० आर०' लिखा गया है। बी० एन० डब्लू० नाम किसी दिन बदल सकता है, यह सोचनेमें भी कैसा लगता है। संसारमें चारों ओर नित्य कितने परिवर्तन हो रहे हैं, किन्तु, उनके बीच भी कितनी ही बस्तुओंका एक स्थिर अपरिवर्त्तित रूप छोड़कर और कुछ कल्पना हम लोग नहीं कर सकते हैं। पिताजीको दाढ़ी मुंड़े हुए चेचरेकी कल्पना, मैं कभी नहीं कर सकता हूं। सोचनेसे ही हंसी आती है। दुर! ऐसा भी कहीं होता है?........

····सिर्फ रेलगाड़ीकी आवाज ही नहीं, बाहरसे जो कोई भी आवाज, जेल क्वार्टरके कुत्तोंका भंकना तक, बड़ा मीठा लगता है ।

····उसी दिन जेलके बाहरके रास्तेसे लड़कोंका एक दल 'हिप, हिप, हुर्रे' चिल्लाता हुआ चला गया। मालूम होता है कोई मैच खेलकर लौट रहे थे। इस आवाजका सम्बन्ध कितनी पुरानी स्मृतियोंसे है ;—छोटे लड़के-लड़कियोंको बहुत दिनोंसे देखा नहीं है,—हाफ पैन्ट पहने हुए नौ-दस बरसका कैप्टन निलू चीनी मिट्टीका एक प्याला-रकाबी लिए, गला फाड़-फाड़कर चिल्ला रहा है, हिप हिप हुर्रे! गरमसे, मिहनतसे, चिल्लानेसे चेहरा तमतमाया हुआ। ··

····तीन बजे और रात साढ़े बारह बजे रेलगाड़ीकी सीटी बजती है ; सुबह पाँच बजे और साँझ साढ़े छः बजे स्टीमरका भोंपू बजता है ; मेरी घड़ी ;—सेलके सामनेकी छायासे भी बहुत निश्चित—मेरे कल्पना-विलासका साथी। जबतब हवाई जहाजकी आवाज सुनता हूं। रातमें तो हरेक दो घण्टे पर एक जाया करता है—मालूम पड़ता है आसाम फ्रंट पर डाक लेकर जाता है। लेकिन वह आवाज क्यों मनमें स्मृतिकी सुवास नहीं जगाता है। शायद थोड़ी देरका कुतूहल;—रोज कहाँ जाता है, रातमें रास्ता किस तरह ठीक करता है ; कम्पास, रेल लाईन, गंगा,—इससे ज्यदा नहीं। दिनके वक्त जिस दिन बहुत हवाई जहाज एक साथ जाते हैं—मैं सेलके भीतरसे सुनता हूं कि नौ और दस नम्बरके बम वाले दोनों बाबू मुझे खबर देनेके लिए चिल्ला करके गिनते हैं—एक, दो, तीन, चार। लेकिन क्या जाने क्यों हवाई-जहाजकी आवाजसे मेरे मन पर कोई असर नहीं होता है। मेरे परिचित जगतमें इनका स्थान नहीं है ; क्योंकि मिट्टीके साथ इनका सम्बन्ध गौण है।

इसी लिए शायद कौआ, मैना, खंजन आदि पंछियोंको जो जेलके भीतर देखता हूं, तो वे सिर्फ दृष्टि आकर्षित करते हैं, मनको उद्वेलित नहीं करते हैं। एक तरहके जीवनमें ये सब परिवर्तन लानेका काम कर सकते हैं, लेकिन इससे ज्यादा नहीं।···· ·······विरही यक्षका मेघदूत, विरहिणी राधाका हंसदूत केवल कविका कल्पना-विलास है, वास्तविक मानव-चरित्रकी अभिज्ञताकी छाप उनमें नहीं है।

सिपाहीजी बैठकर ऊँघ रहा है। अति परिचित बिल्ली धीरे-धीरे मेरी ओर आ रही। बिल्ली ठिठक कर खड़ी हो गई,—मालूम होता है मैं दरवाजे पर बैठा हूं इस लिए आनेका साहस नहीं कर रही है। रोज दिनमें और रातमें थाली चाटनेके लिए आती है; हफ्तेमें एकदिन थोड़ासा दही पाती है, और दिन क्या खानेको आती है? जेलमें रहकर थोड़ा-थोड़ा निरामिष खाना भी सीख गई है। आश्रममें जो सहदेवका कुत्ता था, वह भी—देखता था,—निरामिष ही पसन्द करता था। अभी कुत्ता कहाँ होगा? सहदेवका भाई शायद उसे घर ले गया होगा।········लालटेनकी रोशनीमें बिल्लीकी देह का रंग साफ दीख पड़ता है। बाघकी तरह—पीला, काला और धूसर लकीरें बनी हुई। देखनेमें अच्छी है बिल्ली। उस दिन जब जेलर साहब आये थे, तो वह वहीं बैठी थी। जेलर साहबने मजाक किया—"क्या बिल्लीके साथ बातचीत चल रही है? क्या नाम रक्खा है?" मैंने जवाब दिया "नहीं, ऐसे ही आई है।" तो इसका नाम रखिए 'तोजो'।" उसके बाद अपने मजाक पर खुद ही मुग्ध होकर हः हः करके हँसने लगे। जेलर साहबके दाँत मोतीकी तरह उजले हैं—टुथपेस्टके बिज्ञापनके दाँतोंकी तरह।········

मैं उठकर बगलमें हटकर खड़ा हो गया, बिल्लीको रास्ता देनेके लिए। बिल्ली एक बार बोली,—अभी भी मेरे ऊपर विश्वास नहीं कर पा रही है। भातकी थालीसे थोड़ी तरकारी मैंने उठा ली—नेनुआ की तरकारी! बिल्ली क्या नेनुआ खाती है?

एक टुकड़ा उठा करके मैंने बिल्लीको निशाना करके मारा। बिल्ली 'में ओं' करके भागी। किन्तु नेनुआका टुकड़ा सींखचेमें जा लगा, दरवाजेसे बाहर नहीं गया।

निलू और मैं नारंगी खा रहे हैं—आश्रममें माँ के घरमें चौकी पर बैठ करके। दोनोंमें होड़ लग रही है, नारंगीका छिलका खिड़कीके सींखचोंसे बाहर फेंकना होगा—जिसमें सींखचेमें नहीं लगे। किन्तु आश्चर्य! अधिकतर सींखचोंमें ही लग जाते हैं। कितने सींखचें हैं ही और कितनी-सी जगह ही उन्होंने घेर रखी है। लेकिन तो भी छिलके अधिकतर उन्हींमें जा लगेंगे।····

········घूम फिरकर क्यों निलूकी बात ही बार बार याद आती है? जो बात भूलना चाहता हूं उसीके लिए नहीं तो? ज्ञानतः जो बात आज कितने दिनोंसे मन ही मन कहता हूं, यह बात क्या मेरा अज्ञात मन किसी तरह ग्रहण नहीं कर सकता है। सचमुच, मैं जानता हूं कि निलूने मेरे विरुद्ध गवाही देकर सिर्फ अपना कर्त्तव्य किया है। किसी आत्म सम्मानशील, सत्यनिष्ठ, राजनैतिक कार्यकर्त्ताके लिए इसे छोड़कर और कोई रास्ता नहीं था। लेकिन यह तो हुई बहसकी बात। सुप्त चेतना शायद सोचती है या बहस कचहरीमें चल सकती है, किताबके काले अक्षरोंमें यह देखनेमें अच्छी मालूम हो सकती है, लेकिन और कहीं इसकी जगह नहीं है। ऐसा नहीं होनेसे

घूम फिर कर निलूकी बात ही याद क्यों आवेगी ? अपनी पार्टीके प्रति एक-निष्ठता दिखानेके लिए, सहोदर भाईके लिए फांसीका रास्ता सुगम कर देना हृदयके बलका प्रमाण है या स्नमनके सफाईके बहमका परिचय है ? मेरे अन्तरका असली मैं, मालूम होता है निलूके व्यवहारका किसी तरह भी समर्थन नहीं कर सकता हूं ; इसी लिए ऊपरकी पुरानी स्मृतियोंके मधुसे मैं उस दाहकी ज्वाला स्निग्ध करता हूं ।............

फिर आकर दरवाजेके सामने बैठता हूं ; इस बार बाईं ओर भार देकर—बाएँ हाथसे सींखचा पकड़ कर। दाहिनी ओर भार देकर, बायां सींखचा पकड़ कर बैठना जैसा स्वाभाविक और सुखकर मालूम पड़ता है , दाईं ओर भार देकर बैठनेसे ऐसा नहीं मालूम होता है। नीची जगहके ठीक ठीक ऊपर बैठा हूं। खूब बड़े बूढ़े हाथीके कंधे पर, ठीक महावतके पीछे बैठा हूं ऐसा मालूम होता है। ऐसी विचित्र कल्पना माथेमें आती है। विचित्र फिर क्यों हुआ ?

.......याद आ रही है—काढ़ागोलाके धनी गृहस्थ धनपत यादवके गांव गया हूं। पुलिसका खयाल है कि उसका डकैतका दल है, उसके ऊपर बी० एल० केस चलेगा। उस वक्त कांग्रेस मिनिस्ट्रीका जमाना था। वह हम लोगोंको अपने गाँवमें मिटिंग करनेके लिए ले गया है। मतलब है दारोगाको डर दिखाना ;—दारोगा जिसमें समझे कि वह कांग्रेसका आदमी है। खूब शानदार सभा हुई। खाने-पीनेके बाद बोला, चलिए शिकारका इन्तजाम किया है। बबूल और जंगली गुलाबके जंगलकी ओर, हाथी पर चढ़ कर चला। मैं ठीक महावतके पीछे हूं ; बूढ़ा हाथी—कंधेके पास एक बड़ेसे गड्ढेकी तरह हो गया है। उसमें खूब आरामसे पद्मासन लगाके

बैठा हूं। जंगल शुरू हुआ। वहांसे कुछ दूर गया। सामने एक विशाल पीपलका पेड़। अचानक हाथीको पीपलके पत्ते खानेका खयाल हो गया। सूड़ उठा कर एक छोटी डाल तोड़नेकी कोशिश की। क्षण भरमें क्या हो गया सो समझ न सका। मालूम पड़ा जैसे मुझे चक्कीमें डाल कर चूर-चूर करनेकी कोशिश की जा रही है। जिस गड्ढेमें मैं बैठा था, हाथीके सिर उठाने पर वह गड्ढा सिकुड़ कर मेरे शरीरके नीचले हिस्सेको दाबके धर लिया। मैं कष्टसे चिल्ला उठा। महावतने जब समझा तो हाथीकी सूंडको नीचे कर दिया। मैं उतर गया—पैरकी तरफ सुन्नकी तरह हो गया।........

मेरे सेलका वार्डर दीवालमें उठँग कर सो रहा है। पगड़ीको खोल कर पास ही रख दिया है। तीन नम्बर सेलका वार्डर शायद सो रहा है। और बाहरमें इस वार्डके बार्डरके पाँवकी आवाज सुन पड़ती है। सब सेल शान्त हैं। मालूम होता है सब सो गए हैं। पागल भी क्या आज सो गया है? बमवाले बाबू लोग मालूम होता है रोशनी जला कर पढ़ रहे हैं। झींगुरकी झंकार सुन पड़ती है। लेकिन आश्रममें झींगुरकी लगातार आवाजकी तरह सजीव नहीं। जाड़ेकी रातमें बचपनमें नींद खुलने पर झींगुरकी आवाज जिस रहस्यके रंगमहलको खोल देती थी, यह पुकार उतनी प्राणवन्त नहीं है। निलू कहता था कि वह एक किस्मकी चींटीकी आवाज है। कौन उसके साथ तर्क करे? जेलकी आबोहवाके साथ जैसे झींगुरकी पुकार मेल नहीं खाती; रूटीन, गिनती, जंजीर, दीवाल, नियम पालनके बीच इस विलासका स्थान कहाँ? लेकिन दीवाल और सींखचोंसे क्या सब चीजें रोकी जा सकती हैं?......

हड़बड़ करते हुए नए दलके वार्डर लोग घुसे, तो एक बज गया।

निश्चय ही वे तीन आदमी हैं—एक मेरे सेलका, एक तीन नम्बर सेलका, और एक इस वार्डका। एक आदमी मेरे सेलके आँगनमें घुसा। वह सोए हुए वार्डरकी पगड़ीको उठा करके धीरे-धीरे बाहर रख आया। तब वार्डरको उसने पुकारा, "ए हैदर, आज क्या यहीं सोओगे? वह हड़बड़ाके झटसे खड़ा हो गया,—जेलर साहब तो नहीं आये! नहीं! कौन किसुनचन्द? नया दफा आ गया है? ए भाई, दिल्लगी मत करो। पगड़ी कहाँ रक्खी है कहो। नया सिपाही बोलता है, मैं क्या जानू? वाहरे वाह! मैं तो आ ही रहा हूं। हैदरने पहले तो विश्वास नहीं किया—पीछे डरसे उसका चेहरा फक् हो गया। वह हाल ही में नई नौकरी में पक्का हुआ है। नोकरीमें आते ही उसने गप्प सुना था कि जेलर साहब राउन्डमें आकर सोए सिपाहीको देख कर उसे उस वक्त कुछ नहीं कहते हैं, सिर्फ उसकी पगड़ी हटा कर रख देते हैं, पीछे उसे जुर्माना होता है। यही तो बीते हप्तेमें बार्डरकी तकदीरमें जब यही बात हुई तो उसने 'कपड़ा गुदाम' के इन्चार्ज कैदी बृजविलासको डेढ़ रुपया घूस देकर एक पगड़ीका जोगाड़ किया था। जेलर साहबने परेडके समय दूसरे दिन उसकी पगड़ी देख कर उससे पूछा कि यह पगड़ी उसने कहाँ पाई? पहले हरेकिसुन साफ इन्कार कर गया। उसके बाद जेलर साहबकी जिरहमें उसने सब बातें कह दीं। इसमें वह अकेले नहीं गया, बृजविलासको भी साथ-साथ "लिये दिये साफ"। किसुनचन्दने मुँह बनाकर अँगुलीसे चुटकी बजा कर अपनी कहानी खत्म की। हैदर अब समझ गया। वह खुशामद करके पगड़ी माँगने लगा। दूसरे घरमुँहा, वार्डर दोनों भी मेरे सेलके सामने आकर खड़े हो गए। हैदरने पगड़ी वापस पाई, सबने मिलकर फैसला कर दिया,—कल दोपहरमें हैदरको अपर

डिबिजनके राज बन्दियोंके वार्डमें पहरा देना होगा ; वहांसे एक ग्लास द कल वह किसुनचन्दको पिलायगा। हँसते-हँसते सभी बाहर चले गए।

इन लोगोंके इस काम धन्धेसे थके जीवनमें भी सुख है,—निश्चित वेतन स्त्री-पुत्र परिवार।······'टूर' से वापस हुआ हूं। सरस्वतीके माँगमें सिन्दूर हाथमें शंखाचूड़ी, दहलीजमें खड़ी, हंसता हुआ चेहरा—सलज उत्कण्ठावे साथ बोली—"बैठो, जरा सुस्ताकर ठण्डा लो। मैं नब तक थोड़ी चाय बना लूँ।" मैंने जवाब नहीं दिया। हँसते-हँसते उसके पीछे-पीछे जाकर रसोई-घरमें पीढ़ी बिछाकर बैठ गया। भींगी हुई लकड़ी फूंककर आग जलानेकी कोशिशमें लाल और पसीनेसे तर चेहरा बिखरे केशराशिसे ढँक गया है।—हो सकता था।....

लेकिन मेरा जीवन कष्टसाधनके आदर्शमें ढलकर बना हुआ और अगर मेरे मनकी वासना दूसरे प्रकारकी भी होती तो भी क्या उपाय था? बराबर पास-पड़ोसियोंके मुँहसे सुना है, 'निलूके ऐसा लड़का देखनेमें नहीं आता।' और इस प्रशंसाको बनाये रखनेकी आकांक्षा निवृत्तिके पथसे मुझे कभी गिरने नहीं देती है। मनकी कितनी दुर्निवार वासनाको चाबुककी चोटसे रोकता रहा हूं। किन्तु मेरी भावधाराका (Sublimation) होकर क्या मैं किसी ऊँचे स्तर पर पहुंचा हूं? नहीं, ऐसा होता तो आज यह संशय मनमें क्यों जगता? कितने प्रकारके भोगोंकी आकांक्षा क्यों मनके कोनेमें ताक—झाँक करती? कुछ भी करके नहीं जा सका। इतिहास में नाम रखके नहीं जा सका। सिर्फ फुटबौल मैचमें टिकट खरीदने वालों की तरह, देश सेवकोंकी अन्तहीन सरकती हुई पंक्तिमें अपना स्थान बनानेका सुयोग पाया था। मेरी बात, मेरे पड़ोसी भी शायद आगामी सप्ताहमें

भूल जायंगे—अभी भी याद है कि नहीं कौन जाने ? तब इतने दिन मैंने क्या किया ? मैं तो अति मानव नहीं ; अति साधारण रक्त-मांसका आदमी—मुझमें मानवके सभी दोष—भ्रांति, दुर्बलता हैं। कीट्स पचीस बरस बचा था—शेली तीस बरस। पिट् तेइस बरसकी उम्रमें इङ्गलैंडका प्रधान मंत्री था। और मैं तेंतीस बरसकी उम्रमें कुत्ते-बिल्लीकी मौत मरूँगा! कोई जानेगा नहीं, कोई सुनेगा नहीं, कोई दो बूँद गरम आँसू नहीं गिरावेगा। जो कुछ करनेकी कोशिश मैंने की है, वह एकदम व्यर्थ हो गया है। इस निष्फल प्रयासका कोई मूल्य नहीं। कवि चाहे जितना गीत गाये कि पृथ्वीमें कुछ भी व्यर्थ नहीं,—जो नदी मरुभूमिमें धार खो देती है वह भी सार्थक है,—यह सब बात बिल्कुल अर्थहीन है। जिस कविको व्यर्थताका अनुभव नहीं है, यह उसीका भाव-विलास है।

नहीं, हो सकता है यह बिल्कुल बेकार नहीं है। मेरी तरह दो-चार जीवनका मूल्य क्या ? जो देखा है,—जनशक्ति का प्रकृत रूप गत अगस्त महीनेमें जो देखा है,—युग-युगसे संचित जगद्दल पत्थरके नीचे सोई हुई जिस प्रचण्ड शक्तिका पता पाया है,—वह जाग जाने पर क्या कर सकती है, इसका पूर्वस्वाद जनताको समझानेमें मेरा दान नगण्य नहीं है। राजनैतिक कार्यकर्त्ताका रास्ता बड़ा कठिन है, बड़ा ऊबड़-खाबड़। "तख्त या तख्ता" ( सिंहासन अथवा फांसीका तख्ता )—आशा रक्खो फाँसीकी रस्सीकी, हो सकता है गौरवका राजमुकुट पा भी सकते हो। अपार कष्टका जीवन। दिनों-दिन तिल-तिल करके अपनी जीवनीशक्ति और उत्साह क्षय होते देखोगे। अपने मनकी तृप्ति छोड़कर और कुछकी आशा करनेसे निराश होना पड़ेगा। अवज्ञा और उदासीनताके भारी बोझसे जीवन दुर्बल हो जायगा। एक डेग

आगे बढ़ो—सैकड़ों लोगोंके स्वार्थ पर आघात होगा—हरेक तुम्हारा शत्रु हो उठेगा। एक आदमीका सम्मान पा सकते हो, लेकिन पग-पगपर अनुभव करोगे कि तुम दस आदमियोंकी उपेक्षा और उपहासके पात्र हो। इस जीवनसे जेलमें चला आना इत्मीनानकी साँस लेकर बच जानेके समान है—मृत्यु दण्ड भी शापके रूपमें वर है। कितने लोग तो युद्धमें बिना कसूर मरते है। क्यों, यह वे लोग नहीं समझते। कितने लोग भूखसे मरते हैं,बिना दवा दारूके मरते हैं। अपराध,—जिस जन्मके ऊपर जो उसका कोई अधिकार नहीं था, उसीके अमोघ निर्देशसे। राहमें गाड़ीसे दबके मरनेकी तरह, मैदानमें सांप काटनेसे मरनेके समान राजनीति-क्षेत्रमें मृत्यु दण्ड भी एक सामान्य आकस्मिक दुर्घटना ही है। उससे ज्यादा कुछ नहीं। दलके बाहर ससारके साथ सघर्ष। कितनी प्रतिक्रियाशील शक्तिके साथ संघर्ष! उसके लिए तो सभी राजनैतिक कार्यकर्त्ता तैयार रहते ही हैं। किन्तु भीतर भीतरका संघर्ष और भी भयानक है। छोटे-छोटे दलोंमें सघर्ष, व्यक्ति व्यक्तिमें संघर्ष, स्वार्थ स्वार्थमें सघर्ष, जाति जातिमें संघर्ष, प्रदेश प्रदेशमें संघर्ष; मन एकदम ऊब जाता है। यह सब राजनैतिक खेलके नियमके अनुसार है,—निष्ठुर, निष्करुण निर्मम; यहाँ दुर्बलके लिए जगह नहीं; सब आगे बढ़ रहे हैं; पीछेका आदमी गिरा या मरा, उसे घूमके देखनेकी जरूरत नहीं है।........

"बाबू खूब मच्छड़ काटता है क्या?" वार्डर पूछता है। "हां; क्यों?"

"थोड़ा मिट्टीका तेल बदनमें लगा क्यों नहीं लेते? सरसोंका तेल तो यहाँ मिलेगा नहीं—नहीं तो कोशिश करके देखता?"

"अच्छा दो"।

"सोचता हूं कि सरसोंका तेल नहीं मिलना ही अच्छा है। उस दिन [सर]सोंका तेल लगा कर सोया था। नींद टूटने पर देखा असंख्य चींटियोंसे [दे]ह भर गयी है। छोटी लाल चींटियां शायद तेल खाना पसन्द करती हैं। [वा]र्डर लालटेनकी कागजकी ढेबरी खोलकर, उसे ही जरासा फाड़कर, [ल]म्बा करके मरोड़ना है। और उसे डुबा करके मेरे हाथमें दो-एक [बू]ंद करके किरासन तेल देता है। मैं उसे सारी देहमें अच्छी तरह लगाता [हूं]। कैसा ठण्डा-ठण्डा लगता है—आर्डीकोलन की तरह।.......डिगबोयमें [क्]या मच्छड़ नहीं होते?

....किया तो था मेजर गोमेमने पटना कैम्प जेलमें। किरासन तेलसे [क्]या एक इमलसन तैयार किया था। इतने बड़े जेलमें एक भी मच्छड़ नहीं [र]हा। साहब खामखयाली था तो क्या, था बड़े कामका आदमी। पगला [मि]जाजका,—काला लम्बा—बोलता था मैं हिन्दुस्तानी हूं। एक दिन गयाके [ए]क राजबन्दीको उसने कहा था—'जवान! तुम भी साला, हम भी साला; सब सालासे माफी मांगना।" सबको 'जवान' कहता था।........

......'हंइयो जवान हंइओ!'......कचैया गांवके सौसे अधिक आदमी [ब]ड़े-बड़े गाछके कुन्दे लुढ़काकर रास्ते पर लाकर ढेर लगा रहे हैं। हँसी खेलमें [म]दाहा-पूर्णियां रोड पर गाछके कुन्दोंका एक बड़ासा 'बैरिकेड' बन गया। [अ]दम्य उत्साहने असम्भवको सम्भव बना दिया। जो गरीब किसानोंका दल [जी]वनमें कभी खुलकर हँस नहीं पाया है, आज उन्हें क्या हो गया है? हरेक [क]ो कुछ न कुछ बोलना है। इन कई दिनोंमें सबने कुछ न कुछ गप्पें लड़ाई [हैं]। सुनने वालोंकी कमी है। वीरगांव थानेमें गोली चली है, सैंतालिस

आदमी मरे हैं, घायलोंका तो अन्न नहीं है। दारोगा साहबकी स्त्रीने कहा है कि दरोगा साहब अगर नौकरीसे इस्तीफा नहीं देंगे, तो वह उन्हें रसोई बनाकर नहीं खिलावेगी। गांवकी पञ्चायतने हरखू हजामको जुर्माना किया है, नायब बाबूकी हजामत बना दी थी—हरखूने सबके सामने कसूर मान लिया था—वह बोला कि नायब बाबूको गांधी टोपी पहने देखकर मैंने समझा "महात्माजीमें" नाम लिखा लिया है—मुझे जो इच्छा हो सजा दो, सिर्फ अगुली मत काट लेना। टामी और पल्टन सब कोशी नदीके बीच स्टीमरमें हैं—सूखी जमीन पर रात काटनेका साहस नहीं है और भी बहुत किस्मकी बातें।······लकड़ी के कुन्देकी ढेर बहुत ऊँची हो गई है—मिलिटरी लारी और आ नहीं सकेगी। अभी तक याद नहीं आई—रहुआके नजदीक रास्तेके किनारे बड़े-बड़े बड़के गाछ हैं। 'चलो ओ! चलो-ओ!' कुल्हाड़ी, कुदाल, दबिया, कत्ता, जिसने जो पाया हाथमें ले लिया। 'कुईक मार्च' नहीं काफी तेज दौड़। थक जाने पर भी रुकनेका उपाय नहीं। —हरेश्वरके हाथमें कांग्रेसका एक छोटा झंडा। उसने हाल ही में, सिर्फ महीने भर पहले कांग्रेस सेवादलकी ट्रेनिंग पाई है—जिला-कांग्रेस कमिटीने जो ग्राम-रक्षादलके लिए एक ट्रेनिंग कैम्प खोला था उसीमें। गाँवमें अभी उसकी कितनी कदर है! कुछ दिनसे वह गांवमें अपना नया सीखा हुआ युयुत्सुका पेच, लाठीका पैंतरा और साइकिल चढ़ना दिखलाता था। उसने गाना शुरू किया—"नोजवान निकले···।"

हाँफते-हाँफते बच्चे-बूढ़े सभी उसे दुहरानेकी कोशिश करते हैं। रहुआ। रहुआ गाँवके लोग भी आ जुटे। दो घण्टेमें रहुआका पर्व समाप्त फिर 'चलो-ओ! चलो-ओ!' कृत्यानन्दनगर स्टेशन की ओर।

रास्ता बन्द करनेमें कोई जोश नहीं। थाना जलानेके बाद ये सब काम बिल्कुल फीके लगते हैं। इस समय कत्रैया रहुआके समवेत दल—भूताविष्ट और नशेमें चूरकी तरह। मुझे साइकिलसे उतरने नहीं देंगे। सभी मिलकर साईकिल ठेलकर ले जायँगे। इतने आदमियोंके बीच क्या साइकिल पर बैठकर जाया जा सकता है? कौन किसकी बात सुनता है। "गांधीजी-की जै"। सामने कीचड़ "कुछ परवाह नहीं।" "भारतमाताकी जै!" उसमें होकर ही साइकिल चलेगी। "बम्बईसे आई ताजी खबर!" कितनी नई खबरें। रहुआका एक विद्यार्थी पाकेटसे एक लिथो किया हुआ कागज निकालकर दुहरानेके ढगसे पढ़ने लगा। कागजके ऊपर बड़े-बड़े अक्षरोंमें लिखा हुआ है "देशकी पुकार"। "जिला साहब गिरफ्तार हो गए। विजय लक्ष्मी पण्डित पर गोली चलाई गई। मुगेर जिलामें स्वराज हो गया।" और भी कितनी ही चचल करने वाली घटनायें आज और सम्भव असम्भवका विचार करनेकी ममता उनमें नहीं है। रहेगी ही कैसे? बीते हुए एक दिनमें उन्होंने कितनी असम्भव बातोंको सम्भव होते देखा है। किसी भी बातको झूठ समझनेका साहस वे नहीं कर पाते हैं।······सदर कलक्टरी जिस दिन दखल की जायगी; उस दिन रहुआ कत्रैयाके सम्मिलित जत्थेका नेतृत्व कौन करेगा, इसको लेकर काफी बहस हो गई;—कत्रैयाका हरेश्वर या रहुआका तिलकधारी सिह? हरेश्वरने सेवादल ट्रेनिग पायी है तो क्या, अभी तक ठीकसे मूछें भी नहीं आई हैं। कत्रैयाके लोग बोलते हैं वह तो 'बुतरू' (बच्चा) है। और तिलकधारी—वह तो 'बत्तिसमें हो आया है'—अर्थात् १९३२ सालमें जेल गया है। कहीं अब मुझे पंच न मान बैठें।···

रहुआ गाँवके बाहर, रास्ते पर खड़ी है, एक बूढ़ी और बहुतसे अधनंगे च्चे-बच्चियाँ। सुना बादर बहरगमियाकी माँ है। जातकी मोचिन। गाँवके भीतर रहनेकी प्रथा नहीं है—इसी लिए उन्हें बहरगमिया कहते हैं। एक लड़केके हाथमें गेंदा फूलकी माला है। बादरकी माँ और सब लड़के-बच्चे एक साथ बोल उठे "पर नाम"। मालूम होता है पहलेसे ही सिखाया हुआ है। वृद्धा संकुचित भावसे मुझे कहने लगी "आपकी तो कुछ खातिरदारी कर न सकी। और कर ही क्या सकती ? आपका मञ्जूर किया हुआ 'रहट' था इसलिए सुखसे दिन कट रहे हैं। दो बरससे कुछ-कुछ बालू जमने लगा है।" देखा बूढ़ी खूब बात बोलना पसन्द करती है। याद आई 'अर्थक्वेक रिलीफके' कुएँकी बात। कांग्रेस स्वयसेवक बिरचीने मकसूदन-सिंहसे पाँच रुपए घूस लेकर उसके कामत पर कूआँ तैयार करा देनेको कहा था। मैंने इन्स्पेक्शनमें आकर कूआँ बादर बहरगमियाकी कुटियाके नजदीक, घमदाहा-पूर्णिया रोडके किनारे तैयार करा दिया था।

कहा—"एक लोटा पानी पिलाओ, माई—एकदम ठण्डा, देखें तुम्हारे कूएँका पानी कैसा है।"

बूढ़ी जैसे इस अप्रत्याशित अनुरोध पर क्या करे सोच नहीं पा रही है। चेहरे पर सम्मानकी अपेक्षा डरका चिन्ह अधिक साफ दिखाई पड़ता है। जनताके बीच उसके गाँवके जो लोग हैं, उनके मुँहकी ओर प्रश्न सूचक भावसे देखती है। इस कूआँका पानी मास्टर साहबका बेटा पी लेगा क्या ? गाँवका और कोई तो इसका पानी काममें नहीं लाता है। कहता क्या है। वह पानी लादेगी ! उसके सिर पर आसमान फट पड़ा। तिलकधारीसिंह उसे हिम्मत दिलाते हुए कहता है—"लोटा मँजकर पानीभर कर लाओ ;

बिलूबाबू कहते हैं।" लोटामें पानी आता है। लम्बी घूंघटवाली बादरकी स्त्री—साथमें दिया है सत्तुएके पत्तेमें लपेटा हुआ, धूल भरा, बहुत दिनका रक्खा हुआ थोड़ासा गुड़। लजाए हुए बालक-बालिकाओंके ऊपरी-मनसे किए गए इन्कारको नहीं मानकर उनके हाथोंमें थोड़ा-थोड़ा गुड़ देता हूं। खुद भी गुड़ खाता हूं और पानी पीता हूं। बादरकी मां टकटकी बांधकर मेरी ओर देख रही है। आंखोंका भाव ठीक खानेके लिए बैठनेके समय जैसे मांके पखा हाथमें लेकर बैठने पर होना है, वैसाही लगता है। मेरे खिलानेके समय सबके मुख पर और आंखोंमें एक ही भाव दीख पड़ता है, मांका, चाचीका, मझली दीदी, सहदेवकी मांका, दुबेजीकी स्त्रीका, सरस्वतीका। नारा लगाता है "बोलो गांधीजीकी जै!" हरेश्वर कहता है "बादरकी मां मुझे भी पानी पिलाओ।" वालटीमें पानी आता है। सभी छीना-झपटी करके बहरगमियाका छुआ पानी पीते हैं। गांव पर, समाजकी नजरोंके सामने यह अद्भुत काण्ड करनेका साहस आज इन्होंने अचानक पाया कहांसे? सबके चेहरे पर बहादुरी दिखानेका भाव उमड़ पड़ा है। "गांधीजीकी जै! जै, महात्माजीकी जै!" अविराम जय-ध्वनिके बीच भी सब अपने मनकी उदारता मुझे दिखानेकी कोशिश कर रहे हैं। और यहां क्या ठहरनेका वक्त है? नौजवान निकले……बूढ़ीकी आंखोंके कोनेमें जैसे कुछ झलक रहा है—कृतज्ञताके अतिरेकमें। यही उसका दान है, गांव वालोंकी उदारताका मूल्य। महात्माजी उसके "गोसाईं" (गृहदेवताकी) अपेक्षा जाग्रत देवता हैं। वही बात वह सोच रही है। इसी रास्तेसे तो भूकम्पके बाद महात्माजी 'हवागाड़ीमें' धमदाहाकी तरफ गए थे। 'हवागाड़ीमें' इतने लोगोंके बीच वह महात्माजीको पहचान भी न सकी। सिर्फ मास्टर साहबको

पहचान सकी। बादर कहता था कि 'महात्माजीके बदनसे ज्योति निकलती थी।' उसने गांधीजीको उद्देश्य करके प्रणाम किया।……

जनता चली। आगे चली है पीछे मुड़ कर देखेगी क्यों? बादरकी माँ कितनी ही जगहोंमें इस तरह प्रणाम करती है। इन्हें देखनेके लिए वक्त कहाँ। "इनके हाथमें अभी बहुत काम हैं।" एक दल बोलता है "बम्बईसे आई आवाज" और एक दल—वह आवाज क्या है। इसे बतलानेके लिए उसके साथ सुर मिलाकर बोलता है "इन्कलाब जिन्दाबाद" कवैयाके ऊपर प्राइमरी स्कूलका गुरु जयध्वनि करनेके समय नाचता है—जैसे नगर सकीर्त्तन हो रहा हो। उसके गलेकी आवाज फट गई है। हँफनीके रोगीकी, खाँसनेकी कोशिश करने पर, जैसी आवाज होती है, जयध्वनि करनेके समय सिर्फ वैसी ही एक आवाज होती है, किन्तु न तो है उसके उत्साहका अन्त और नहीं है अपने विद्यार्थियोंके सामने आत्म-सम्मान बनाए रखनेकी कोशिश।…एक आदमी घोड़े पर चढ़ कर कृत्यानन्द नगरकी ओरसे आ रहा है। हम लोगोंको देख कर उतर गया। "प्रणाम!" वह मुझे खबर देता है कि आपके भाई साहब तो कृत्यानन्द नगरमें आए हैं—हरखचन्द मारवाड़ीके गोलेमें। किरासन तेलकी कीमत पूछने।…वह आदमी मुझसे और कुछ नहीं कहता है, लेकिन पासके दो एक आदमीसे फुस्-फुस् करके क्या जैसे बोलता है। जनता जैसे उस बातको जाहिर करना नहीं चाहती है। समझा, निलू 'पिपुल्स् प्राइस कन्ट्रोल कमिटी' का सेक्रेटरी है, किरासन तेलके स्टाक या और कुछके बारेमें पूछ-ताछ करने आया है। और मालूम होता है वह कृत्यानन्द नगरके लोगोंको रेलकी लाईन उखाड़ने, रास्ता बन्द करने और टेलिग्राफका तार काटनेके विरुद्ध

कुछ बोला है। जन प्रवाह चला है—हम लोगोंके पुराने पुरखे पेटके लिए, हताश हृदयसे, अनिश्चित लक्ष्य लेकर, जिस तरह निकल पड़े थे, यह वैसा नहीं है। यह नई दुनियांकी उमीदमें उमड़ती हुई जनताका निश्चित लक्ष्यकी ओर जाना है। सिर्फ Homo sapiens कहनेसे कवैयाके मास्टरका पूरा परिचय नहीं होता है और सिर्फ Biological necessity ( जैव आवश्यकता ) कहनेसे उसके अनन्त उत्साहकी पूरी व्याख्या नहीं होता है। ··रेलकी लाईन। दूरमें कृत्यानन्द नगर गांव दीख पड़ता है।···आधे घण्टेमें करीब चौथाई मील रेलकी लाईन एकदम निश्चिन्ह हो गई। रेल और काठकी पटरियां सब कँधों पर लेकर भुट्टेके खेत या रेलवे लाईनके किनारे-किनारे पानीमें फेंक रहे हैं। कृत्यानन्द नगरके दो बूढ़े भले आदमी आए थे—इस दलको ऐसे भयानक कामसे रोकनेके लिए। जनताने हँसी-ठट्ठा करके उन्हें विदा कर दिया। एक आदमीने काशके झाड़की दो छोटी बालाकी तरह बनाई। कई एक आदमियोंने दौड़ कर उन दोनों भले आदमियोंको पकड़ा। हरिश्चन्द्रने उनके हाथोंमें इन दोनों बालाको पहना दिया—बोला "चूड़ी पहन कर भनसा घरमें जाके बैठो।" और एक आदमी बोल उठा "अय-हाय! क्या नाजुक कलाई।" "और एक जोड़ी चूड़ियां देता हूं निलू बाबूको पहना देना और कह देना, कलक्टर साहबके पैसेसे इस इलाकेमें फुटानी छांटनेके लिए मत आवें। कवैया रहुआ जानता है कि खुफियाके साथ कैसा बर्त्ताव करना चाहिए। याद न हो तो विलसन निलहा साहबको क्या हुआ था सो याद दिला दीजियो।"—जनताके संयमका बांध टूट गया है। और वे लोग निलूके बारेमें मेरे सामने कुछ भी कहनेमें नहीं सकुचाते हैं।—रेलवे लाईनके काठके पुलमें आग लग गई है। कैसे इतनी

जल्दी इतने मोटे कुन्देमें आग लगी ? मां तो-देखता हूं-चूल्हा जलानेमें ही हांफ जाती है।—रहुआका वह लाल गंजीवाला छोकड़ा पादरी साहबकी नकल करता है। कल उन लोगोंने साहबके घरका "घेराव" किया था। पादरी साहबने किस स्वरमें 'गांधीजीकी जय' कहा था, यह सुनकर सब हँसते-हँसते परेशान हैं। अचानक रेल गाड़ीकी आवाज सुनी जाती है। सचमुच इञ्जिन तो दिखलाई पड़ता है। यह आ गयी। मिलिटरी भरी हुई गाड़ी ; साथमें रेलके इञ्जिनियर हैं। भागो! भागो! जो जिधरसे सका—गड्ढा-खाईमें होकर, आलके ऊपरसे···। एक क्षणमें जनता तितर-बितर हो गई। 'टामीगन' की कर्कश आवाज कानोंमें आती है। कृत्यानन्दनगरकी तरफ एक भुट्टेके खेतमें मैं घुस गया हूं। कृत्यानन्दनगरमें जान बूझ कर नहीं जा रहा हूं। गाँववालोंकी सहानुभूति जब नहीं है, तब जाऊँगा क्यों ? जल्दीबाजीमें साइकिल लाईन पर फेंक आया हूं। भुट्टेका खेत,—पादरी साहबकी दाढ़ी ठीक भुट्टेके सनकी तरह। पौधेमें भुट्टे भरे हैं। खेतकी सोंधी मीठी गन्धमें बारूदकी गन्ध नहीं आती है।···

वही मुकदमा चलनेके समय सरकारी वकील मजाक करते हुए भुट्टेके खेतका वर्णन करते-करते बोलते हैं—गोरोंका दल भुट्टेका खेत देख कर सोचता था कि मकई Indian corn नहीं Nazi corn है।··· जज साहब गम्भीरता छोड़ कर हँसते हैं ; पेशकार साहब हँसते हैं ; मेरे वकील हरेन बाबू भी इस मजाकमें बिना हँसे न रह सके।···पेरू और चिलीके सूर्य मन्दिरमें था बनावटी भुट्टेका पौधा। पौधेका धड़ और पत्ते चाँदीके,—भुट्टेके दाने सोनेके।····

आँखोंकी पलकें तन्द्रासे भारी हो चली हैं। जरा हाथ-पैर सीधा कर लिया जाय। आः! देह हाथ पैर बैठे-बैठे दुख गए। जम्हाई आ रही है,—आज भी नींद आवेगी क्या? कितने लोगोंकी बातें सुनते आ रहा हूं—फांसीके पूर्व दिन उन लोगोंके सब केश पक गए थे। मेरे भी केश पक जायंगे क्या? एक आइना होता तो ठीक था। कामरेड चनरबल्ली फांसीके पहले पागल हो गया था। और मुझे नींद आती है! आश्चर्य!···

····अगर मुझे बहुत रुपए होते, तो आज वसीयत कर जाता। अनेक करोड़ रुपए। उससे मार्क्सवादका प्रचार कार्य चलता; भारतके हरेक गांवमें रूसके बालक और किशोरके संघकी तरह दलका संगठन हो सकता। लेकिन रुपए कहांसे आवें? अगर लाटरीकी टिकट बिना खरीदे ही लाटरीसे रुपए पानेकी सुविधा होती, सिर्फ तभी रुपए पानेकी आशा थी। और अगर राष्ट्र हम लोगोंके हाथमें आता तो काम करके दिखला देता,—दश बरसमें देशका क्या किया जा सकता है।····कांग्रेसके कार्यकर्ता अबकी जेलसे निकल कर जरूर मेरे नाम पर कोई जगह खड़ी करेंगे।—"बिलू बाबूकी सड़क", "बिलू आश्रम", नहीं तो शायद मेरे असली नामका ही व्यवहार करेंगे "पूर्ण आश्रम"। लेकिन मेरा असली नाम पूर्ण है सो तो कोई जानता ही नहीं है। सभी बिलू बाबूको जानते हैं। और उसके बाद भी बहुत कुछ हो सकता है। हो सकता है पूर्णियाका नाम हो जायगा पूर्ण नगर—स्टालिनग्राड या गोर्कि शहरकी तरह। बाजारमें बालमुकुन्द साहकी धर्मशालावाले मोड़पर रहेगी, मेरी संग मर्मरकी मूर्ति—वक्तृता देनेकी भंगिमें। हरेक साल इन दिनों दलके दल लोग जुटेंगे, इसकी वेदीके नीचे—मेरी स्मृतिमें श्रद्धाञ्जलि चढ़ानेके लिए।····बन्द आंखोंकी पलकों पर देखता हूं

एक हरे रंगकी शिखा—मयूरके पंखकी आँखोंकी तरह, लेकिन चञ्चल और काँपती हुई। शिखा लाल हो गई ···पीली—हरी ·· हरि-या-ली-नीली···· काली····शिखा है कि नहीं···अँधेरा····

चाची रसोईघरके बरामदे पर आम काटनेके लिए हँसुआ लेकर बैठी है। एक टोकरी गुलाब खास आम; सामने बड़ा कटोरा रक्खा है। आमकी मुंधी काट काट कर कटोरेके पानीमें छोड़ती जा रही है। सरस्वती और मैं उनके सामने पीढ़ा बिछा कर बैठे हैं। चाची बोली "एक थालीमें देती हूं, तुम लोग दोनों खाओ।" आम काट कर चाची ने थालीमें रक्खा। सरस्वतीने चाचीसे कहा "कटे हुए आम क्या इसे रुचेंगे,—इसको समूचे आम दो।" चाची सरस्वतीसे मजाक करती हुई बोली "मैयारे इसी बीचमें इतना।" कह कर मेरे हाथमें एक समूचा आम देती है—सोनेकी तरह पीला रंग, मुँह पर सिंदूरी लाल। मैं आमके नीचेकी ओर एक छेद कर लेता हूं। दाबके आमको घुला लेता हूं, उसके बाद चूस-चूसके खाता हूं। माँ सोए जानेवाले घरके बरामदे पर हैं; पूजा घरमें आनेकी इच्छा है लेकिन आ नहीं सकती हैं। बीच आँगनमें एक बड़ासा साँप; चिकना काला रंग; फन काढ़े हुए स्थिर है। माँ चिल्लाती है "निलू जल्द इसको मार, अभी मार फेंको", पिताजीने कहा, नहीं मारो मत। हाथसे ताली बजाओ, चला जायगा। निलू काहेको पिताजीकी बात सुनेगा! एक बड़ीसी लाठी ले आया है, साँप मारनेके लिए। साँप भागता है; अँधेरे कुएँमें घुस गया। और साँप नहीं है। साँप कुएँकी बालटीकी रस्सी हो गया है। निलूने गुस्सेसे बालटी पर एक लाठी लगाई। खनन् आवाज हुई।······

आवाजसे तन्द्रा टूट गई। बूटकी आवाज, सिरके पास। अरे! तो

क्या मुझे लेने आया है ? यही मालूम होता है, जैसे दरवाजा खोलकर प्रवेश किया। सारी देहसे पसीना निकल रहा है। निश्चय, स्पन्दनहीन होकर पड़ा हूं। नहीं, दरवाजा नहीं खुला। तब शायद नया वार्डर आया—चैनकी सांस ली। हां, वही है! कितनी देर सोया हूं ? सुबहका दल है क्या ? अभी तक तो पंछीकी आवाज नहीं सुनाई पड़ती है। वार्डरको पूछूं कि कितना बजा है। नहीं, जरूरत क्या है ? जब वक्त होगा तो जान ही जाऊंगा। पूछनेसे ही मुझे कमजोर दिलका समझेगा। एक मामूली वार्डरके सामने जीवनकी इस अन्तिम घड़ीमें छोटा नहीं हो सकता हूं। पागल भी तो सुबहसे ही चिल्लाना शुरू करता है। तो अभी सुबह होनेमें देर है। इस दुनियांसे और दो घण्टेका सम्बन्ध है। बाहर जब मौका था तब जीवनका उपभोग नहीं किया। लम्बे तेंतीस साल किस तरह काट दिए, ठीक याद नहीं आता। निरर्थक जीवनके अनन्त विस्मृतिके स्तर-स्तरमें जमा हुआ है एक आत्म स्मृति-कंकाल। इसका परिचय मुझे छोड़कर और कोई जानता नहीं है। बचनेकी इच्छा होती है—इच्छा होती है बाकी दो घण्टोंके स्वप्न-विलासके बीच, दुनिया को छान बीनकर, जो कुछ भोगकी सामग्री है उसे एकत्र करलेनेकी, यदि इस अन्तिम घड़ीमें मेरी फांसी रद्द करनेका हुक्म आजाय! ऐसा भी तो होता है। बहुत लोगोंको ऐसा हुआ है।········जल्लाद तलवार उठा चुका है। घुड़सवार दूरसे नक्षत्र वेगसे आता है। जल्लाद, मत मारो, मत मारो। कितनी कहानियां पढ़ी हैं, पिथियस और और डेमन।······

१९३४ के भयङ्कर भूकम्पकी तरह प्रचण्ड भूकम्प अगर अभी हो जाय, जेलकी दीवाल अगर टूट जाय, तो भी मेरे बचनेका उपाय नहीं है। जो

फांसी देगा वह अगर बीमार पड़ जाय? सो दूसरे आदमीके मिलनेमें देरी न होगी। अगर हाईकोर्टसे या प्रान्तीय ऐडवाइसरसे चिट्ठी आई हो, मुझे फाँसी नहीं देनेकी, और दैवात् भूलसे वह अगर खोली न जाय! आश्चर्य क्या है? ऐसा तो कई बरस पहले पंजाबमें हुआ था। बड़े साहबकी जेबमें ही चिट्ठी पड़ी रह गई थी—उस आदमीकी फांसी हो जानेपर साहबको याद आई!

……बचनेकी इच्छा मुझे कहाँ ले जा रही है? किसी अनिर्दिष्ट शक्तिके अमोघ निर्देशका तो कभी विश्वास नहीं किया। सचमुच क्या यह मृत्यु-भय है? जरूर डर ही है। यही तो कुछ देर पहले वार्डरके पैरकी आवाजसे मनमें जो भाव हुआ था, डर छोड़कर और क्या था? उत्कण्ठाकी चरम अनुभूतिसे ही निराशा आती है। उसी निराशाकी प्रतिक्रिया मेरे मन पर चल रही है।……

सनकी मोटी रस्सी। बचपनमें इस रस्सीको 'लकलाइन' कहता था। उसमें एक फाँस है। फांसमें एक पीतलकी गोली। सारी रस्सीमें अच्छी तरह चर्बी लगी हुई। नीचे अँधेरा गड्ढा—देखनेमें ठीक कुआंकी तरह। गड्ढा कितना नीचा है—शायद ज्यादा नहीं है। काठका तख्ता खींच लेनेपर जब सारी देह झूल पड़ेगी तब जिसमें दोनों पैर मिट्टीको न छू सकें—इसीलिए गड्ढेकी जरूरत है। इसलिए, जरूर कूआं ज्यादा गहरा नहीं है। ज्यदा खोदनेसे तो पानी निकल पड़ेगा। चार-पाँच हाथसे ज्यादा नहीं होगा। लेकिन गड्ढा जितना गहरा होगा, और रस्सी जितनी बड़ी होगी, देह नीचे गिरनेके वक्त उतनी ही जोरसे झोंका खायगी। और यह झकझोर ही तो असली चीज है। नहीं तो कंधेके पासकी हड्डी टूटेगी कैसे? फांसीका अर्थ तो केवल सांस रोककर मारना नहीं है। तब तो गला

दाबके मार देनेसे ही हो जाता। इतने कल-काँटा, साज सरञ्जामकी क्या जरूरत थी ? कम समयसे, कम मिहनत से, मृत्यु दण्ड देनेके लिए ही फाँसी की सृष्टि हुई है।....पीतलकी गोलीने गलेकी हड्डी पर जोरसे चोट की; कुट करके एक आवाज हुई। उसके बाद ? उसके बाद सब शान्त। नहीं, एक दम शान्त कैसे होगा ? मनुष्यकी बचनेकी इतनी आकांक्षा है ! उस जीवन विलासी इच्छाशक्तिकी चोटका क्या असहाय शिथिल देह पर कुछ भी असर नहीं होगा ? और अगर इच्छाशक्ति न हो, तो भी तो ( Reflex action ) जनित आक्षेप है। बलिदानके बाद छागलके धड़को तड़फड़ाते हुए देखा है।—उसके बाद फाँसीके आसामीकी देह शून्यमें झूलती है—अंधेरेमें इधर-उधर हिलती है। रस्सी ढीली की गई। मृत देहके पैर गढ़ेमें मिट्टी छूते हैं। डाक्टर पैरका नस काटेगा क्या ? किस्सा सुनता था कि कोई बच गया था। इसी लिए इतनी सावधानी थी। सब बेकारकी बातें हैं। डाक्टरको वह सब कोई काम नहीं है। केवल सरकारी नियम की रक्षाके लिए डाक्टरका रहना फाँसीके समय जरूरी है। सिर्फ उसको बोलना होगा कि हाँ, आसामी ठीक-ठीक मर गया है ; कानूनकी भाषामें, जब तक नहीं मरे तब तक फाँसीमें झूलनेकी सजा है न, इसी लिए। उसके बाद दिल्लीके शाही तालाबके छोटे सस्करणकी तरह, गढ़्ढेके भीतर जो सीढ़ी गई उससे नीचे जायगा वह आदमी। वह बिलकुल जो सो नहीं है। एक मूहूर्त्तके शारीरिक परिश्रमसे कितने आदमी पाँच रुपया रोजगार कर सकते हैं ? उस पर 'रेमिशन' तो है ही। दस्तूरके मुताबिक ठीका मजूरी।....शव देह,—नहीं अब शव देह नहीं,—लाश ऊपर लाकर फेंकी गई। बीभत्स मुख ! दोनों आँखें पथराकर बाहर हो रही हैं। कम्बलसे ढंक दी

गई !....कसी भीषण यन्त्रणा होगी तख्ता हटानेके क्षणमें ! असह्य तीव्र यातना ! आँखोंमें आंसू आ रहे हैं। छि, कितनी सी देरके लिए यन्त्रणा ! हो सकता है इस समय उसकी अनुभव करनेकी शक्ति भी नहीं रहेगी। हो सकता है और सब चिन्तामें मन इतना लगा रहेगा कि यन्त्रणाकी बात मनमें रहेगी भी नहीं। सांघातिक चोट खाए हुए लोग भी युद्ध क्षेत्रमें नशेमें जैसे अपना काम करते जाते हैं। उसे क्या अपनी तकलीफकी बात सोचने का वक्त रहता है ? और अगर तकलीफ बेबर्दाश्त हुई तो उससे भी क्या होता है ? जीवनकी ही यदि आशा नहीं है, तो एक क्षणकी यन्त्रणाकी बात सोचना बेकार है। मरनेके पहले सुनता हूं क्षणभरमें सारा जीवन चलचित्रकी तरह आंखोंके सामने नाच उठता है। मुझे विश्वास नहीं होता है।....जिस देशमें मृत्युदण्ड नहीं है उस देशमें अगर मुझे सजा होती तो ? तो शायद आजीवन कारावासकी सजा मुझे वैचित्र्यमयी पृथ्वीसे अलग करके रखती। लेकिन जेलमें भी तो एक टुकड़ा संसार है। जेलमें भी तो जाड़ा, गर्मी, बरसातका अनुभव किया जा सकता है। आकाश, वायु, चन्द्र-सूर्य-तारा वहाँ भी मधुरिमा बिखेरनेमें कंजूसी नहीं करते हैं। काल वैशाखीका मतवालापन, पहली बर्षाके बादकी भीगी मिट्टीकी गन्ध, निशीथ रातकी वर्षाकी मादकताभरी रिमझिम, शरत्की सुनहले गुच्छोंमें गुथी धूप, रहस्य भरा जाड़ेका कुहासा,—जेलकी दीवालके भीतर भी इनकी बेरोक गति है। तिस पर आदमीका मुँह देखना—वे चोर डकैत ही क्यों न हों लेकिन आदमी तो हैं। उनके बीच बचना क्या एक रस्सीमें झूलके मरनेसे अच्छा नहीं ? ....अमेरिकामें कैसा अच्छा है, बिजलीकी कुर्सी पर बैठे और एक क्षणमें सब समाप्त हो गया। यन्त्रणाका लेश भी नहीं लेकिन मरनेके पहलेकी मानसिक

यन्त्रणा तो जैसी यहाँ है, वैसी वहाँ भी—सिर्फ उनके मारनेका यन्त्र ज़रा अधिक मार्जित हैं। यही जो कुछ फर्क है। किन्तु जिस देशमें बन्दूककी गोलीसे मारा जाता है, तलवारसे काट दिया जाता है, या 'गिलोटिन' किया जाता है; उससे तो हमारे देशका नियम अच्छा है। तलवारसे गला काटनेकी बात सोच कर ही मन सिहर उठता है। अच्छा अगर फांसीके आसामीको मार्फिया इन्जेक्शन देकर या क्लोरोफार्म करके उसके बाद मृत्युदण्ड दिया जाय, तो उससे सरकारकी क्या हानि होगी? उससे शारीरिक कष्ट और मानसिक दुश्चिन्तासे तो आदमी बच जायगा। आदमीको समाजसे हटा देना ही यदि राष्ट्रका लक्ष्य होता, तो बेहोश करनेके बाद फांसीका नियम होता। सबसे अच्छा है पोटेशियम साइनाइड—क्षणभरमें सब समाप्त।....

निलू कालेज लेबोरेटरीसे थोड़ा ले आया था। इस चीजको लेकर कितने किस्मकी आलोचना, जल्पना कल्पना हुई। रबरकी डिबियामें भरके मुँहमें रखना सबसे अच्छा है, यही ठीक हुआ। गिरफ्तार होनेसे भी डर नहीं; जब इच्छा हो मुँहमेंकी डिबियामें दांतसे एक छेद कर दो। उस समय जो सोचा था, जो ठीक किया था, वह अगर करके रखता तो आज और मानसिक दुश्चिन्ताका कोई कारण नहीं था। लेकिन उस समय तो सोचा नहीं था कि सचमुच मुझे इस चीजकी जरूरत होगी। अगर रहती तो जिस समय भोरको बूटकी आवाज सुनता उसी वक्त डिबिया चबा लेता। दरवाजा खोलने पर वे चकित हो जाते। घातक कैदी हताश होता। सुपरिन्टेण्डेन्ट सोचता यह फिर क्या झंझट खड़ा हो गया,—अब हजार किस्मकी डिपार्टमेन्टल लिखापढ़ीमें पड़ना हुआ। सब सोचेंगे कि डरसे हार्टफेल

होकर मर गया। नहीं, पोस्टमार्टम जरूर होगा। ऐसा होनेसे ही पोटैशियम साइनाइडकी बात जाहिर हो जायगी।···

···लेकिन पोटैशियम साइनाइड खाना इतना आसान नहीं। उस दफा तो नहीं कर सका। उस दफा जब डिसपेपसियासे परेशान था, शामको रोज फुटबाल मैच देखने जाना। एक दिन देखा जितेनदा' एस० डी० ओ० साहबको पुकार रहे हैं "Come up एसमाइल" दोनों आदमी मोटरमें खड़े होकर खेल देखने लगे। एक दूसरेके कँधे पर हाथ रक्खे खड़ा है।···· अचानक मन कैसी एक निराशासे भर गया—अपनी दुर्बलता, अपनी नगण्यता, अपनी तीव्र बुद्धिकी कमी, मनमें केवल घूम-फिरके खोंचा मारने लगी। मनमें होने लगा, जितनदाकी तीव्र बुद्धि क्यों मेरी न हुई। जितेनदा पर ईर्ष्या नहीं होती; एस० डी० ओ० साहबके साथ दोस्तीके लिए भी मैं ललायित नहीं था; तो भी मन जैसे अवसादसे भर गया। क्षणभरमें जीवनमें वैराग्य आ गया। सिर्फ मनमें होने लगा, बचके क्या होगा, जिस हीन अवस्थामें मुझे बचना पड़ेगा, उससे मरना बहुत अच्छा है। सब ठीक—उसदिन रातमें पोटैशियम साइनाइड खाऊँगा। इसी तरह जागकर कितनी रात तक जिला कांग्रेस आफिस-घरकी बड़ी घड़ीकी घण्टीकी आवाज सुनता रहा। बाद उसके ठीक चरम मुहूर्त्तमें मनमें हुआ कि आज रहे। लेडिजआफ्टर नून, बिस्कुट खूब खानेकी इच्छा होती है। कल इस इच्छाको पूर्ण करके तब आत्महत्याकी बात सोची जायगी। दूसरे दिन मनकी अवस्था दूसरे किस्मकी हो गई। इसके बाद जब सोचा, सारी घटना मजाककी कहानीकी तरह मालूम पड़ी।···लेकिन आज साइनाइड रहनेसे जरूर खाता। यह तो अपनी इच्छासे आत्महत्या नहीं है; एक आई हुई विपत्तिसे बचनेका

उपाय मात्र है। साईनाइडकी शीशी नीबू गाछके नीचे गाड़ दी थी। क्या मनमें हुआ था मालूम नहीं—शीशी मिट्टीमें गाड़नेके पहले, बादामी रंगके एक पुराने मोजेमें रखके तब गाड़ दिया था। अब भी जरूर वहीं गड़ी होगी।

नींबू गाछकी नीचेकी कई डालियां हमेशा मिट्टीमें दाब दी जाती हैं,—कलम तैयार करनेके लिए। जिलाके जितने कांग्रेस कर्मी कामसे जिला आफिसमें आते हैं, उनमेंसे बहुतसे इस गाछके कलम ले जाते हैं।········निलूको रोज खानेके समय नींबू होना ही चाहिए। दालमें दो-चार बंद नींबूका रस नहीं देनेसे उसे अच्छा ही नहीं लगता है। आश्रममें मछली नहीं पकती है। इसलिए बड़ी मछली आनेसे ही चाचीके घर हम लोगोंके खानेकी बुलाहट आ जाती है। उस घरमें खानेके लिए जानेके वक्त भी एक नींबू पाकेटमें निलूको ले ही जाना चाहिए—क्या जाने उस घरमें नींबू है कि नहीं। उस घरका छोटा लड़का भी इस बातको जानता है; कोई निलू काकाकी जेब देखता है; कोई दौड़कर दीदी माको खबर देने गया कि निलू मामाकी जेबमें नींबू है। चाची रसोई घरसे बाहर आकर खड़ी हो गई—"क्यों रे 'माछ पातरी' तुम लोग आ गए"।—बहुत दिन पहलेकी बात है। चाचीके घरके बरामदेमें पाती-पानीसे पीढ़ियां बिछी हुई हैं। सामने भातकी थाली। निलू, जितनदा', घेन्टा, मैं खानेको बैठूंगा। "अरे 'माछ पातरी' जो" कहकर निलू जैसे ही दौड़कर पीढ़ी पर बैठने जायगा, पीढ़ी पिछड़नेसे गिर गया। भातकी थाली छिटक कर दूर चली गई; एकदम नहसनहस कांड! इसीलिए चाची निलूको 'माछ पातरी' कहती हैं। इस बातमें जो उपहासका संकेत था सो अब नहीं है, किन्तु बात मोटा मोटी रह गई है। उसके बाद चाची बोली,

"देखूं, बारिन्दिरका बेटा, जेबमें नीबू लाया है तो? दे, काटकर रक्खूं।"

वही निलू, वही जरासा हाफ पैन्ट पहने हुए कैप्टन निलू, वही 'माछ पातरी' का निलू, वही दादा कहनेमें तन्मय निलू,—वही क्या मेरे साथ यह व्यवहार कर बैठा? उससे कभी ऐसे व्यवहारकी उमीद मैंने नहीं की। इतना घृणित परिवर्त्तन उसके मनका हो गया! छि!—यह क्या? मैं यह क्या सोच रहा हूं? पैरके जिस घाव पर चोट लगेगी, सोचकर हाथ नहीं देता हूं, हाट—घाटमें, रास्तेमें, भीड़में जिस घावको बड़ी सावधानीसे चोटसे बचाता आया हूं,—घर आकर टेविलपर पैर रखकर आरामसे बैठनेके वक्त क्या उस पर चोट लगी? मनके गहरे घावको मालूम होता है और विस्मृतिके मलहमसे तथा युक्तिके प्रलेपसे छिपाकर रखा नहीं जा सकेगा। नहीं, अगर मैं ही निलूको ठीक नहीं समझूंगा तो बाहरका आदमी कैसे समझेगा? उन दिनों बहुत जगहोंमें गीदड़ोंने गाँवमें उपद्रव किया, उन्हें पकड़कर गाँवके बीच चौराहे पर फाँसी देनेकी व्यवस्था थी। लोग सिर्फ अपनी हानिका ख्याल करके बातको देखते, और उसी दृष्टिकोणसे अनिष्ट करने वालेसे बदला लेते थे। लेकिन मुझे तो निलूकी नजरसे ही सारी घटना देखनी होगी। उस दिन जब निलू मुलाकात करने आया था, इसी कम्बल पर ही तो बैठा था। मेरी ओर साफ दिलसे, स्वाधीन भावसे देख नहीं सकता था। उसके चेहरे पर था अपराधीका संकुचित भाव: क्यों? कहीं गलती जरूर है। नहीं तो उसके संकोचका क्या कारण? विवेकका दंशन या केवल अनुताप? निलू मुझसे कुछ बोलना चाहता था। क्या कहना चाहता था सो भी जानता हूं। लेकिन मैंने उस बातको शुरू करनेकी सुविधा नहीं दी।

देनेसे शायद मेरे संयमका बांध भी टूट जाता। नीलू आया है अपने भाईसे मुलाकात करने, अपने प्रतिद्वन्दी राजनैतिक पार्टीके स्थानीय नेता बिलू बाबूसे नहीं। बड़े भाग्यसे उस दिन उसके सामने मेरे मानसिक द्वन्द्वका आभास नहीं प्रकाशमें आया। थोड़ेसे कुछमें ही मेरे आंसू निकल पड़ते हैं। यही मुझे डर था। लेकिन जो हो किसी तरह मजे-मजेमें 'इण्टरव्यू' कट गया। उसके चले जानेके पहले मैं फूट नहीं पड़ा। और उसकी ओरसे आवेग की बाढ़ मैंने देखी थी। चले जानेके समय दोनों हाथसे मेरे दाहिने हाथको दाबके पकड़ा था—क्षणभरके लिए मूक कंपित हाथोंका वह शीतल स्पर्श अब भी अनुभव कर रहा हूं। मैंने कहा था उसे मांके साथ भेंट करनेको। कौन जाने की कि नहीं। मांके लिए ही डर है। मांका एक लड़का तो, तो भी रहा। आंखे मूंदकर मांके मुखको याद करनेकी कोशिश करता हूं।····

मां भातके साथ जलपाइका अचार खाती है। सामनेके केश काले और सफ़ेद मिले हुए—काले ही अधिक, मांग परके केश बहुत उड़ जानेसे मांग चौड़ी हो गई है; उसके ऊपर चौड़ा करके लगाया हुआ सिन्दूर। उसके पीछे दीख पड़ती है खद्दरकी साड़ीकी लाल पाड़। कान, गला बिल्कुल निराभरण। अर्धनिमीलित आंखोंके कोनेमें बहुतसी रेखाएँ, एक मोटी, बाकी केशकी तरह महीन। नाकके नीचेसे दो रेखाएँ होंठके दोनों कोनों तक पहुँच गई हैं। साफ रंग पर दोनों रेखाएँ खूब गहरी जान पड़ती हैं। मांने दोनों होंठोंको नुकीला बनाया-जीभ चूस रही है, गलेकी नलीका जरा-जरा हिलना ऊपरसे ही मालूम पड़ता है। जीभको तालूसे लगाकर उसने 'टक्' आवाज की! दोनों होंठ खोलने पर दीख पड़ा कि नीचेकी दंत पंक्तिमें

एक दाँत नहीं है। उनके बीचसे लाल जीभ दीख पड़ती है। "तुम लोग उठो न!" किन्तु हम लोग बैठे रहे।

चाचीके भी कई दाँत नीचेकी पाँतीमें नहीं हैं। रहेंगे कैसे? चौबीस घण्टे दाँतके नीचे, होठोंके बीच ढेरसा चूना मिला हुआ जर्दा ठूंसा रहता है। लोग पानके साथ जर्दा खाते हैं; लेकिन सिर्फ जर्दा नियमित रूपसे इतना ज्यादा खाते और किसीको नहीं देखा। चाची अभी क्या कर रही है? आज रात क्या चाचीको नींद आवेगी? क्या जाड़ा, क्या गर्मी, बराबर रातमें तीन बजे उठकर, बिछौने पर बैठकर माला जपती है। नींदसे उठकर लालटेनकी बत्ती जरा तेज कर पासकी खिड़की पर उसे रक्खा। रोशनी जा पड़ती है, दीवालमें टंगी एक राधाकृष्णकी तस्वीर पर। उसके बाद चश्मा आँखोंमें लगाकर इसी ओर देखती हुई चुपचाप बैठती है। कहती है ऐसी ही गुरुदेवकी आज्ञा है। गोल मुंह—माँ एक दिन कहती थी डिब्बेकी ढक्कनके ऐसा! चेहरे पर कई एक चेचकके दाग; ललाट पर एक नीली गोदनेकी बिन्दी; गलेमें कण्ठी। जप करते-करते बीच-बीचमें पासकी खिड़कीसे जर्दाकी पीक फेंकती। और उसी बीच आकाशकी ओर देख लेती है कि सुबह होनेमें और कितनी देर है। इसबार बाहर कूएँमें बाल्टी गिरानेकी आवाज होती है। मुहल्लेका मोदी रामदेव साहू रोज भोरके पहले ही कूएँ पर पानी भरने आता है। यही चाचीकी घड़ी है। "बेली, ओ बेली, आज क्या नहीं उठेगो?" संझली दीदी हड़बड़ाके बिछौना छोड़कर उठ जाती है।

निलूको बचपनमें सुबह ठेलठाल करके उठानेके समय पहले बोलता, "अच्छा नहीं होगा, भैया।" कह कर फिर करवट बदल कर सो रहता।

फिर धक्का देनेसे बोलना "फिर"। उसके बाद कहना "और भी"। और एक दफा धक्का देनेसे कहना "तो भी" इसबार गलेकी आवाज जरा जोरदार। उसके बाद घुनघुनाते हुए उठ बैठना। माँ कहती "बस सुबह उठ कर ही साँपका मन्तर झाड़ना शुरु हुआ।" निलूका चेहरा याद करनेकी कोशिश करता हूं। किसी तरह भी याद नहीं आता! जब तब निलूका चेहरा आंखोंके आगे आ जाता है, लेकिन अभी क्या और याद आवेगा? याद करना चाहता हूं निलूका चेहरा—और मनमें आ जाता है गनौरी महतोका चेहरा—खल्वाट सिर, दबी हुई नाक, बुलडागकी तरह मुँह, एक कानके ऊपरी हिस्सेमें छेद किया हुआ और एक सोनेकी बाली पहने हुए।....

देह सिहर उठती है। भोरकी हवा काफी ठण्डी है। यहाँ दो घण्टे तक सेल ठण्डा रहेगा। पागलने चिल्लाना शुरु किया। तीन नम्बरने कब भजन शुरु किया, पहले खयाल नहीं किया।

पीपल गाछके कौवे एकबार का-का करके चुप हो गए। मालूम होता है समझ गया कि अभी सुबह नहीं हुई, समय गिननेमें जरा भूल हो गई, इसलिए कुछ पहले ही बोल गए। और कितनीसी मेरी मियाद। अभी एक क्षणकी कीमत मेरे लिए कितनी है। सिनेमा होता तो शायद दिखाता—एक बालूकी घड़ी; डमरूकी तरह। ऊपरकी कटोरीके बालू खत्म हो चले हैं, लेकिन टिप-टिप करके लगातार बालूके कण नीचे गिर रहे हैं। एक पलका भी विराम नहीं।....अथवा दिखाता कि दीपका तेल चुक रहा है।... या शायद घड़ीका काँटा चल रहा है।....मेरी घड़ी भी अपने अनुसार उसी बँधे नियमसे चलती है—ठण्डी हवा, पागलका चिल्लाना, तीन नम्बरका भजन;—बाकी केवल आकाशका जरा साफ होना। शुक्र तारा पहचान

सकता हूं। और सबसे रूढ़ वास्तव—मेरे वार्डर साहब सेलके आँगनके चहबच्चे पर बैठे ऊँघ रहे हैं।....

अभी बिलू है, कुछ देर बाद नहीं रहेगा।—रक्त मांससे बना, सुख दुःखसे भरा हुआ बिलू कहके कुछ नहीं; मैं सरकारी स्टाटिस्टिक्स (आंकड़ा) की एक संख्या मात्र। असंख्य संख्याके बीच एककी कमी या बढ़तीसे क्या आता जाता है? वैज्ञानिक लोग 'पैरेलेक्स या इन्स्ट्रुमेन्टल एरर' के लिए (दृष्टि विभ्रम या यन्त्र जनित भूल) सैकड़ेमें कुछ संख्या तो छोड़ ही देते हैं। व्यवसायमें 'झड़ती पड़ती' कह कर भी तो एक चीज है। मैं शायद इसीमें पड़ूँ। हो सकता है भारत सरकारके हिसाबके वक्त, मैं—पूर्णियाँ जेलका ११०९ नम्बर फाँसीका आसामी—फाँसीके सैकड़ेमें एक दशवाँ हिस्सा बढ़ा दूँगा। सरकारी रिपोर्टका इतनी सी छापेकी रोशनाईका खर्च! यही मेरे जीवनका मूल्य राष्ट्रीय इतिहासमें बिलू बाबूका दान!

बैल गाड़ीके चक्केमें जैसा 'कँच-कँच', शब्द होता है, वैसी ही एक आवाज हुई। मालूम होता है वार्डके दरवाजेको खोलनेकी आवाज है। तो क्या....? ठीक ही वही। जो सोचा है, वही। सिमेन्टसे बने हुए सेलके आँगनमें एक साथ असंख्य जूतोंकी आवाज होती है। बहुत लोग आ रहे हैं। सुना था एक दल सैनिकोंके पैरकी आवाजकी प्रतिध्वनिसे एक पुल गिर सकता है। सचमुच, कितने जोरकी आवाज होती है। इस पदध्वनिके साथ हृदयके भीतर धक्-धक् होता है। हृदयके कम्पनकी आवाज साफ सुन पा रहा हूं। रास मोहन ढोल बजानेवाला किसी नवमी पूजाकी रातमें भी शायद ऐसे शब्दके स्पन्दनको तरङ्गायित कर नहीं सकता है। सारी देह काँपती है। जोर-जोरसे श्वास चल रही है। आँखोंके सामने जैसे

किसी चीजका पर्दा पड़ गया है। सिरमें जैसे ठण्डा और खाली मालूम होता है।—एक बार मेरे दाहिने हाथकी अँगुली साइकिलके 'स्पोक' में पड़ कर कट गई थी। खून बन्द नहीं होता था। उस वक्त खून देख कर माथा ऐसा ही झनझना गया था।—ललाट पर और नाकके नीचे बूँद-बूँद पसीना दीख पड़ता है। न जाने क्यों खड़े होनेकी ख्वाहिश हुई। सींखचा पकड़ कर खड़े होनेकी कोशिश की। हाथ-पैर जोरोंसे काँप रहे है, खड़ा हो न सका; पैरकी तरफ जैसे लकवा मार गया। उस दफा 'टाइफ्वायड' के बाद पहलेपहल खाटसे उतरने पर ऐसा ही मालूम पड़ता था। वार्डरने खड़ा होकर अपनी पगड़ी ठीक कर ली। पागल चिल्ला रहा है। तीन नम्बरने गाना बन्द नहीं किया। जूतेकी आवाज नजदीक आ रही है।—और भी-और भी। पेटके नीचे जैसे खाली हो गया है, मालूम होता है पेटके भीतर बरफकी तरह ठण्डा है। एकबार 'कार्निवल' में कठघोड़े पर झूलनेके समय, चक्का जिस वक्त ऊपरसे नीचे आने लगा, उस वक्त पेटके नीचेमें वैसा ही मालूम पड़ता था। जीभ सूखकर कद्दूकशकी तरह खुरदरी हो गई है, और जैसे गलेमें घुसी जा रही है।

सरस्वती! माँ! चाची! निलू! निलू तूने यह क्या किया? लोहेके (Horizontal bar) में मेरा असार मृत शरीर झूल रहा है। दोनों पैर शून्यमें झूल रहे हैं—उत्तर, उतर पूर्व, पूर्व, पूर्व दक्षिण, दक्षिण।

यह क्या? बूटकी आवाज और मेरी तरफ बढ़ती नहीं आ रही है। मेरा वार्डर झाँककर वार्डके आँगनकी ओर देखता है। अचानक तीन नम्बरका गाना बन्द हो गया। मेरी सुननेकी ताकत भी क्या मानसिक

उद्वेगसे अचानक लुप्त हो गई। नहीं। गूँगेकी बोलनेकी कोशिशकी तरह एक आवाज कानोंमें आ पहुँची। अति करुण, कातर, असहाय आर्त्तनाद!

कौन? क्यों?........

अब! अब—सिर्फ अगणित जूतोंकी आवाज ही नहीं—गौरीशृङ्गकी चोटी टूट कर गिर रही है—कालवैशाखीका उग्र मतवालापन—फिर आर्त्तनाद—घनघटाच्छन्न आकाशका हृदय चीरनेवाला आर्त्तनाद—"हुशियारीसे"—पाँवके नीचेकी धरती फटकर चौफांक हो गई—नीचे-नीचे—अतल अन्धकारमें।

"सामने बत्ती दिखाओ"—कुछ विकृताङ्ग प्रेतकी छाया क्रम-क्रमसे छोटी होकर लालटेनकी रोशनीमें मिल गई। लालटेन सब इस ओर बढ़ती आ रही हैं—हजार ग्रह-उपग्रह अपनी निर्दिष्ट राह छोड़कर मेरी ओर तेजीसे चले आ रहे हैं। प्रत्येक लोम कूपमें प्रत्याशित आतंकका सिहरन—प्रत्येक स्नायुमें 'टाइफून' का विक्षोभ—यह हलचल आँखोंसे फूटकर निकलना चाहती है।—तुमुल वात्याविक्षोभमें अब मालूम होता है, खड़ा नहीं रहा जा सकता। ....मजबूत मुट्ठीसे सींखचेको जकड़ कर धर लिया है।

# अपर डिविजन वार्ड

## ( पिताजी )

*

# अपर डिविजन वार्ड

"राष्ट्र गगनकी दिव्य ज्योति राष्ट्रीय पताका नमो नमः" ···साँझका कीर्त्तन और गीत समाप्त हुआ। वार्डर दरवाजा बन्द करता है, और अपने-आप बकता जा रहा है। श्रोता—पासमें खड़ा और एक वार्डर।

"एक बाबू यहाँ तो और एक बाबू वहाँ! एक आदमीको बुलाके घरमें घुसाता हूं तो और एक आदमी देखता हूं—बाहर हो गया है! कोई पैखानेमें जाकर बैठे हैं; कोई पूजा पर बैठे हैं, कोई बोले, एक मिनट सिपाहीजी; कोई बोले ताशका यह हाथ खतम हो जाय सिपाही साहब। फूदन बाबूकी चहलकदमी तो खत्म ही नहीं हो रही है; देख रहे हैं कि दरवाजा बन्द करनेके लिए खड़ा हूं, तो भी भीतर जानेका नाम नहीं। हजम करनेके लिए अगर इतना टहलना जरूरी है, तो थोड़ा कम खानेसे ही तो हो जाय। घरमें जो खाते होंगे सो जानता हूं। यहाँ अपर डिविजन मिला है इसलिए क्या पेटमें हवा-पानीके लिए भी थोड़ी जगह खाली रखनेकी नहीं है?"

मेहरचन्दजी ही "राष्ट्रगगनकी" गानेका सुर जानते हैं। हम लोग सिर्फ उसके साथ सुर मिलाते हैं। यहाँ इस गीतका नाम है "प्रार्थना"।

प्रार्थनाके पहले लालटेनोंको कमकर दिया जाता है। रोज वे गानेकी एक पंक्ति भूल जाते हैं। उसी समय लालटेनकी बत्ती जरा तेज करके पाकेटसे निकालते हैं, 'आश्रम भजनावली'। इतने दिनोंसे गाते हैं। उनके छूटनेका समय आ गया है, लेकिन अब भी उन्हें यह पंक्ति याद नहीं हुई। बहुतसे लोगोंको याद हो गई है, लेकिन सभी मजा लेना चाहते हैं। मेहरचन्दजी नहीं समझते हैं कि, जभी इस गीनके बीच यह पंक्ति आती है और वे लालटेन लेनेके लिए हाथ बढ़ाते हैं, तो एक दबीं हँसीसे सारा घर भर जाता है। मैंने एक दिन पंक्ति याद करा देनेकी चेष्टा की। देखा कि उन्हें यह पसन्द नहीं आया। इसीलिए और कुछ नहीं बोलता हूं।....

यह अच्छा इन्तजाम हुआ है। 'लॉकअप'के साथ-साथ प्रार्थना और भजन समाप्त होते हैं। पहले दरवाजा बन्द होने पर प्रार्थना शुरू की जाती थी। लेकिन देखा कि सोशलिस्ट पार्टीके बहुतसे लोग इसे पसन्द नहीं करते हैं। इस दलके ब्रह्मदेव और शिवपूजनने एक दिन प्रार्थनाके समय होड़ लगा कर बेसुरी आवाजमें दूसरा गाना शुरू कर दिया। वे लोग हम लोगोंके गीतसे इतना चिढ़ते हैं, यह पहले मैं समझ नहीं सका था। उस दिनसे कह सुनकर प्रार्थनाका समय पहले कर दिया, जिससे 'लोकअप'के पहले ही गीत समाप्त हो जाय। मेहरचन्द, सदाशिव, ये लोग किसी तरह भी राजी नहीं होते थे। वे लोग कहते थे, "हम लोग क्यों छोटे होंगे? वे लोग जो रात बारह बजे तक नाकके सामने बीड़ीका धूआँ छोड़ते हैं, लछमी कान्तके मार्क्स क्लासके लेकचरके मारे जो हम लोगोंको सोनेका उपाय नहीं रहता है,— "हम लोग क्या कुछ बोलते हैं? आप, मास्टर साहब, हम लोगोंसे अनुरोध मत कीजिए। उन लोगोंको ठण्डा करनेके लिए ज्यादा तकलीफ उठानेकी

जरूरत नहीं होगी।" कितना समझाया। "जो करनेसे उन लोगोंको सचमुच असुविधा होती है, वह हम लोग करेंगे क्यों? उनकी जो इच्छा हो करें, हम अपनी तरफसे कर्त्तव्यमें त्रुटि क्यों होने दें? वे लोग लड़के हैं। तुम लोगोंका आदर्श महात्माजीका दिखलाया हुआ रास्ता है। वह कितना ऊँचा है। उससे तुम लोग गिरोगे क्यों।" इस तरह कितना समझाने पर, मनमें सन्तुष्ट नहीं होने पर भी, मेरी बात उन्होंने मान ली है। उस दिनसे दरवाजा बन्द होनेके पहले ही हम लोग सन्ध्या की प्रार्थना समाप्त कर लेते हैं। अभी तक वे लोग बिल्कुल बच्चे हैं। स्कूल कालेजके लड़के। 'वाली बाल' खेलनेके समय उस दिन देखा कामरेड माधोराम, कामरेड मुरली मिसरकी छाती पर बैठकर उसका गला दबा रखा है। खाने पीनेको लेकर अब भी वे लोग रोज रसोईके मैनेजरसे झगड़ा करते हैं। आज इसके साथ उसकी बातचीत बन्द, कल उसके साथ इसका झगड़ा यह सब तो रोज लगा ही रहता है। ये सब एकदम लड़के हैं। और उन्हीं लोगोंके दोषगुणका ख्याल करें हम लोग। तीन पन तो बीता एक पन रह गया—अब भी हम लोग अपने मनको वृत्तियोंको संयत नहीं कर पाते हैं। और वे लोग तो लड़के ही ठहरे। उन लोगोंकी भूलें, गलतियोंकी आन अगर हम लोग मानें तो हम लोगोंका इस राहमें आना ही बेकार है। बिलु भी तो इसी दलका मेम्बर है—उनमें हरेक लड़का मेरे सामने तो बिलूके समान है। ·······

कमसे-कम आज रातमें भी अगर बिलूके नजदीक रह सकता। नहीं, एक साथ नहीं रहना ही ठीक हुआ है। ऐसा होनेसे शायद दोनों आदमी ही टूट जाते।—तब आखिरी वक्त तक बातें तो कर सकते।···शायद ढूँढ़ने

पर बात ही नहीं मिलतीं। लड़के लोग तो कभी मेरे साथ निहायत कामकी बात छोड़कर और बातें करते ही नहीं। मेरे सामने आनेसे ही देखता हूं बिलू सकुचा जाता है,—कैसा सिटपिटाया हुआ लगता है। तेजी उसमें सदासे ही कुछ कम रही। वह हमेशा शर्मीला रहा। लेकिन वह दोष तो मेरे शिक्षा देनेका है। उन लोगोंको जैसा बना कर तैयार किया है, वे लोग वैसे ही बनके खड़े हैं। अगर शिक्षाकी त्रुटिसे ही उसका स्वभाव ऐसा होगा, तो निलूका स्वभाव ऐसा क्यों नहीं हुआ? हो सकता है कि बिलूको अंग्रेजी कालेजमें नहीं पढ़ाया इसलिए उसमें एक inferiority complex है। निलूने कालेजमें पढ़ा है, इसीलिए मालूम होता है निलूके मनमें यह भाव नहीं है। लड़कोंके बाहरके व्यवहारकी बात नहीं कह सकता, तब मेरे आगे उनके बीच जो व्यवधान है, उसके लिए मैं ही जवाबदेह हूं। किसी दिन उसके साथ दिल खोल मिला नहीं। गोदमें लेकर कभी दुलार नहीं किया। मेरा ख्याल था कि लड़कोंके साथ दोस्ती करनेसे उनके ऊपर शासन करना मुश्किल है। उनके साथ कम बातें करो, वे लोग डर और आदरके साथ व्यवहार करेंगे; उनके साथ ऐसा नहीं करनेसे वे माथे पर चढ़के बैठेंगे। इसके बारेमें मैंने और किसीकी बात कभी नहीं मानी। मैं स्कूल मास्टर था। अभ्यासके दोषसे हो या और किसी कारणसे हो, संसारके सभी क्षेत्रोंमें यही शिक्षक-छात्रका सम्बन्ध देख पाया हूं। इसलिए राजनितिके क्षेत्रमें भी बड़ेको गुरु समझता हूं, छोटेको शिष्यकी निगाहसे देखता हूं। कामरेड कभी हो न सका।....जितेन जब छोटा था, चौबीस घण्टे यद्दा' के साथ-साथ रहना। पिताकी मोटी लाठी हाथमें लेकर उसके आगे-आगे चलना—हाट-बाजारमें, भोजमें, सब जगह। उन दिनों

पिताके साथ हम लोगोंकी साँझकी बैठकमें आकर मेरे साथ भी खूब परिचित हो चुका था। दूसरेके लड़केको दुलार करना, उसके लिए 'लाजेन्ज' लाकर जेबमें रखना, अपने लड़कोंके साथ व्यवहारकी यह विभिन्नता, बिलूकी माँको भी अच्छी नहीं लगती थी। बिलूकी माँ ज्यादा नहीं बोलती है। उसको भी एक दिन मुँह खोलकर बोलते सुना था, "अपने लड़कोंकी ओर भी जरा फिरके देखो।" थोड़ा हँसकर उस दिन मैंने मनकी झेंप मिटा ली थी। लेकिन तबसे अगर लड़कोंके साथ जरा मिलने-जुलनेका रिश्ता रखता तो आज उनके साथ स्नेह-प्यारका सम्बन्ध होता, डर और आदरका नहीं। निलू-बिलूका प्यार-दुलार जो कुछ है सब माँके साथ। एक साथ खानेके लिए बैठना, मनकी बातें कहना, बचपनकी तरह अब भी सब ज्योंका त्यों है।....लड़कोंका नाम याद करने पर मनमें निलू-बिलू आते हैं—पहले निलू, उसके बाद बिलू। बिलू उम्रमें बड़ा है लेकिन पहले बिलूका नाम मनमें नहीं आता है। ठीक कार्त्तिक गणेशकी तरह। सब कामके आरम्भमें गणेशका नाम है। लेकिन पहले गणेश, उसके बाद कार्त्तिक कहो तो ;—गणेश कार्त्तिक नाम दोनों जैसे एक साँसमें उच्चारण किए ही नहीं जा सकते।....

सदाशिव मेरी मशहरी लगा देनेके लिए आया है। शायद सोचता है मैं जप पर बैठूँगा। मच्छड़ोंके मारे, मशहरीके बाहर पूजा पर बैठना मुश्किल है। मच्छड़ काटनेसे मनकी एकाग्रता नष्ट हो जाती है। रातमें सोनेके वक्त मशहरी इस्तेमाल नहीं करता हूं। शरीरको जितना सहाओ उतना सहेगा। मच्छड़का काटना बर्दाश्त करनेकी ताकत न हो, इतनी कष्ट साधना करनेकी क्षमता न हो, तो बड़े काम हम लोगोंसे कैसे होंगे? बिलूको तो मशहरी नहीं रहनेसे बड़ी असुविधा होती है। इशारेसे उसे

मशहरी गिरानेसे रोकता हूं। आज सोमवार है। मेरा मौनव्रत है। महात्माजी आत्माकी शुद्धिके लिये करते हैं। वे जिस कामको अच्छा समझते हैं उसे क्या हम लोग नहीं कर सकते हैं। दूसरे-दूसरे सोमवारकी संध्याके पहले पूजा करके उपवास तोड़ता हूं। खानेके बाद बात करता हूं। इसी ख्यालसे ही सदाशिव मेरी पूजाकी व्यवस्था करने आया है। बड़ा अच्छा लड़का है, सदाशिव—सचमुच सदाशिव है। कई एक साल पहले "वस्त्र-स्वावलम्बी" प्रतिज्ञा-पत्रमें उसने नाम लिखाया है और तबसे रोज कमसे कम एक हज़ार गज सूता कातता है।......

अपर डिविजन वार्ड। बहुत बड़ा हाल। अभी चौंतीस कैदी इस घरमें रहते हैं; उन्नीस नजरबन्द और १५ राजबन्दी,—जिन्हें सजा हुई है, या जिनके खिलाफ मुकदमा चल रहा है। बीचके दरवाजेके पास मेरी जगह है। घरके बीचसे आने-जानेका रास्ता है और उसके दोनों तरफ दीवालमें सटी हुई चौकियोंकी पांती। उनमें जालीदार मशहरियाँ टगी हुई हैं। हरेक चौकीके पास एक टेबुल, एक कुर्सी और एक किताबोंका 'शेल्फ'। अधिकतर चौकियोंके पास सहन पर कम्बल बिछा हुआ है। टेबिल पर एक टेबिल-क्लाथ। उसके ऊपर है आइना, कंघी और भी क्या-क्या। लोहेका सींखचा, ताला-चाबी और वार्डरका चेहरा नहीं दिखलाई पड़नेसे इसे जेल समझनेका उपाय नहीं है, ठीक जैसे कालेजके लड़कोंके रहनेका होष्टल। गत अगस्त महीनेमें हरिहरजी और उसके बूढ़े बापको 'अण्डर ट्रायल' (विचाराधीन कैदी) के रूपमें यहाँ ला रक्खा था; उस समय हरिहरके बापने समझा था कि पुलिस वाले उसे एक धर्मशालामें लाये हैं। पीछे जेल ले जायेंगे। बूढ़ेने एक बार अपने लड़के को पूछा भी था कि उसे कब जेल ले जाया

जायगा। उसे पुलिसने कई दिन बाद छोड़ दिया। १९२१-२२ में जब जेलमें आया, उस समयके जेल और अभीके जेलमें आकाश-पातालका फर्क है। उस बार साधारण कैदीकी श्रेणीमें था। हरेक कैदीको काम करना पड़ता था। "सरकार सलाम" को लेकर कितना गोलमाल होता था। कहीं जा रहे हो—अचानक मेटकी कर्कश आवाज कानोंमें आती "जोड़ा फायल बाँधके चलो"। पैखाना जानेके वक्त भी इसी तरह लाईन बाँधके जाना पड़ेगा। सबके हाथमें एक-एक लोहेका बर्त्तन। खाना-पीना नहाना सब काम इसी वर्त्तनसे चलाना पड़ता था। बात-बात में "डण्डा बेड़ी", "खड़ा हथकड़ी", "चट्टी पहनाओ" वगैरह सजा। उसके साथ आजकी अवस्थाकी तुलना हो सकती है? चलना-फिरना, खाना-पीना, रहनेके सम्बन्धमें हरेक मामूली अधिकार पानेके पीछे कितना त्याग है, कितना संघर्ष, कितने विस्मृत शहीदोंका आत्म-बलिदान। किन्तु इनका न्याय आश्चर्यजनक है। मुझे दिया अपर डिविजन, मेरी स्त्रीको दिया अपर डिविजन और हमारे लड़के निलको डिविजन थ्री।........

चरखा लेकर बैठा जाय। मनके उद्वेगको शान्त करनेके लिये और कोई ऐसी चीज नहीं है। कुछ देर तक एकाग्रमनसे चरखा कातनेसे, देखा है, स्नायुकी उत्तेजना धीरे-धीरे शान्त हो जाती है। डाक्टर लोग हँसें, सोशलिस्ट लोग अविश्वास करें, मुझे तो इसका प्रत्यक्ष अनुभव है। चरखा लेकर उसे खोलकर बैठा। सदाशिव जैसे कुछ बोलना चाहता है। नहीं तो खड़ा क्यों रहेगा? आंखोंके इशारेसे पूछा "क्या?" वह डरते-डरते बोला—"हम लोग कई आदमी अभी सूत्रयज्ञमें बैठना चाहते हैं। आपको इससे कुछ असुविधा तो नहीं होगी?" इशारेसे ही उसे कहता हूं

"बैठो।" आजकलके लड़के इतनी 'फार्मैलिटी' का व्यवहार करते हैं। आश्चर्य! एक साथ बैठकर चरखा कातेंगे यह तो खुशीकी बात है। तुम लोगोंकी ऐसी सुबुद्धि हो तो बच जाऊँ। इसमें फिर मेरे मतामत लेनेकी क्या बात है? मैं तो यही चाहता ही हूं। डर तो तुम्हीं लोगों के लिये है। सोशलिस्ट लोग तुम लोगोंको अपने दलके सदस्य बनानेके लिये हमेशा देखता हूं घात लगाए बैठे हैं। तुम लोगों पर अब भरोसा कहाँ?······संध्याकी तरह प्रातःकालमें भी प्रार्थना करनेके प्रस्तावको उठाकर उस दिन कितना झेंपना पड़ा था। मेहरचन्द तकको भी, मेरी आड़ लेकर हँसी करते सुना, दश आने खुराकी में दोनों समय प्रार्थना करना पार नहीं लगता है। खुराकी सवा रुपया करवा दें तो दोनों समय सामूहिक प्रार्थना करूँगा। चीजें महंगी होनेके कारण सुनता हूं जल्द ही बारह आने करके 'खुराकी' होगी। बढ़ने पर हफ्तेमें एक दिन सुबहमें प्रार्थना कर सकता हूं। बोलता है, और टि-टि करके हँसता है। प्रार्थना नहीं करना चाहते हो, मत करो। लेकिन प्रार्थना की बात लेकर हँसी-ठट्ठा करनेमें लाज भी नहीं आती! तुम लोग हुए गांधीजीके शिष्य, सत्याग्रही; तुम लोग तो नास्तिक नहीं हो। तुम लोग भी अगर इसके बारेमें हँसी-ठट्ठा करो तो सोशलिस्ट लोगोंके मनमें जो आता है बोलते हैं तब उन पर दोष कैसे दूँ?

सदाशिव और मेहरचन्दने पाँतीसे कम्बल बिछा दिये। मेरी जगह है वार्डके ठीक बीचमें। घरमें घुसने पर, बाईं ओर रहता है महात्माजीके भक्तोंका दल अर्थात् कांग्रेसके बहुमत-पन्थी। इन लोगोंके अलावे उस तरफ एक कम्यूनिस्ट रहते हैं, एक किसान सभाके सदस्य। इन दोनोंको सरकारने क्यों रोक रक्खा है, यह वे लोग भी नहीं जानते; ये लोग तो

जी-जानसे वर्त्तमान युद्धमें सरकारका साथ देना चाहते हैं, घरकी दाहिनी ओर रहते हैं सोशलिस्ट और फारवर्ड ब्लाकके सदस्य। बीचमें मैं 'बफर' (Buffer)। जगहोंका यह इन्तजाम जेलकी ओरसे नहीं किया गया है। अपनी सुविधा के अनुसार बहुत दिनोंकी अदल-बदलके फलस्वरूप यह हालत है। मेरी जगहके पास ही वार्डमें घुसनेका दरवाजा है। दरवाजेके सामने एक जगह एकदम खाली है। यह जगह एक तो रास्ते पर पड़ती है, तिसपर ठीक इसके उपर कबूतरोंका घोंसला है। इसीलिए यहां पर कोई सीट नही है। यहीं पर कम्बल बिछाकर सभी चरखे लाकर बैठे; रामचन्द्र, विसुनदेव, हरिहर, रामदेनी, सदाशिव, रामशरण, भूषण प्रसाद, रामलोचन, मेहरचन्द। अधिकांश लोगोंके नामके बहले 'राम' देखता हूं। रामदेनीको छोड़कर और लोगोंके सामने यरवदा-चक्र है। और रामदेनीने जेलमें आकर चरखा कातना सीखा है, "छूट" के लोभसे। थाना पर आक्रमण और खासमहाल कचहरी जलानेके अपराधमें बेचारेको बारह बरसकी सजा हुई है। उसने जेलसे चरखा कातनेका काम पाया है। इसीलिए उसके सामने जेलका दिया हुआ विशाल "बिहार चरखा" है। दो आदमीकी जगह घेरे हुए है। रामदेनीने जिस दिन पहले-पहल सुपरिण्टेण्डेण्टको कहा कि मैं जेलका काम करनेके लिए तैयार हूं, उसे काम दिया जाय, उस दिन सबने उसका वहिष्कार करनेकी बात उठाई थी। राजबन्दी भी काम करेगा! देखता हूं कुछ दिनोंसे फिर सब उसके साथ बात-चीत करने लगे हैं। उन लोगोंके चरखा लेकर बैठते ही, दाहिनी ओरको सीट परसे चरखेकी आवाजकी नकल करते हुए एक आदमीने मुंहसे आवाज निकालना शुरू किया—घुंइ-घुइ-कं और दो-तीन आदमी हँसने लगे। सुखलाल नहीं तो और कौन होगा? नहीं, सुखलाल

नहीं, कामरेड सुखलाल ; धत्- याद भी नहीं रहता है। खूब नकल और 'कैरिकेचर' दिखा सकता है छोकरा।

दो लालटेनोंमें इतने आदमियोंके सूता कातने लायक रोशनी क्या होती है ? लेकिन और रोशनी कहाँसे मिलेगी ? लड़ाईकी वजहसे किराशन तेल कमा दिया गया है। हरेक आदमीके लिए शायद एक चौठी भर तेल देता है। इसलिए कई आदमी मिल करके एक-एक लालटेन जलाते हैं। वार्डके बाहर बिजलीकी रोशनी जलती है। वार्डरके भीतर कई लालटेनोंकी रोशनीका इन्तजाम कर देनेसे क्या होता ? सरकार क्या सोचती है, समझ नहीं पाता हूं। उन लोगोंको डर है कि बिजलीकी रोशनी देनेसे कैदियोंको आत्महत्या करनेमें सुविधा होगी। जैसे सभी आत्महत्या करनेके लिए व्याकुल हैं ! इसीलिए जेलके जितने पुराने कूएँ हैं, सबको काठके तख्तोंसे मजबूत तरीकेसे छा दिया गया है। नजीरकी कमी नहीं है ; कभी कोई आसामी कूएँमें कूद पड़ा था। यही तो उस दिन कई आदमियोंको 'बैसिलरी डिसेन्ट्री' होनेके बाद, मैंने डाक्टरसे कहा था कि हम लोगोंके वार्डमें एक बोतल इलेक्ट्रोलिटिक क्लोरिन देनेसे, पीनेके पानीमें जिसमें सभी वही व्यवहार करें, इसीकी व्यवस्था मैं कर सकता हूं। डाक्टर बाबूने हाथ जोड़कर मुझसे कहा, "माफ कीजिएगा महाशय, ऐसा अनुरोध मत कीजिए। पेन्शन पानेमें और सिर्फ तीन बरसकी देरी है। इसी बीच दो बार डिपार्टमेन्टल एक्शन हो चुका है। एक बार एक आदमीने मालिशकी दवा एक शीशी खाली थी ; और एक आदमीने फिनाइल खाली थी। मुझसे जवाब तलब किया गया था, इतना फिनाइल एकदफा किसी कैदीको कैसे मिल सकता है ? जैसे 'सफाइया' ( मेहतर ) कैदीसे कोई

फिनाइल ले ही नहीं सकता है। इस डिपार्टमेन्टका क्या कोई माँ-बाप है महाशय ?"........

एक साथ बहुत चरखोंकी बहुत किस्मकी आवाज सुननेमें बड़ी अच्छी लगती है। बहुत ऊँचेसे जैसे हवाई जहाज उड़ता हुआ चला जा रहा है। याद दिला देती है कि सोनेके भारतको बनानेकी राहमें मैं अकेला राही नहीं हूं। यह तो सिर्फ इतने गज इतने हाथ सूत कातना ही सिर्फ नहीं है। अभी तो चरखेकी प्राण-प्रतिष्ठा की गई है। यह राम-राज्य लौटा लानेका एकमात्र अत्र है। प्रेमका राज्य होगा, गौराङ्गका राज्य; लोग हिंसा-द्वेष भूल जायँगे। परिश्रम करो, सुखसे खाओ, पिओ, रहो, किसी चीजकी कमी नहीं है। हरेकके गोहालमें गाय, बखार (ठेक) में धान, जितने गज सूत कातेगा, उतना ही लक्ष्यके निकट पहुंचेगा। एक आदमी दूसरे आदमीकी सहायता करता है, धनी दरिद्रको अपना धन बाँट देता है। गाँव सब अपनी आवश्यकताओंके लिए बाहरकी तरफ नहीं ताकते हैं। दरिद्रको चूसनेका रास्ता बन्द। किसीका कोई मुहताज ही नहीं तो शोषण कैसे करेगा।...सूत्रयज्ञ याद दिला देता है कि मेरी तरह और भी लोग सोचते हैं। दलके दल राजनैतिक कार्यकर्त्ता लोग हम लोगोंके 'मतवाद' को छोड़कर चले जा रहे हैं। समझो या न समझो, मानो, सोशलिस्ट होना भी एक फैशन हो गया है। तिलू-बिलूकी बात ही ले लो। यही तो १९३०-३२ में कितना चरखा कातना, कितने किस्मकी बात! इस तरह वे लोग बन चुके थे कि मैंने कभी सोचा नहीं कि यह उच्च आदर्श वे लोग किसी दिन छोड़ सकेंगे। जो लोग अब भी मेरे मतावलम्बी हैं, उन लोगोंके चले जाने पर शायद मेरे ही मनमें सन्देह होगा कि मेरा पथ ठीक है तो? अपने देशके वेद पुराण ऋषि-मुनि, इतिहास सब गए—

सबकी नजर रूस पर लगी है ! अरे, रूस क्या अपने देशसे भी ऊँचा है ? देश-विदेशके इतिहासकी बात हम लोगोंने भी पढ़ी थी। मैजिनी, गैरीवाल्डी, वाशिंगटन, कोसुथकी अमर कहानी हम लोगोंको भी रोमाञ्चित कर देती थी। उन लोगोंकी कीर्त्तिकी प्रेरणाने ही तो हम लोगोंको छात्रावस्थामें अनुप्राणित किया था। लेकिन इसीलिए हम लोग शिवाजीकी गौरव-कथा तो भूल नहीं गये : विवेकानन्दकी वाणी छोड़कर मार्क्सकी बोलीके फन्देमें नहीं पड़े। महात्माजीकी अपेक्षा स्टालिनको बड़ा नहीं समझ सके। विदेशी विद्वानोंकी लिखी चीजें पढ़ोगे क्यों नहीं, पढ़ो। हम लोगोंने क्या बेन्थम, स्पेन्सर, मिल नहीं पढ़े ? लेकिन इसीलिए क्या अपनी बात एकदम भूल जाना होगा ? बिलूने जिस समय पहले-पहल काँग्रेस सोशलिस्ट पार्टीमें योगदान किया था, उसी समय समझानेकी कोशिश करता तो शायद आज ऐसा नहीं होता। और बिलूको शासन करनेसे निलू भी हाथसे निकल नहीं सकता। कान खींचनेसे सिर भी आता है। भाई जो करेगा, उसे भी सभी बातें नकल करना ही चाहिए, वह चाहे अच्छी हो या बुरी—समझे या नहीं समझे। लेकिन जबर्दस्ती क्या किसीको किसी मतमें रक्खा जा सकता है—और खास कर उन लोगोंको जो एकदम बुद्धि हीन नहीं हैं। बिलू उम्रवाला लड़का हुआ—और उसे शासन करने जाऊँ ? और किस लिए ?—यह कि मेरे मतसे उसका मत नहीं मिलता है इसी लिए ? उसके व्यक्तित्वकी इतनी मर्यादा, उसके स्वाधीन विचारका इतना सम्मान अगर मैं नहीं रख सकूँ तो हम लोगोंके पथका संयम और सहनशीलता रही कहाँ ? वे लोग तो अबोध नहीं हैं। मैं जो सब बातें उन लोगोंको समझा सकता, उन्हें क्या उन लोगोंने स्वयं विचार कर नहीं देखा होगा ? वे लोग मेरे मनकी आबोहवामें राजनैतिक

आश्रममें आदमी बने हैं। वे लोग इस विषयके सूक्ष्मसे भी सूक्ष्म भेदको जानते हैं। इन सब बातोंकी आलोचना, कितनी दफे कितनी जगहोंमें सुनी है। बिलू तो तीन महीने तक साबरमती आश्रममें भी था। महात्माजीके चरणोंकी धूल लेनेका सौभाग्य निलू बिलू दोनोंको प्राप्त है। उन्होंने पूर्णियाँ आश्रममें महात्माजीके साथ फोटो भी खिंचवाया है। थोड़े दिनका ही सही तो भी ऐसे महात्माके ससर्गमें आकर भी उनका प्रभाव जिन पर नहीं पड़ा—वहाँ मेरा कुछ करना ढिठाई है। और, मैं सरकारी स्कूलकी हेड मास्टरी छोड़ कर जब राजनीतिके क्षेत्रमें आया तब क्या किसीकी बात सुनता था? दुनियाँ भरके लोगोंने मना किया था। डि० पि० आइ० ने मेरे इस्तीफेकी दरखास्तको रोक कर मुझे बुलवाया था, समझानेके लिए। पटनेमें साहबकी कोठीमें साहबसे भेंट करने गया; देखा साहबका 'बेयरा' तक मेरे इस्तीफाकी बात जानता है। और दफे भेंट करनेके लिए कार्ड देनेके समय बेयराकी खुशामद करनी पड़ती थी, बखशीश देना होता था। अर्दली कैसा एक उदासीन भाव दिखाता था। और उस दिन देखा, झुकके पाँवकी धूल ली। "मास्टर साहब सुनते हैं स्वराजीमें शरीक हुए हैं।" मुझे प्रणाम करके, मेरी कौनसी सेवा कर सकता है। पूछ कर, कृतज्ञतासे उसका चेहरा खिल उठा था। बोल उठा "मेरे मनमें भी होता है कि स्वराजीमें जाकर आप लोगोंकी कुछ सेवा करूँ। लड़का अगले साल मिडिल इम्तिहान देगा। उसके बाद साहबको कहके उसको कोई नौकरी लगा दूँगा। उसके बाद मैं भी स्वराजीमें जाऊँगा।" मैं डि० पि० आइ० की नेक नजरमें था। बी० टी० पढ़नेके समय वे हम लोगोंके कालेजके प्रिंसपल थे। साहबने हाथ पकड़ कर बैठाया, गुरु शिष्यके ढंगसे ही बातचीत हुई,—ऊपरवाले और

नीचेवाले कर्मचारीके बीच जैसा होना चाहिए, वैसा नहीं। आनेके समय भी साहबने कहा "सन्याल, गलती कर रहे हो। फिर सोचकर देखो।" उस समय कह आया था "इतने दिनोंसे गलती करता आ रहा था, और नहीं करूँगा।"····मुहल्लेके बूढ़े मित्तिर महाशयने काली मन्दिरके पीछे ईंटके ढेरके पास ले जाकर बड़ी सहानुभूतिके साथ मुझे समझाया था "क्यों इन सब कामोंमें पड़ते हो? ब्याह-शादी कर चुके हो। स्त्री-पुत्र परिवार है। बिना आगे पीछे सोचे एकदमसे कूद पड़ना क्या अच्छा है? भारतवर्षमें और जगहोंमें अगर स्वराज होगा तो पूर्णियाँमें भी होगा। इस जगहको छोड़ कर तो स्वराज नहीं होगा।" कितने लोगोंने कितनी तरहकी सलाह दी थी। किसीकी बात पर क्या मैंने कान दिया था? इस पथमें आनेके पहले क्या किसीके साथ मैंने राय-मशविरा किया था? पूछनेके लिए मैंने सिर्फ पूछा था बिलूकी माँको। वह भी ठीक पूछना नहीं था। अपना संकल्प ठीक करनेके बाद एक तरहकी सूचनाकी तरह। उसने क्या सोचा सो तो नहीं जानता; लेकिन सिर्फ बोली थी "तुम जो ठीक समझो सो करो। औरतोंकी राय ही क्या।" मैं किसीकी राय लेकर नहीं चला। जो अच्छा समझा वही किया। फिर बिलू मेरी राय लेकर क्यों चलेगा?····

एक चरखेसे बैलगाड़ीके चक्केकी आवाजकी तरह चर्र-चर्र आवाज होती है। इस आवाजका लगातार होते रहना कानको बड़ा कर्कश लगता है। सिमेन्टकी सहन पर एक धातुसे बने वर्त्तनको खींच कर ले जानेसे ऐसा ही असह्य मालूम पड़ता है। नर्म घाव परसे जैसे सरेस कागज घिसता हो। जेलमें आनेके पहले मैंने अपनी इस स्नायुकी दुर्बलताका खयाल नहीं किया था। मेरी स्वस्थ स्नायु मण्डली थोड़ेमें विचलित नहीं होती, यही मेरा

गर्व था। अबकी जेल आकर यह क्या हो गया? जरूर रामदेनीके चरखेसे यह आवाज आती है। अपने हाथके सूतसे नजर उठा कर रामदेनीके चरखेकी तरफ देखा। रामदेनीकी आँखोंसे आँखें मिली। रामदेनी जरा झेंप कर देखता है—जैसे कसूर उसीका हो। रामदेनी चरखा छोड़ कर उठ गया। अपने सीटकी तरफ दौड़ कर जा रहा है। सब उसकी ओर देख रहे हैं; मालूम होता है सोच रहे हैं कैसा शिष्टाचारका अभाव! "सामूहिक चरखा" के बीचसे उठ जाना! रामदेनी लौटा, हाथमें तेलकी शीशी। चरखेमें बूँद-बूँद करके तेल ढाल दिया। उसके बाद फिर सूत कातना शुरू किया। देखता हूं सब सूत कातते हैं और मेरी ओर ताक कर, बीच-बीचमें क्या देखते हैं, मेरे चेहरे पर कुछ परिवर्त्तन देख पाते हैं क्या? आज कई दिनोंसे मेरे मनमें जो द्वन्द्व—जो संशय चल रहा है, उसकी छाप क्या इन्होंने मेरे चेहरे पर देख पाई है? मनका भाव क्या दबाया जा सकता है? गरममें उपवास करनेसे शायद मैं सूखा-सूखा दीख पड़ता हूं। नहीं, उपवास तो कितने दिनोंसे हरेक सोमवारको करता आ रहा हूं, उपवाससे कुछ नहीं हुआ है। इनकी समवेदनाका मूल्य क्या दे सकता हूं। मैं जिसमें कमसे-कम कुछ देरके लिए भी मनकी अशान्ति भूल सकूँ, इसीलिए वे लोग चरखा कातनेके लिए बैठे हैं। सब मिलकर मेरे बोझका भार लेकर, मेरे मनको हल्का करना चाहते हैं।······

···भर माथा घघराले बाल, साफ रंग, जरा लड़कियोंकी तरह लम्बे किस्मका मुंह, नुकीली ठुड्डी, काली आँखोंकी गहरी दृष्टि भावुकता भरी। मेरे बिल्कुल तरफ देखनेसे ही वह आँखें नीची कर लेता है। लेकिन इन्हीं आँखोंसे भी वज्रकी अग्नि शिखा निकलते देखी है।······मेरे नौकरी छोड़नेके कुछ दिन

पहलेकी बात है। हाई स्कूलके पास ही ऑफिसर्स क्लब है। दोनों घेरेके बीच एक तारका बेढ़ा है। क्लबमें कोई 'चैरिटी' मेला या क्या हो रहा है। मेमोंने अनेक प्रकारकी शोकीनीकी चीजोंकी दूकानें खोल रखी हैं। निलू और बिलू इस तार पर चढ़कर साहब मेमके इस उत्सवको देख रहे हैं। निलू उस समय बहुत छोटा था ; बिलू बीचके तार पर खड़ा होकर निलूको पकड़े हुए है। काफा कोठीका पेरिन साहब-अचानक देखता हूं—मेरे क्वार्टर्स के गेटके भीतर आकर घुस गया, हाथमें छड़ी, उद्धत दृष्टि। मुझसे बोला—क्लबमें 'लेडिज' स्टाल खोले गये हैं। कम्पाउन्डके तार पर से लड़के चौबीस घण्टे मुहँ बाए क्या देखते हैं ? 'यू सी हेडमास्टर' यह अगर तुम बन्द नहीं कर सकते हो, तो हम लोग खुद देखेंगे कि कैसे यह असभ्यता बन्द हो सकती है। तारके घेरे पर बैठे हुए निलू बिलूकी तरफ साहब छड़ी दिखाकर,—जिस अशिष्ट जबर्दस्त ढगसे आया था उसी ढगसे चला गया। मैं बिलूको पुकार कर बोला—खबरदार, उस तरफ मत जाओ। जो बिलू मेरी ओर देख नहीं सकता था, उसकी आँखोंमें उसदिन मैंने देखी थी सोए हुए पौरुषकी झलक। मेरी ओर देखा, जैसे दोनों आँखोंसे आगकी चिनगारियाँ छिटक रही हों।

"क्यों, वहाँ जानेसे क्या हुआ ?" मुझसे पूछना "क्यों ?" मेरी बात पर बात ? कान पकड़ कर खींचते-खींचते उसे घरके अन्दर ले गया। उसकी माँ उस समम रसोईघरमें थी। "देखो अपने गुणवान लड़केका काम ! साहब—सुब्बासे झगड़ा करके क्या नौकरी रह सकती है ?" पीछे मैंने अपने घरके बरामदेसे सुना, माँ के साथ बिलू बहस कर रहा है "क्यों ? अपनी जमीनसे साहब मेमका मेला देखता था, इसमें क्या

हुआ ?"……उस रातमें बिलूने खाया नहीं; गुस्सेसे या अभिमानसे, मालूम नहीं। आधी रातमें बिलूकी माँने मुझे पुकार कर जगाया। बिलू तो विछौने पर।नहीं है। बिलू कहाँ गया? खोजो-खोजो! नौकर-चाकर, स्कूलका दरवान हम सभी लाठी लालटेन लेकर निकले। बिलूकी माँ जोर-जोरसे रोने लगी, और मुझे दोष देने लगी कि यह इतना जरा-सा लड़का मेमोंका मेला देखना था, इसमें मेमोंका अपमान कैसे हो गया? कहीं बिलूका पता नहीं। अन्तमें बोर्डिङ्गके एक लड़केने बिलूको खोज करके निकाला।—दिनमें जिस जगहसे निलू और बिलू मेमका मेला देखते थे, ठीक वहीं पर तारके घेरे पर बिलू बैठा है। मेलेकी रोशनी कबकी बुझ गई है। लेकिन बिलू मेरी डाँटका अन्याय साबित करनेके लिए, अपनी अकाट्य युक्तिके साथ कामकी सगति मिलानेके लिए इस जाड़ेकी अँधेरी रातमें अकेला वहाँ बैठा है। देह पर केलेके कोंपलके रगके अलवानके सिवा और कुछ नहीं। खाली पैर, हाथ-पैर बरफकी तरह ठण्ढे हो गए हैं।

जबर्दस्ती बिलूसे कोई कुछ करा ले सो हो नहीं सकता। उसे फुसलाकर, खुशामद करके या उसके कोमल हृदयका फायदा उठाकर उससे लोग जो कुछ काम भी करा सकते हैं। लेकिन शारीरिक बल दिखाओ, बिलू रोक कर खड़ा हो जायगा। क्षणभरमें उसकी स्वाभाविक नम्रता कहाँ चली जाती है। उसके बचपनसे ही यह देखता आता हूं।……बीस बरस पहलेकी बात होगी। बिलूकी माँ का चिल्लाना सुनकर जिला कांग्रेस आफिसके कमरेसे उठकर अपनी कुटीकी ओर चला। सुना बिलूकी माँ चिल्लाकर बोल रही है, "बोल जल्दी—अब भी बोल। तू ने जरूर मुसलमानका थूक चाटा है। फिर नहीं बोलता है?" घरमें जाकर देखा बिलूकी माँ छोलनी लेकर निलूको

मारनेका डर दिखा रही है। दूसरे हाथमें एक नल टूटा हुआ चुनारका 'टीपाट'—उसमें सूजी रहती है। गुस्सेकी तेजीमें 'टीपाट' नीचे रखना भूल गई हैं। सारी बातें सुनीं। निलू, बिलू बहबूद मुख्तारके बगीचेमें बेर खाने गए थे। वहां बहबूद मुख्तारके दामादने उन्हें पकड़ा। दोनोंको एक-एक बेरके पत्तेपर थूक फेंकनेको कहा, और हुक्म दिया कि उसे चाटकर कहना होगा कि और कभी बेर खाने नहीं आऊँगा। ऐसा नहीं करनेसे मारने और मास्टर साहबको कह देनेका डर दिखाया। निलूने डरसे थूक चाट लिया—बिलू राजी नहीं हुआ। न जाने क्या सब कहा। उसके बाद—बहबूद मुख्तारके दामादने उन्हें छोड़ दिया। अब बहबूद मुख्तारकी लड़कीने आकर बिलूकी मांके पास नालिश की, कि बिलू वगैरहने उसके पतिका अपमान किया है। इसीसे सब बातें जाहिर हो गई हैं। बिलूकी मांने अभी तक असल सवाल यानी बेरकी चोरी और अपमान करनेके सवालमें हाथ ही नहीं लगाया था। अभी जो उनके सामने मुख्य विषय है, उसीपर जिरह चल रही है—निलूने जो थूक चाटा है, वह सचमुच निलूका है या बहबूद मुख्तारके दमादका।........

चौंक पड़ा। हो! हा! हो!—सारा घर कँपाते हुए, इतने चरखोंकी मिली हुई घर्घर आवाजको डुबाते हुए, हँसीका ठहाका हुआ। मेरी दाहिनी तरफ दो सीटोंके बाद खिड़कियोंके पर्दे और बिछौनेकी चादरोंसे घेर कर एक कमरेकी तरह बना लिया गया है। इसीके अन्दर सोशलिस्ट पार्टीका 'कैपिटल' क्लास होता है। फारवर्ड ब्लाकके चार आदमी इस क्लासमें नहीं आते; वे लोग दिनमें एक जगह बैठकर कितनी क्या मार्क्सिस्ट किताबें पढ़ते हैं। 'कैपिटल' पढ़ते हैं तो इसमें इतनी हँसी क्यों? इस गरमीमें

चारों ओर पर्दा लगा कर बैठनेकी क्या जरूरत ? आजकलके लड़कोंकी हर बात ही अजब है। पर्दोंके ऊपरसे ढेरका-ढेर कुण्डलीके आकारका धुआँ उठ रहा है। उन लोगोंने सिगरेट पीनेकी सुविधाके लिए तो ऐसा पर्दा नहीं लगाया है ? नहीं, वह दीन-दुनियाँ क्या अब है ? सिगरेट-चुरुट पीनेके लिए इन लोगोंको अब किसी आड़की जरूरत नहीं होती है। उन लोगोंके दलका कामरेड बनारसी—बिलूसे कितना छोट, बिलूका ही छात्र—मेरे साथ बिलूके सम्बन्धसे आकर गप्प करता है,—मुँहके कोनेमें एक सिगरेट। सभी जेल-आफिसके 'पर्सनल एकाउन्ट' से रुपए उधार लेते हैं, और उधर।····

"कितने आदमी हैं आप लोग ?"

तो ग्यारह बज गए। नया वार्डर आया है। पर्देके घेरेसे एक आदमीने वार्डरसे कहा—"जाओ, चिल्लाओ मत।" दूसरा आदमी बोल उठा इस वार्डमें आसामी—साढ़े सात आदमी हैं। वार्डर गुस्सेसे बड़बड़ाते हुए चला जाता है। कहता जाता है कि "पाव रोटी और मुर्गीका अण्डा खाते हैं—और ये लोग 'महात्माजी' का काम करने जेल आए हैं !"

पर्देके भीतरसे एक आदमी बोल उठा "बैजनाथ, जल्द उठ। दे तो बदमाशकी देह पर घड़ेका पानी ढाल।"

सभी हैं-है कर उठते हैं। कामरेड बैजनाथ एक ग्लास लेकर पर्देके बाहर आता है। रोगी, सूखा हुआ, बंटी हुई रस्सीकी तरह देह। पैजामा पहने हुए। देहमें पञ्जाबी ; पञ्जाबीका कालर ऊँचा। सभी सोसलिस्टको देखता हूं 'कपड़ा गोदाम' के कैदी दर्जीको बीड़ी देकर ऐसा कुरता बनवाए हुए हैं। इतनी गरमीमें भी ये लोग खाली देह नहीं रहेंगे। ये ही लोग संसारमें सर्वहाराका राज्य लावेंगे !

ग्यारह बज गए। सभी चरखा कातना खत्म कर चुके। तकुवा, पियुनी सब ठीकठाक करके उठनेकी तैयारी हो रही है। लगातार दो घण्टेसे अधिक चरखा कातना क्या सबोंसे पार लगता है। व्यक्तिगत सत्याग्रहके समय हजारीबाग जेलमें गांधी-जयन्तीके दिन लगातार आठ घण्टे सूत कातनेके बाद मेरी 'किडनी' में गड़बड़ी हो गई। उसी समयसे और लगातार बहुत सूत नहीं कातता हूं। हो सकता है बीमारी किसी और वजहसे हुई हो, लेकिन जेलके डाक्टरका विचार था कि एक साथ इतनी देरतक एक हालतमें बैठनेसे किडनीमें गोलमाल हुआ है। डाक्टरके मतके ऊपर तो और कोई बात कही नहीं जा सकती है। सब अपनी-अपनी जगह पर चले गए। सदाशिव और मेहरचन्द खड़े हैं।

मेहरचन्द बोला "मास्टर साहब, थोड़ासा कुछ खाइए। सारा दिन उपवास! पित्त—कुपित हो जायगा। आपका खाना इस टेबिल पर रख गया है। दो रोटी खा लीजिए।"

एक कागज पर लिख दिया कि इस गरमीमें खानेकी इच्छा नहीं होती है।

मेहरचन्द बोला—"थोड़ा दही ला देता हूं। मेरे घरसे आज दही आया है। अपने घरकी गायके दूधका दही है। नहीं तो मैं आपको नहीं कहता। आप गांधी सेवा-संघके सदस्य थे। भैंसका दूध-घी आप नहीं खाते हैं सो कौन नहीं जानता है। इसीलिए तो जेलमें आपका दूध घी खाना होता ही नहीं। यदि दैवात् मेरे घरसे आ गया है, तो भी अगर आप नहीं खायँगे तो मुझे बड़ा दुःख होगा।"

मेहरचन्द नाटकीय ढंगसे हाथ जोड़के खड़ा हो गया है—"यह अनुरोध मेरा रखना ही पड़ेगा मास्टर साहब। मेरे 'फादर' साथमें ले आए

थे दही"···फिर 'फादर' कहा उसने। देखता हूं, इस बीचमें जो थोड़ी-सी भी अंग्रेजी सीख गया है वह भी मां, पिता, बहन आदि शब्द अपनी भाषामें नहीं बोलेगा। किसीसे सुनोगे, 'सिस्टर' की शादी होगी। कोई सिर नीचा करके, पूछने पर, कहेगा, 'मादर' की 'डेथ' हो गई। बातचीतमें ये लोग ज्यादा अंग्रेजी शब्द व्यवहार करते हैं सो बात नहीं है। लेकिन बाबूजी, मां, बहन ये शब्द अपनी भाषामें कहनेमें जैसे लजाते हैं।···

"फादर मुझे बार-बार कह गए हैं कि मास्टर साहब दही खाकर देखें। बिल्कुल गोयठेकी आगमें औंटे गये दूधका 'फस्ट क्लास' दही है।"

इस तरहसे अनुरोध करता है; नहीं कहनेका भी उपाय नहीं है। जरा नहीं खा लेनेसे इसे बड़ा दुःख होगा। इशारेसे उसे स्वीकृति बतलाता हूं। ये लोग छोड़नेवाले जीव नहीं हैं। स्वीकृति नहीं देनेसे घण्टा तक मेरा कान खराब करता। उसे तो मैं जानता हूं। मेहरचन्द और सदाशिव दोनोंके बीच आँखों-आँखोंमें इशाराबाजी चली। ओ, तो सदाशिवने ही मेहरचन्दको मेरे पीछे लगा दिया था। खुद हिम्मत न हुई। मालूम होता है कह गया था कि जबतक राजी न हों, छोड़ना मत। मेहरचन्दने समेट कर चरखेका बक्स बन्द किया और उठाके रख दिया। उसके बाद कम्बलोंको एक कोनेमें तह करके रख दिया। कमरेके बीच जहां पानीका डोल रहता है, वहां मेरा गमछा और मग रख आया और खटियाके नीचेसे खड़ाऊँ निकाल कर सामने रखा। मैंने अपने लड़कोंसे इतनी सेवा और यत्न कभी पाया नहीं। याद नहीं कि किसी दिन मैंने इच्छा भी की। नौकरी छोड़नेके पहले छुट्टीके दिनों, निलू-बिलूको धूपमें नहीं खेलने देनेके खयालसे, शायद पके बाल चुननेके लिए कहा हो।

और, १९२१ के बादसे तो इच्छा-पूर्वक ही किसीसे किसी प्रकारकी सेवा मैंने नहीं ली। निलूकी मां इसके लिये कितनी रोई-खीझी, कितना दोष दिया उसने। नये खड़ाऊंका जोड़ा चार,पांच महीने पहले रामचरित्तरजीने मुझे भेंट दिया। उसे 'नहीं' नहीं कह सका। बड़ा पसन्द भी आया था। पीछे सुना विशुनदेवजी रामचरित्तरजीसे कह रहे थे, "बेल्टिंगका चमड़ा कितनेमें जोगाड़ किया।" रामचरित्तरजीने जवाब दिया "चमड़ा चार बीड़ीमें, और लकड़ी छः बीड़ीमें।" विशुनदेवजी अवाक् होकर बोले "इतना महंगा। दश बीड़ीमें तो जेलमें 'बिटी' कम्बल पाया जाता है। आप लोग बाजार खराब कर रहे हैं।"—यह बात है! ऐसा चौड़ा, सुन्दर, नये किस्मका फीता,—यह था जेल फैक्टरीके कम्बल कमीशनका फीता। 'अभद्रता होगी' सोचकर खड़ाऊंका जोड़ा वापस नहीं किया। लेकिन खड़ाऊँ आज तक इस्तमाल नही की। खाटके नीचे रख दी थी। सदाशिव ने इसे निकालकर रख दिया। ऐसे संसर्गमें आ पड़ा हूं कि इसमें अपनी नीति और सिद्धान्त बचाकर चलना भी सख्त है। खड़ाऊँको ठेलकर फिर खाटके नीचे रख दिया। डोलके नजदीक जाकर हाथ-मुंह धोया, सदाशिवने गमछा दिया। पीपेके पासकी सीट दासजीकी है। उसकी नाक बोल रही है। हरेक दफा साँस फेंकनेके समय मुंहसे हवा निकलती है। इससे दोनों होठ हिल जाते हैं और एक आवाज होती है फर्-र्-र्-र्-र्— घोड़ा घास खानेके वक्त बीच-बीचमें ऐसी ही आवाज करता है। भले आदमी ठीक शामको ही लेट जाते हैं—और लेटते ही सो जाते हैं। और उठते हैं दो बजे रातमें। ऐसी गरमीमें भी आठ बजे शामको कैसे नींद आती है! रामायण-महाभारतमें इच्छा-मृत्युकी बात ही पाई जाती है।

लेकिन इच्छा-निद्रा—यह भी कम साधनाका फल नहीं है। शामके बाद कमरेमें प्रार्थना होती है, कितना चीखना-चिल्लाना हल्ला-गुल्ला होता है, इससे उसकी नींदमें जरा भी बाधा नहीं होती है !

मेरी चौकीके पास मेहरचन्द दहीका शरबत बना रहा है। मुझे उसने पूछा—"गुड़ दूँ या भूरा दूँ ? मेरे पास थोड़ा भूरा है।" उसे इशारेसे गुड़ ही देनेको कहा। एक लोटा शरबत तैयार हुआ। सदाशिवने कम्बल बिछा दिया। अपने सामनेकी जगह पर पानी छींटकर वहां लोटा गिलास रख दिया। मैंने अलुमुनियमके गिलासमें एक गिलास शरबत ढाल लिया। दही दिया है, शरबत तो नहीं है—पतला दही ; जेलके गिलास भी अजब हैं। पानी पीनेके समय देह और कपड़े पर जरूर पानी गिरेगा। मीठा भी खूब डाला है।

मेहरचन्दने बातें करते हुए कहा—"सवेरे 'इन्टरव्यू' था। दो हाँड़ियोंमें दही आया था, और एक हाँड़ी गोंदके लड्डू। आफिसके लोगोंको खानेको इच्छा थी या क्या कौन जाने। जेलरने पहले जमादारको कहा, हांडीमें लकड़ी घुसाकर नीचे तक देखो दहींके अलावे और कुछ है कि नहीं। उसके बाद रख दो डाक्टर साहबके आने पर पास होगा। जेलर मुझ पर इतना खफा क्यों हुआ कौन जाने। और किसीकी बारीमें तो ऐसा नहीं करता है। मैं जमादार साहबको चार गोंदके लड्डू देकर चुपचाप हाँड़ी लेकर चला आया।"

उसके बाद मनमें न जाने क्या हुआ। मुझे कहता है—'चीनी डाल कर बने हुए लड्डू हैं न इसीलिये आपको नहीं दिये। और एक गिलास दूँ मास्टर साहब?" उसे मना किया। एक गिलास पीना ही मुश्किल है, तिस पर और एक गिलास। हाथ-मुंह धोकर फिर कम्बल पर आकर

बैठ गया। मेहरचन्द गिलाससे लोटा बजा रहा है और चिल्ला रहा है 'चलो, चलो-ओ, शरबत पीनेवालो !" विशुनदेवको छोड़कर और किसीने नहीं लिया—चीनीका शरबत होता तो कोई-कोई लेता भी। विशुनदेवजी आधा सेर आटेकी रोटियाँ खाता है। उम्र कम ; स्वास्थ्य खूब अच्छा। लेकिन इसीसे क्या दोपहर रातमें खाने-पीनेके बाद, एक लोटा दही पीयेगा ? इस वार्डमें गुड़का शरबत कोई पीना नहीं चाहता है और बिलू ? तीसरे दर्जेके कैदी लोग जरा-सा गुड़, एक लाल मिर्च या एक प्याज पानेसे धन्य हो जाते हैं। 'स्कर्वी' को रोकनेके लिये वे लोग हफ्तेमें दो दिन थोड़ा-थोड़ा अचार खानेको पाते हैं। यह शौकीनीकी चीज जिस दिन खानेको मिलती है, उस दिन जैसे भात खानेसे उन लोगोंका पेट ही नहीं भरता है। सिर्फ अचारके साथ ही उनका सारा भात खाना हो जाता है। दालके साथ खानेके लिए भात कहाँ ?

बहुत मुश्किलसे पाया गया दालका लाल मिर्च जैसे यूं ही बर्बाद हो गया।....बिलूको दोनों वक्त भात खानेकी आदत है—यहाँ वह भी मिलता है कि नहीं कौन जाने ? 'जेल कोड' के अनुसार दोनों वक्त भातका नाम है 'बेंगाल डाएट' जो यह नहीं पाते हैं, उन्हें साँझके वक्त देता है दो हाथ घेरेका-रोटी नामक पदार्थ—दो की संख्यामें। यह आधा सीझा हुआ, मुश्किलसे पचनेवाला खाद्य पदार्थ पचा लेना भीम भवानी या गोबरके लिए सम्भव हो सकता है—लेकिन सामान्य बगालीके लिए तो असम्भव है।...इच्छा होती है कि बिलू जाने कि उसीकी बात सोच करके इस बार जेलमें फलमूल, दूध ये सब चीजें नहीं खाता हूं, मशहरी लगाकर नहीं सोता हूं। हो सकता है यह बात जान कर उसके मनमें कुछ सन्तोष होता। उसका पिता उसके लिए

थोड़ा भी सोचता है, यह बात वह समझ सकता। बिल्को अगर फाँसीकी सजा नहीं होती तो शायद अभी इसी तरह एक पर्देसे घिरे कमरेमें बैठकर दलके लोगोंको 'कैपिटल' पढ़ाता। बिलूके यहाँ रहने पर कामरेड लछमी चतुर्वेदीको अभी गुरुगिरी नहीं करनी पड़ती। मनिहारी घाट पर एकबार उन लोगोंके दलका जो 'समर-ट्रेनिङ्ग-कैम्प' खुला था, उसका अध्यक्ष बिल् ही तो था। कामरेड बनारसी भी एक दिन चुरुट खींचते-खींचते मेरे सामने बोला था—"बिल् बाबूकी तरह हम लोगोंके दलमें और कोई पढ़ा नहीं सकता। इसीलिए उस बार जब सोनपुरमें हम लोगोंका प्रादेशिक 'समर-कैम्प' खुला—वहाँ भी 'डायलेक्टिकल मेटेरियलिज्म' पढ़ानेका भार बिल् बाबूके ऊपर ही पड़ा था। 'आपोरचुनिस्ट' लोगोंकी बात अगर छोड़ दी जाय और सिर्फ काम करने वालोंकी बात कही जाय, तो हम लोगोंके दलके 'इण्टेलेक्युअल' लोगोंके बीच बिल् बाबूका स्थान बड़ा ऊँचा है। बिलू बाबू 'मिलिटैन्ट' जरूर कुछ कम हैं। इसीलिए पार्टीमें सबसे ऊँची जगह पर वे पहुँच नहीं सके।" कामरेड बनारसी और भी क्या-क्या बोला था—सब याद रखना भी मुश्किल है। बातें करनेके वक्त ऐसे ऐसे शब्द व्यवहार करनेका उन लोगोंका अभ्यास हो गया है, जिनका असल अर्थ मेरे लिए एक तरहसे अज्ञात है। उन लोगों के साथ बातचीत करनेके समय ठीक थाह नहीं पाता हूं। साधारण चालू भाषामें क्या बातें नहीं कही जा सकती हैं? वे लोग घरमें भी क्या इसी भाषामें बातें करते हैं? हम लोगोंको ही उनकी बातें आधी समझमें नहीं आती हैं—उन लोगोंकी माँ-बहनें ये सब बातें क्या समझेंगी? वही जो किस्सा है न? एक आदमीने अंग्रेजी पढ़ना शुरू करके तै किया कि वह माँ के साथ अंग्रेजी छोड़कर और किसी तरह बात नहीं करेगा। उसके

बैठ गया। मेहरचन्द गिलाससे लोटा बजा रहा है और चिल्ला रहा है 'चलो, चलो-ओ, शरबत पीनेवालो !" विशुनदेवको छोड़कर और किसीने नहीं लिया—चीनीका शरबत होता तो कोई-कोई लेता भी। विशुनदेवजी आधा सेर आटेकी रोटियाँ खाता है। उम्र कम ; स्वास्थ्य खूब अच्छा। लेकिन इसीसे क्या दोपहर रातमें खाने-पीनेके बाद, एक लोटा दही पीयेगा ? इस वार्डमें गुड़का शरबत कोई पीना नहीं चाहता है और बिलू ? तीसरे दर्जेके कैदी लोग जरा-सा गुड़, एक लाल मिर्च या एक प्याज पानेसे धन्य हो जाते हैं। 'स्कर्वी' को रोकनेके लिये वे लोग हफ्तेमें दो दिन थोड़ा-थोड़ा अचार खानेको पाते हैं। यह शौकीनीकी चीज जिस दिन खानेको मिलती है, उस दिन जैसे भात खानेसे उन लोगोंका पेट ही नहीं भरता है। सिर्फ अचारके साथ ही उनका सारा भात खाना हो जाता है। दालके साथ खानेके लिए भात कहाँ ?

बहुत मुश्किलसे पाया गया दालका लाल मिर्च जैसे यूं ही बर्वाद हो गया।····बिलूको दोनों वक्त भात खानेकी आदत है—यहाँ वह भी मिलता है कि नहीं कौन जाने ? 'जेल कोड' के अनुसार दोनों वक्त भातका नाम है 'बेंगाल डाएट' जो यह नहीं पाते हैं, उन्हें साँझके वक्त देता है दो हाथ घेरेका-रोटी नामक पदार्थ—दो की संख्यामें। यह आधा सीझा हुआ, मुश्किलसे पचनेवाला खाद्य पदार्थ पचा लेना भीम भवानी या गोबरके लिए सम्भव हो सकता है—लेकिन सामान्य बंगालीके लिए तो असम्भव है।···इच्छा होती है कि बिलू जाने कि उसीकी बात सोच करके इस बार जेलमें फलमूल, दूध ये सब चीजें नहीं खाता हूं, मशहरी लगाकर नहीं सोता हूं। हो सकता है यह बात जान कर उसके मनमें कुछ सन्तोष होता। उसका पिता उसके लिए

थोड़ा भी सोचता है, यह बात वह समझ सकता। बिलूको अगर फांसीकी सजा नहीं होती तो शायद अभी इसी तरह एक पर्देसे घिरे कमरेमें बैठकर दलके लोगोंको 'कैपिटल' पढ़ाता। बिलूके यहाँ रहने पर कामरेड लछमी चतुर्वेदीको अभी गुरुगिरी नहीं करनी पड़ती। मनिहारी घाट पर एकबार उन लोगोंके दलका जो 'समर-ट्रेनिङ्ग-कैम्प' खुला था, उसका अध्यक्ष बिलू ही तो था। कामरेड बनारसी भी एक दिन चुरुट खींचते-खींचते मेरे सामने बोला था—"बिलू बाबूकी तरह हम लोगोंके दलमें और कोई पढ़ा नहीं सकता। इसीलिए उस बार जब सोनपुरमें हम लोगोंका प्रादेशिक 'समर-कैम्प' खुला—वहाँ भी 'डायलेक्टिकल मेटेरियलिज्म' पढ़ानेका भार बिलू बाबूके ऊपर ही पड़ा था। 'आपोरचुनिस्ट' लोगोंकी बात अगर छोड़ दी जाय और सिर्फ काम करने वालोंकी बात कही जाय, तो हम लोगोंके दलके 'इण्टेलेक्चुअल' लोगोंके बीच बिलू बाबूका स्थान बड़ा ऊँचा है। बिलू बाबू 'मिलिटैन्ट' जरूर कुछ कम हैं। इसीलिए पार्टीमें सबसे ऊँची जगह पर वे पहुँच नहीं सके।" कामरेड बनारसी और भी क्या-क्या बोला था—सब याद रखना भी मुश्किल है। बातें करनेके वक्त ऐसे ऐसे शब्द व्यवहार करनेका उन लोगोंका अभ्यास हो गया है, जिनका असल अर्थ मेरे लिए एक तरहसे अज्ञात है। उन लोगोंके साथ बातचीत करनेके समय ठीक थाह नहीं पाता हूं। साधारण चालू भाषामें क्या बातें नहीं कही जा सकती हैं? वे लोग घरमें भी क्या इसी भाषामें बातें करते हैं? हम लोगोंको ही उनकी बातें आधी समझमें नहीं आती हैं—उन लोगोंकी माँ-बहनें ये सब बातें क्या समझेंगी? वही जो किस्सा है न? एक आदमीने अंग्रेजी पढ़ना शुरू करके तै किया कि वह माँ के साथ अंग्रेजी छोड़कर और किसी तरह बात नहीं करेगा। उसके

बाद बेचारा बीमार पड़के प्यासा मर गया—'वाटर' उसकी माँ समझ न सकी। वैसा ही होगा और क्या? बिलू तो तुम्हारे दलका एक नेता है। उसकी इस तरह की कोई बात तो मेरे कानोंमें नहीं पहुँची। दलमें क्या बोलता था सो नहीं जानता; लेकिन घरमें तो उसे अस्वाभाविक साम्यवादी कोषका कोई शब्द व्यवहार करते नहीं सुना। उसे पायजामा और ऊँचे कालरका पञ्जाबी पहनते हुए भी किसी दिन नहीं देखा। तम्बाकूकी गन्ध भी उसकी देहसे निकलती हुई कभी नहीं पाई। हो सकता है तुम लोगोंकी भाषाका "मिलिटैन्ट" शब्दका अर्थ शायद मैं ठीक नहीं समझता होऊँ—जो देशके लिए आज रात फाँसी पड़ेगा उसे तुमलोग कहते हो 'मिलिटैन्ट' नहीं है। वह क्यों 'मिलिटैन्ट' होगा—मिलिटैन्ट है यह पिलपिला बैजनाथ—जो थोड़ी देर पहले गिलास लेकर निकला था, वार्डरकी देह पर पानी डालनेके लिए। छिः, मैं यह क्या सोचता हूं! बिलूका मिलिटैन्ट होना ही जैसे मेरे गर्वका विषय है। महात्माजी, मेरा प्रणाम ग्रहण करो। शायद बनारसी ठीक ही बोलता है। बिलू मेरे पक्षमें है, आश्रमकी आबो-हवामें आदमी बना है। उसके लिए 'मिलिटैन्ट' नहीं होना ही स्वाभाविक है।·······सदाशिव मेरे टेबिलपर पांव लटकाकर बैठा हुआ है। वह मेरे चेहरेकी ओर देख रहा है। जरूर सोचता है कि अचानक मैंने प्रणाम क्यों किया? इसका एक मनगढ़त अर्थ जरूर लगा लिया उसने।

"विशुनदेव बाबू! बिशुनदेव बाबू!"

बाईं ओर दो-तीन 'सीटों' के बाद विशुनदेवजीकी सीट है। एक वार्डर उसकी सीटके सामनेकी खिड़कीके बाहरसे उसे पुकार रहा है। विशुनदेवजीका

बाहरमें काफी बड़ा कारोबार है,—व्यवसायी आदमी है। ढेकी स्वर्गमें जाने पर भी धान कूटती है। विशुनदेवजी जेलमें भी अच्छा खासा कारोबार फैलाए हुए हैं। वह हम लोगोंके रसोईके मैनेजर हैं। जेलके कान्ट्रैक्टर से उनका मेलजोल है। यही वार्डर उनके और जेल कान्ट्रैक्टरके बीच खबरें और चीज़ वस्तु लेने-देनेका काम करता है। जितने 'रेशन' की माँग होती है उससे कम चीजें जेल कान्ट्रैक्टर रोज देता है,—वह कागज पर मैनेजरसे दस्तखत कराके ले जाता है कि उसने सब चीजें दी हैं। उसके बाद रातमें यही वार्डर आकर और-और चीजें दे जाता है—ये चीजें रेशनमें नहीं दी जाती हैं। जेलके कर्मचारी भी मोटा-मोटी इस बातको जानते हैं, और इसे बन्द करनेके लिए जेलके रसद गोदामसे 'शिड्यूल' के मुताबिक चीजें देनेकी कोशिश भी कई बार की गई है। लेकिन इस युद्धके जमानेमें 'शिड्यूल' के मुताबिक सब चीजें रोज देना मुश्किल है। और नहीं देनेसे फसाद। हो सकता है, अपर डिविजनके राजबन्दी अनशन ही आरम्भ करदें। हो सकता है 'लाक-अप' होनेसे इन्कार कर दें। शारीरिक बल और लाठी चार्जके बलसे इन्हें थोड़ी देर तक रोका जा सकता है—ठीक, लेकिन दो-चार बार इस तरहसे झगड़ा होनेसे, 'टैक्टफुल' नहीं है, यह बदनामी, डिपार्टमेन्टमें जेलर, सुपरिण्टे-ण्डेण्टकी हो जायगी। कुछ दिनोंमें बदलीका हुक्म आजायगा। इसके आलावा मारपीट करके बात चाप भी दी जाय, तो नजरबंद कैदियोंके रहते वह उपाय भी नहीं है। जिला मैजिस्ट्रेटके हुक्मके बिना उन पर लाठी-चार्ज हो नहीं सकता। और अभी जेलमें जगहकी कमी इतनी ज्यादा है कि नजरबंद कैदियोंको अलग रखनेका इन्तजाम करना भी मुश्किल है। यही छ-पाँच करके जेलके कर्मचारी चाहते हैं कि जिसमें राजबन्दी लोग गोलमाल न करें।

एकाध बात देख कर भी नज़र-अदाजका भाव दिखानेसे अगर काम चल जाय, तब इन लोगोंको उभाड़नेकी क्या जरूरत ? इससे उन लोगोंको कान्ट्रैक्टरसे जो कुछ मिलता है, उसमें तो कुछ कमी-बेशी नहीं होती है । ·· इसलिए सुविधा हुई है विशुनदेवजीको । विशुनदेवजी और वार्डर धीरे-धीरे क्या बोलते हैं, ठीक समझमें नहीं आता है। अचानक विशुनदेवजीने जोरसे कहा "सिपाहीजी, थोड़ा दहीका शरबत पीओगे ?" सिपाहीजी बोला "लाइए"। गिलास सींखचोंसे बाहर नहीं हुआ। "ठहरिए मैं प्याली लाता हूं।" विशुनदेव चायके प्यालेमें डाल डालकर वार्डरको घोलका शरबत पिलाता है ओः—इसीलिए उसने शरबत लिया था। इसीसे तो कहता हूं—अचानक उसे गुड़ दिया हुआ घोलका शरबत पीनेकी इच्छा क्यों हुई। सिपाहीजी चला गया। शायद उसकी ड्यूटी दूसरे वार्डमें है। भूषणजी अपने बिछौने पर मशहरी गिराकर लेटा था। ठीक विशुनदेवजीके पास उसकी सीट है। वह मशहरीके अन्दरसे बोला "क्या 'तिकड़म' कर रहे थे यार ?" नियमके विरुद्ध जोगाड़ करनेका नाम इन लोगोंने तिकड़म रखा है। असल शब्दका कोई अर्थ नहीं है—जेलमें ही इस शब्दकी सृष्टि हुई है। विशुनदेवने जवाब दिया "बीस बण्डल बीड़ीके लिए।" विशुनदेव रोज बीड़ी मँगाता है और दिनमें 'मेट' के हाथ जेलकी फैक्टरी में इन बीड़ियोंको बेचनेके लिए भेजता है। वहाँ साधारण कैदी इन बीड़ियोंको खरीदते हैं—दस पैसा पैकेट। विशुनदेवजीको इसमें अच्छा फायदा हो जाता है। मेसके मेम्बरोंमें जो कुछ गोलमाल कर सकते हैं, उनका मुंह बन्द करनेके लिए बीच-बीचमें सुगन्धित तेल और दूसरी छोटी-मोटी कामकी चीजें मँगा देता है। इसके सिवा जेलके गोदामके कैदियोंसे भी बन्दोबस्त कर रखा है—दो बण्डल बीड़ीमें एक ग्लास घी, एक पैकेट

बीड़ीमें आध सेर चीनी। बीड़ी ही जेलका 'लीगल टेन्डर' सिक्का है। भूषणजीने विशुनदेवको कहा,—"मुझे एक बण्डल बीड़ी दो तो—गरम कपड़ा जाड़ेके बाद साफ नहीं किया गया है। कल उसे धोबी-कामैन्डमें भेजना होगा, लोहा दिलानेके लिए। और कल मेरे लिए फाउन्टेन पेनकी रोशनाई कन्ट्रैक्टरको लानेके लिए कह देना तो भाई।" उसके बाद हँसके बोला "मैं हूं भाई, झपट्टानन्दके दलमें।" झपट्टानन्द शब्दका एक इतिहास है। विशुनदेवजीने एक तुकबन्दी की थी। तुकबन्दी तो ठीक याद नहीं। लेकिन उसका भावार्थ यही है कि—जेलके राजबन्दी लोग सभी सिद्ध पुरुष है। उनको तीन श्रेणियोंमें बांटा जा सकता है। पहली श्रेणीका नाम है—"जोगाड़ानन्द"। ये लोग बीड़ी और पैसे घूस देकर, मीठी बात बोलकर, जेल-डाक्टरकी खुशामद करके और बीच-बीचमें जेल कर्मचारियोंसे झगड़ा करके बहुत किस्मकी चीजें जोगाड़ करते हैं। इन लोगोंको नशेकी चीजोंसे लेकर किसी भी वस्तुका अभाव जेलमें नहीं होता है। सुबहसे शाम तक ये लोग जोगाड़के फन्द-फिकरमें ही रहते हैं। दूसरी श्रेणीमें है "झपट्टानन्दका दल।" इस किस्मके कैदी साधारणतः चुपचाप, निष्क्रियसे रहते हैं। चेहरे पर लापर्वाहीका भाव लानेकी कोशिश करते हैं। लेकिन चील जिस तरह ऊँचे गाछ पर समाधिस्थकी तरह बैठे रहने पर भी शिकार पर ठीक नजर रखती है, ये लोग भी उसी तरह हमेशा नजर रखते हैं—जोगाड़ानन्द लोग कौन क्या कर रहे हैं, इस पर। ठीक जिस वक्त कोई चीज जोगाड़ानन्दके हाथमें पहुँचती है, उसी वक्त झपट्टानन्द लोग सामने जाकर हाजिर हो जाते हैं—उसमेंसे एक हिस्सा पर दावी करनेके लिए। 'तिकड़म' करते हुए पकड़े जानेसे आफत है—लेकिन झपट्टानन्दोंको किसी आफतका डर नहीं है। तब, जोगाड़ानन्दकी अपेक्षा

ये लोग चीज-वस्तु कम पाते हैं। जोगाड़ानन्दोंको थोड़ी-थोड़ी चीजें, अनिच्छासे भी इन लोगोंको देनी पड़ती हैं—गोलमाल करनेवालोंको तो शान्त रखना ही पड़ेगा।—उसके बाद बचते हैं और एक किस्मके राजबन्दी। तुकबन्दीमें इनका नाम दिया गया है "बेवकूफानन्द" इन लोगोंकी संख्या अधिक है। जोगाड़ करनेकी या जोगाड़की चीजोंमें हिस्सा लेनेकी इच्छा इनकी भी सोलह आने है। लेकिन इच्छा रहनेसे क्या होगा—काफी ताकत ही नहीं है। इनको डर है कि पकड़े नहीं जाने पर भी सभी लोग इनके बारेमें कानाफूसी करना नहीं छोड़ेंगे। और कहीं जो पकड़े गए तो बदनामी हद दर्जेकी होगी। इसलिए इन सब गोलमाल किस्मकी चीजोंसे अलग रहकर समालोचनाका अधिकार सुरक्षित रखना ही बुद्धिमानीका काम है।····

हल्ला-गुल्ला करते-करते सब दाहिनी ओरके पर्देके घेरेसे निकले, तो उन लोगोंका क्लास खत्म हुआ। सारा दिन वक्त रहते भी ये लोग रातमें जागकर पढ़ना-लिखना करेंगे ही। सवेरे आठ बजेसे पहले तो ये लोग उठनेका नाम नहीं लेंगे। लेकिन राजनीतिके क्षेत्रमें आकर भी ये लोग पढ़ना-लिखना भूले नहीं, यह देखकर खुशी होती है। मास्टरी करता था—इसीलिए लड़कोंको लिखते-पढ़ते देखकर अब भी मनकी खुशी छिपा नहीं सकता हूं। सोशलिस्टों, फारवर्डब्लाकके लड़कों, कम्यूनिस्ट और किसान सभाके दोनों लड़कोंमें, सबमें पढ़नेका उत्साह देखता हूं, और अवाक् होकर अपने पन्थके कार्यकर्त्ताओंके साथ मिलता हूं। फारवर्डब्लाकके तीन ही आदमी तो यहां हैं, किन्तु उन्हें भी देखता हूं कितना खर्च करके सेन्सर नहीं की हुई किताबें मँगाई हैं। कम्यूनिस्ट लड़कोंके पास भी इक्का-दुक्का

किताबें आती ही रहती हैं। इन लोगोंकी तरह घड़ी रखकर पढ़नेका क्लास करने जाओ तो हम लोगोंके बीच—निश्चय ही लड़के नहीं जुटेंगे। उसका प्रत्यक्ष प्रमाण तो मिल गया है। सदाशिवके उत्साह और अनुरोध पर मैंने जाड़ेमें बेल गाछके नीचे "रचनात्मक कार्यक्रम" के विषय पर क्लास लेना आरम्भ किया था। पहले हफ्तेमें कुछ लड़के आए थे। पीछे देखा, रह गए सिर्फ सदाशिव, दासजी और रामशरणजी। और—सी० एस० पी० के 'रूसकी क्रान्तिके इतिहास' के क्लासमें देखता हूं लोगोंको बैठनेकी जगह नहीं मिल रही है!—हमारे लड़के भी उसी क्लासमें जा बैठे हैं। अवश्य यह अस्वाभाविक नहीं है। निलू, बिलूके दलके प्रोग्रामकी भित्ति, आज मानवका मन जैसा उसी पर है; और हमारे कार्य-क्रमकी भित्ति हिंसा-लोभ-हीन आदर्श मानव-मन पर है। इसीलिए साधारण लोगोंको उन लोगोंका रास्ता ही ज्यादा खींचता है।........

निलू, बिलूको पढ़नेकी कैसी झोंक है? और हमारे पन्थके लोगोंको? उनकी बातें कहके क्या होगा? मेरे एक किताब लेकर बैठने पर ही कहता है—"मास्टर साहब फिर इम्तिहान दीजिएगा क्या?" हम लोगोंके दलके रामचन्द्रजी और हरिहरजी, इन दोनों आदमियोंको पढ़ने-लिखनेकी झोंक है। उनमें रामचन्द्रजी पढ़ते हैं जल चिकित्साकी किताब, और हरिहरजी पढ़ते हैं आसन और प्रणायामकी किताब। इनकी धारणा है कि गाँधीजीके मत पर जिनकी आस्था है, उन्हें पढ़-लिखके और नया क्या जानना बाकी रह सकता है? निलू क्या योंही हम लोगोंका मजाक उड़ाता है? मेरे 'टूर' में बाहर जानेके वक्त, बिलूकी माँ जब मेरे लोहेके सूटकेसको सरियाती है, तो कई दफे सुना है निलू अपनी माँसे हँसीमें

कहता है,—"माँ पुराने 'सर्वोदय' की फाइल तो रख दी है न?" बड़े छोटेका ज्ञान बचपनसे ही निलूको कम है। इस विषयमें उसमें और बिलूमें आकाश पातालका अन्तर है। निलू हमेशासे कुछ उद्धत स्वभावका है, गुस्सा होने पर उसे ज्ञान नहीं रहता है।

....घरमें अन्दर जाकर देखता हूं, रसोई घरमें बिलूकी माँ, निलू और बिलू अलग-अलग बैठे हैं—जैसे एकको दूसरेसे कोई मतलब ही नहीं। बिलूकी माँ और बिलू रो रहे हैं। और निलू झाड़ूके एक टुकड़ेसे लिपे-पुते मिट्टीके सहन पर शायद कुछ लिखता है या नक़शा बना रहा है। पास ही एक हँसुआ पड़ा है। पास जाकर देखा, बिलूकी माँने कपड़ेसे कुछ ढँकनेकी कोशिश की। मेरे जाकर पूछने पर बात जाहिर हुई। बिलूके हाथसे दावात उलट जानेसे निलूकी 'खीरकी गुड़िया' नामक किताबकी जिल्द खराब हो गई है। इसीसे निलूने गुस्सेसे बिलूका 'मार्सिडनका इतिहास' हँसुएसे काट दिया है। सचमुच दो टुकड़े कर दिया—बिल्कुल दो छोटे-छोटे नोटबुककी तरह मालूम पड़ते हैं। अजीब लड़का है! उनकी माँने भी दुलार कर-करके लड़कोंका सिर फिरा दिया है। लड़केने गलती की थी; कहाँ तो मेरे पास आकर कह देती, सो नहीं, मुझसे ही बात छिपानेकी कोशिश की जा रही थी।

"क्या सदाशिव, भूमिहार-राजपूत-जातीय महासभाकी बैठक खत्म हुई?" —कामरेड बैजनाथने सदाशिवसे व्यंग करके कहा। इशारा 'सूत्रयज्ञ' की तरफ था। बिहारके गरम दलवाले, यानी सोशलिस्ट, कम्यूनिस्ट, फारवर्डब्लाक और किसान सभाके सदस्य लोग दक्षिण पंथियोंके साथ यही कहके मजाक करते हैं कि बिहार प्रादेशिक कांग्रेस, सिर्फ स्थानीय भूमिहार और राजपूत

जातिके पारस्परिक झगड़ेका केन्द्र है। कहते हैं कि प्रादेशिक कांग्रेसमें कोई राजनैतिक दलबन्दी नहीं है, झगड़ा है जाति लेकर और व्यक्तिको केन्द्र बनाकर। बात बहुत अशमें सत्य है। जेलमें भी देखता हूं रामशरणजी और हरिहरजी जातिके अधार पर छोटे-छोटे दल बनानेकी कोशिश करते हैं—जिसमें बाहर जाने पर भी उनकी लीडरी कायम रहे। हमारे देशमें स्वराज क्या कभी होगा—कभी-कभी घृणा हो जाती है—निलू, बिलूका दल जो कहता है, सो सभी बातें गलत नहीं हैं। लेकिन ये लोग कुछ देर पहले जो सूत्रयज्ञमें बैठे थे, उससे जातीय दलबन्दीसे क्या सम्बन्ध? और मान लिया सदाशिव तुम्हारा समवयसी है; लेकिन जब वह मेरे सामने बैठा है, तो इसका मतलव है मुझ पर भी चोट करना। अपनेसे बड़ेका अदब करनेसे क्या महाभारत अशुद्ध हो जाता?

सदाशिवने जवाब दिया "चुप रह 'लालदासिया'। कहावत है कि ब्राह्मणको खिलाके, राजपूतको बाबू साहब कहके, कायस्थको टका देके और और बाकी सब जातको मार-पीटके कोई भी काम करा लिया जा सकता है। कुछ टके मिलनेसे तो अभी पार्टीको छोड़ देनेमें इधर-उधर नहीं करोगे। तुम कायस्थोंको नहीं जानता हूं क्या?"

बैजनाथ कायस्थ है। मिथिलाके कायस्थोंकी पदवी प्रायः या तो लाला या दास होती है। इसीलिए लोग यहाँ कायस्थोंको अक्सर 'लाल दासिया' कहते हैं। जमींदारका नायब, गुमाश्ता, पटवारी वगैरह इन्हींका खास काम है। इसीलिए गरीब किसानोंमें इनकी जनप्रियता कम है। इसीसे लाल-दासियाका अर्थ सिर्फ स्थानीय कायस्थ नहीं है—उसका योगरूढ़ अर्थ हो गया है, एक अर्थ लोलुप पटवारी मनोवृत्तिका जीव।

बैजनाथने कहा,—"हाँ, और एक कहावत याद है न ? बैलकी देखी घास और ब्राह्मणका देखा दही—दोनों चीजोंका इस्तेमाल एक ही तरहका है।"

सदाशिव भूमिहार ब्राह्मण है। उसने जवाब दिया—

"सो तो मैं मानता ही हूं। देखा नहीं मेरा दिया हुआ दही मास्टर साहबने खाया। कायस्थ लोग कहावतकी सचाई नहीं मानते, इसीलिए तो बात बढ़ जाती है।" उसके बाद सदाशिव टेबिलसे उतर कर बैजनाथके पास गया। दोनों फुस्-फुस् करके क्या-क्या बातें करते रहे। उन्हें अचानक कौनसी गोपनीय बात याद पड़ गई ? आज बैजनाथके दलके एक स्थानीय नेता कामरेडकी फाँसी है, लेकिन इनके काम-काजमें और दिनोंसे तो कुछ विशेषता नहीं देखता हूं। वही पर्देमें घिरा क्लास, वही हँसनेकी आवाज, बीच-बीचमें वैल्यू (Value), लेबर पावर (Labour powr), सरप्लस वैल्यू (Surplus Value) आदि शब्द और दिनोंकी तरह कानोंमें आ रहे हैं। मेरी बाईं तरफ जो लोग रहते हैं, उनका जीवन भी तो प्रायः अन्य दिनोंकी तरह ही देखता हूं। कहीं एक खोंच भी नहीं लगी। नहीं, शायद सब अनुभव कर रहे हैं—नहीं तो दासजीको छोड़ कर और लोग अबतक जागते क्यों रहेंगे ? भूषणजी, विशुनदेवजी मशहरी लगाकर लेटे हैं ठीक, लेकिन उनकी बात-चीत तो कुछ देर पहले ही सुनी है। वे लोग सोए नहीं है। बहुत सीटों पर मशहरी गिरी है, इसलिए अधिक दूर तक देखा नहीं जा सकता—तब कानमें बात-चीतकी आवाज आती है। वही आस्कर वाइल्डकी (Ballad of Reading gaol) की फाँसीकी रातकी कई पंक्तियाँ याद आती हैं।

But there is no sleep, when men must weep
Who never yet have wept :
So we the fool, the fraud, the knave—
That endless vigil kept,
And through each brain, on hands of pain
Another's terror crept....

और याद नहीं आती है। कबका मास्टरी छोड़ चुका हूं। वह क्या आजकी बात है? यही कई पंक्तियां जो याद हैं वही आश्चर्य है! याद करनेकी कोशिश करता हूं। अभी और याद नहीं आयेगी। बादमें अचानक किसी अनावश्यक मुहूर्त्तमें अप्रत्याशित रूपसे याद आजायगी। ये सभी लोग क्या डरसे जाग रहे हैं? शायद सहानुभूतिसे। नहीं, यह जागना अपनी इच्छासे नहीं है। कोशिश करने पर भी इन्हें नींद नहीं आ रही है। बातें करके ये लोग मनके बोझिल भावको हल्का करना चाहते हैं। खुद मेरा मन भी तो खूब शान्त है। शायद मैं, अपने लड़कोंसे जितना गहरा स्नेह करना चाहिए, उतना गहरा स्नेह नहीं करता हूं नहीं तो मेरे मनमें अभी भी वैसी बेचैनी क्यों नहीं है? बैजनाथके सीटके बगलमें सदाशिव और बैजनाथने कई कुर्सियां ला रखीं। इतनी रातमें फिर कुर्सियोंसे क्या होगा? सदाशिव उसके बाद आकर मेरी खाट पर बैठा। मैं नीचे कम्बल पर बैठा हूं। बैजनाथ, लछमी चतुर्वेदी, रामप्रकाश, गिरधर कुर्सियों पर बैठे। ये लोग सारी रात जागेंगे क्या? बिलूको भी रातमें जाग कर पढ़नेकी आदत है। कितनी दफे मना किया है। अभी बिलू क्या करता है? शायद पागलकी तरह सेलमें चहलकदमी कर रहा है। उसे

क्या एक बार अपने पिताकी बात याद नहीं आयेगी ? डरने वाला लड़का वह नहीं है, लेकिन न तो चरखा कातता है, न भगवान्में विश्वास है। आज रातमें इन दोनोंमें एक भी रहनेसे मनमें कितना बल पाता ? स्कूलका संस्कृत पंडित जेलमें धर्म-शिक्षक है। रविवारको जेलमें हिन्दू कैदियोंको धर्मोपदेश देनेके लिए आते हैं। मैं जब हेडमास्टर था, तभी पंडितजी नौकरीमें घुसे थे। इसी लगावसे उस दिन भेंट करने आए थे। बिलू उनका छात्र था। वह दुःखित होकर गये,—कि वह बिलूके सेलमें गए थे, बिलू बोला कि धर्मोपदेशकी कोई जरूरत नहीं। पंडितजीने और भी कहा था कि बिलू उन्हें पैर छूकर प्रणाम करना नहीं भूला। बिलू यह सब भूलने वाला लड़का नहीं है। अच्छा भगवान्में विश्वास रहनेसे क्या सचमुच साम्यबादी नहीं हो सकता ? कितने गेरुआ पहने हुए स्वामीजीको देखता हूं, उन सबके दलके कार्यकर्त्ता हैं। वे लोग भी क्या भगवान्में विश्वास नहीं करते ? उस दिन एक एसिस्टैंन्ट जेलरके हाथ पाकेट गीताकी एक प्रति बिलूको देनेके लिए भेज दी थी।

असिस्टेन्ट जेलरने दूसरे दिन किताब लौटाते हुए कहा "आपके लड़केने कहा है कि इस किताबकी जरूरत नहीं, दूसरी अच्छी किताब दें तो पढ़ सकता हूं।" मेरे पास कई दूसरी किताबें थीं। उन्हीं किताबोंको बिलूके पास पहुंचा देनेके लिए उनसे अनुरोध किया था। वे बोले "धर्म पुस्तक देनेका मेरा अधिकार है। डिविजन थ्री कन्डेम्ड प्रिजनरको दूसरी किताब देनेके लिए सुपरिटेण्डेण्डका हुक्म लेना पड़ता है। साहब बहुत ही नर्म मिजाजके और अच्छे आदमी हैं। उन्होंने आपके लड़केसे पूछा भी था कि किसी चीजकी जरूरत है कि नहीं। लेकिन कैदीने तो खुद ही कहा कि उसे किसी चीजकी जरूरत नहीं है।"

ठीक ही कहा है। बिल्लूसे ऐसी ही बातकी उमीद की जा सकती है। अन्त समय तक सिर ऊँचा किए बिल्लू चला जायगा। मेरा नाम उज्ज्वल करके, सब प्रकारकी हीनता को ठोकरें मार कर, गौरवोज्ज्वल मुख पर लापर्वाहीकी हँसी लिए, ननमिलिटैन्ट बिल्लू चला जा जायगा!........

गत महायुद्धके बादके एक व्यग चित्रकी बात याद आती है। "पञ्च" में निकला था....... दो बूढ़े लार्ड अपने चर्बी वाले अच्छी तरह पाले गए शरीरको एक बहुत 'एरिस्टोक्रेटिक क्लब' के मोटे गद्देदार सोफे पर लुढ़काये हुए बैठे हैं। मुंहमें चुरूट, टेबिल पर बोतल, गिलास। दोनों आदमी होड़ लगा कर गप्पें लड़ा रहे हैं—किसके कितने लड़के युद्धमें मारे गए हैं। लड़केके मरनेसे कोई दुखी नहीं हैं—। दूसरेको हरा सकनेके गर्वके सामने लड़केकी मार्मिक मृत्यु एक अत्यन्त गौण घटना है। किन्तु उन लोगोंके गर्वकी भित्ति इसी घटना पर है। वह बात कौन सोचता है? मेरा गर्व भी ऐसा ही हास्यास्पद है। जिसके साथ पिताका कर्त्तव्य नहीं किया, उसी पुत्रके किए हुए कामके गौरवका हिस्सा लेनेमें मेरा मन कुण्ठित नहीं होता है!.......मैं अगर इस रास्ते पर नहीं आता तो आज क्या बिल्लूकी यह हालत होती? मेरे पिता सरकारी नौकरी करते थे; मैं सरकारी नौकरी करता था; मेरा लड़का भी अन्य गृहस्थ-घरके लड़केकी तरह पढ़ना-लिखना खत्म करके अर्थोपार्जन करता, स्त्री-पुत्र-परिवारको लेकर घर-द्वार बसाता। मुहल्लेके बूढ़े मित्तिर महाशयने ठीक ही कहा था। विवाह करनेके बाद, खास करके अगर सन्तान रहे तो किसीको अपनी इच्छानुसार जीवनको चलानेका अधिकार नहीं रहता। उस समय उसका जीवन सिर्फ अपना नहीं है। उस पर और भी बहुतोंका हक पैदा हो गया है।

मेरे तो पैसे भी नहीं थे, उसकी बात भी नहीं। जिन्हें पैसे रहें, वे ऐसी हालतमें स्त्री-पुत्र परिवारके लिए कुछ इन्तजाम पहलेसे ही करके रख सकते हैं। लेकिन इससे क्या कर्त्तव्य पूरा हो गया? इससे लड़के-बच्चे शायद कुछ आरामसे रह सकते हैं; लेकिन आरामसे रहना ही क्या संसारमें एकमात्र आवश्यक है? गार्हस्थ्य जीवनमें जो मधुर सम्बन्ध आपसमें पैदा हो जाते हैं, उनकी क्या कुछ कीमत ही नहीं है? राजैश्वर्यमें रख गये थे, इसीलिए क्या सिद्धार्थने सन्तान और स्त्रीके प्रति सुविचार किया था?

बिलूको अंग्रेजी कालिजमें नहीं पढ़ाया। उसकी माँके बहुत अनुरोधसे हाईस्कूलमें मैट्रिकुलेशन तक पढ़ाया था। अगर मेरी मर्जीसे काम होता तो शायद अंग्रेजी स्कूलमें इतना पढ़ाया नहीं होता। मेरी इच्छा थी उसे बिहार विद्यापीठमें भेजने की। बिलू अंग्रेजी स्कूलमें पढ़ता था इसलिए मुझे सहकर्मियोंसे बहुत किस्मकी बातें सुननी पड़ीं। महात्माजीने जब हम लोगोंके आश्रममें पांवकी धूलि दी थी, तब जायसवालजीकी बहनने यह बात उनके कानों तक पहुँचा दी थी। भद्र महिला पर कुछ पागलपनका असर है। लेकिन मैं जानता हूं कि उन्होंने अपने आप ये सब बातें महात्माजीसे नहीं कहीं। मेरे ही किसी शुभेच्छु सहकर्मीके कहनेसे उन्होंने यह काम किया। महात्माजीने इसके बारेमें मुझे उस समय कुछ नहीं कहा।—"इतने बड़े देशमें सब किस्मके लड़के तो रहेंगे। मेरे लड़के भी तो मुझे दोष देते हैं।" —सिर्फ यही कहके हँसके बात उड़ा दी। मेरा माथा लज्जासे नीचा हो गया। और इस बातकी तीव्रताका बिलू और बिलूकी माँने खूब अनुभव किया था। इसीलिए बिलूके मैट्रिकुलेशन पास करनेके बाद उसकी माँ और उसने ठीक किया कि उसका काशी-विद्यापीठमें पढ़ाना ही ठीक है। अंग्रेजी कालिजमें

जितना पढ़ने पाता, उससे क्या कम सीखा है वह, निलू तो बी० ए० पास है। वह क्या कोई विषय बिलूकी अपेक्षा अच्छा जानता है? बिलूके दलके अधिकांश लोग तो कालिजमें पढ़े हुए हैं,—बी० ए०, एम० ए० पास किए हुए। फिर क्यों तब बिलूके पास पढ़ने जाते थे? लेकिन यह सब होते हुए भी यह साफ मालूम पड़ता है कि लोग विद्यापीठके शास्त्रीकी अवहेलना करते हैं।—जिस दिन बिलूके पास करनेकी खबर आई, मैं चिट्ठी हाथमें लेकर बिलूकी माँको खबर देने घरके अन्दर गया था। बोला, "आजसे बिलूका नाम हुआ पूर्णचन्द्र शास्त्री"।—मैंने सोचा था—बिलूकी माँ में कितना उत्साह देखूँगा। किन्तु देखा मेरी बातका कुछ भी जवाब नहीं दिया,—सिर झुकाए अनमने भावसे बरी पारती रही।—उसके बाद भी बहुत दफा देखा है पढ़ने-लिखनेकी बात उठनेसे बिलूकी माँ उस बातको दबा देनेकी कोशिश करती है। इन्हीं सब अनेक कारणोंसे बिलूमें (in feriority complex) आ गया है। बिलूकी माँ भी मन ही मन समझती है कि उसके लड़केकी उच्च शिक्षा नहीं हुई—लड़केका कसूर नहीं है, झमेलेमें पड़ गया; और खास कर मेरे ही कसूरसे। सचमुच बिलूके ऐसा बुद्धिमान लड़का अगर सुविधा पाता, तो शायद बड़ा प्रोफेसर या विख्यात वैज्ञानिक होता। नई-नई खोजमें उसका संसार भरमें नाम होता। और मैंने उसे ऐसी हालतमें ला पटका है, जिससे जेलमें आने पर ही विश्राम, आराम या शान्ति मिल सकती है। ऐसी परिस्थितिमें वह आदमी बना है, जहां फांसीका हुक्म सामान्य दुर्घटनाके सिवा और कुछ नहीं है। लेकिन बिलू मूर्ख नहीं है, उसमें अच्छा बुरा विचारनेकी ताकत है। बड़ा होकर उसने अपनी राह खुद चुन ली है। इसके सिवा और दूसरा वह करता ही क्या?........

चौंक उठा हूं। इस तरहसे दरवाजेमें धक्का दिया जाता है? दरवाजा बन्द है कि नहीं—यही देखना तो तुम्हारा काम है। इसके लिये इतनी ताकत दिखानेकी क्या जरूरत है? बगलकी सीटसे एक आदमी बोल उठा—"हां, तोड़ो; तोड़ दो।" और एक मशहरीके अन्दरसे कोई-साथ-ही-साथ बोला,—ऐसा हो तो फिर क्या कहना?

तो एक बजे रातका वार्डर आ गया। वार्डरने मुझसे आंखें मिलने पर हाथ जोड़के नमस्कार किया। उसके बाद बैजनाथ वगैरह चार आदमी जहां कुर्सी पर बैठे थे, उसी तरफ घूमके बोला "नमस्ते! बाबू साहब लोग मजेमें हैं न।" लछमी चतुर्वेदी बोला "अरे सिंहजी हैं। बहुत दिनके बाद तुमको यहां ड्यूटी पर देखता हूं। बात क्या है?"

"एक हफ्तेकी छुट्टी लेकर घर गया था। कल 'ज्वाइन' किया है। लड़ाईकी खबर-उबर कहिए।"

"अरे! हम लोग खबर देंगे तुमको? हम लोग जेलमें रहते हैं। कहां तो तुम हम लोगोंको बाहरकी खबर दोगे, सो नहीं तो हम लोगोंसे ही खबर सुनना चाहते हो!"

"हजूर लोग अंग्रेजी अखबार पढ़ते हैं। इसीलिए पूछता था।" उसके बाद वार्डर साहबने शुरू की लड़ाईकी, शहरकी, अपने देशकी, महात्माजीकी अजूबा खबर।—मालगाड़ीमें लादकर कितने सियार और गिद्ध लड़ाईके मैदानमें ले जाए जाते हैं; महात्माजीने जिस दिन अनशन आरम्भ किया था, उस दिन क्या जाने कैसे अचानक फट्से लाट साहबके घरकी छत फट गयी थी; महात्माजीसे भिड़नेसे उस बार राजकोटके दीवानको क्या हुआ था;—और भी बहुत-सी खबरें। इन्हीं खबरोंको कहनेके लिए वह परेशान

हो रहा था। उसकी शुरु की प्रश्नावली तो सिर्फ इसीकी भूमिका थी। उसके बाद वह बैजनाथ वगैरहकी खिड़कीके बाहर बरामदे पर बैठ गया, खूब जमकर गप्पें उड़ानेके लिए। और दिन 'नाइट ड्यूटी' के वक्त कोई जगा नहीं रहता है। उस समय बड़ा अकेला-अकेला लगता है। ऊँघकर खैनी खाकर, पहरावालोंको जगाकर और चहलकदमी करके भी दो घण्टेका वक्त जैसे कटता ही नहीं। उन लोगोंकी बातचीतके बीच वार्डर आके बैठा रहे, यह बात शायद बैजनाथके दलको अच्छी नहीं लगी।

बैजनाथ बोला—"सिंहजी तुम लोगोंने द्वापरमें किशुनजीकी मांको और किशुनजीको बन्द किया था, जेलमें। और इस युगमें महात्माजीको और उनके शिष्योंको बन्द किया है।" "कर्ममें लिखे हुएको मिटानेका कोई उपाय है? लेकिन किशुनजीको कितने दिनतक रोक सका था। आप लोगोंको बाबू कितने दिन जो रहना है इसका क्या कुछ ठीक है; यह कम-बख्त लड़ाई भी कभी खत्म होगी, ऐसा नहीं लगता है।"

बैजनाथका दल हो-हो करके हँस उठा। सिंहजीको उन्होंने फंदेमें फँसाया है। "राधाकिशुन" बोलनेसे ही सिंहजी चिढ़ जाते हैं। वह कहता है "बोलो सीताराम"! आज अनजानमें उसने खुद ही किशुनजीका नाम लिया है। शरमाके हँसते-हँसते, दोनों हाथसे एक दफा ताली देते, सिपाहीजी दौड़के यहांसे चला गया। बैजनाथ वगैरहने पुकारा, "सुनो-सुनो सिंहजी हम लोगोंके छूटनेकी खबर।" कौन उनकी बात सुनता है;— सिंहजी तब तक वार्डकी दूसरी तरफ चला गया। वार्डरोंके हाथमें एक लालटेन रहती है। सिंहजी अपनी लालटेन खिड़कीके सामने छोड़ गया है। कामरेड गिरधरने, सींखचोंमेंसे हाथ बढ़ाकर, उसकी लालटेनका तेल एक

चायके प्यालेमें ढाल दिया। उसके बाद प्याला भीतर लाकर तेल अपनी लालटेनमें ढाला। आज-काल लड़ाईके जमानेमें किरासन तेलकी बड़ी कमी है।····वे लोग सभी रिहाई पानेके बारेमें बातें करते हैं। होम मेम्बरके स्टेटमेन्टका सुर, एमरी साहबने पार्लामेन्टमें क्या कहा है, कि किन-किन कांग्रेस-कार्यकर्त्ताओंको छोड़ा गया है,—इन सबोंके आधार पर वे लोग सोच-विचार, वाद-विवाद कर रहे हैं कि गवर्मेन्टके विचारमें कोई परिवर्त्तन हुआ है कि नहीं। जेलमें आकर पहले तो चैनकी साँस लेकर जान बचती है—लेकिन कुछ ही दिनोंमें जेल-जीवन बड़ा नीरस लगता है। उसके बाद शुरू होता है—दिन-रात सिर्फ छूटनेकी बात—अखबारोंसे उसके पक्ष और विपक्षमें प्रमाण इकट्ठा करना। फूदन बाबूने अपनी तबीयतसे छूटनेके प्रमाण इकट्ठा करनेका ठीका लिया है। अखबार पढ़नेके बाद उसके चारों ओर कैसी भीड़ लग जाती है! विशुनदेवजीने इस विषय पर तुलसीदासकी नकलमें एक दोहा भी बनाया है। रोज जैसे ही 'मेट' अखबारोंका बोझा लेकर पहुँचता है, कोई न कोई इस दोहेको दुहराता है—

"तुलसी ढूँढ़त जेलमें वह बढ़िया अखबार,
जिसमें चरचा सुलहकी करती हो सरकार।"

अर्थात् तुलसीदास जेलमें वह सुन्दर अखबार ढूँढ़ते हैं, जिसमें लिखा है गवर्मेन्ट हम लोगोंके साथ सन्धिकी बात चला रही है।

आज नहीं तो किसी न किसी दिन तो सभी छोड़े जायँगे। किन्तु बिलू? बिलूको तो साथ नहीं ले जा सा सकूँगा। मैं बूढ़ा हो गया हूं—मुझमें अभी भी जीनेकी कितनी ख्वाहिश है? और बिलूकी उम्र ही क्या है? उसके सामने अभी तो सारा जीवन ही पड़ा था। और, मैं ही

लौटकर जाऊँगा—बिलू नहीं! बिलूकी शादी कर देनेसे शायद गांधीजीके मनमें विश्वास रहता। विवाहके बाद जीवनकी उच्छृङ्खलता कम जाती है—जवाबदेही बढ़ती है। इससे शायद बिलू साम्यवादके खतरनाक रास्ते पर पाँव नहीं बढ़ाता। "सर्वोदय" में काका कालेलकरने उस लेखमें हँसी-मजाकमें मोटा-मोटी ठीक ही बात कही थी। उन्होंने दिखाया था कि कांग्रेस नेताओंमें जिन-जिनकी स्त्री हैं, उनका स्वभाव खूब नरम है,—और जो अविवाहित या विपत्नीक हैं, वे लोग जरा जानमारू किस्मके हैं। जवाहरलाल, सुभाष बोस, वल्लभ भाई पटेल कोई ठण्ढे मिजाजसे किसी चीजको सोच नहीं सकते हैं। नहीं, साम्यवादी दलमें नहीं मिलने पर भी शायद बिलूको नहीं बचा सकता। इस आन्दोलनमें कितने लोग मारे गए हैं, रोजकी जिन्दगीमें जिन्हें राजनीतिसे कोई मतलब नहीं था। महात्माजीके शिष्योंमें भी तो कितने लोगोंने हिंसात्मक काम किया, इसका ठिकाना है? जन्म और मृत्यु किसीकी मुट्ठीकी चीज नहीं है।·········

·········सरस्वतीके साथ बिलूकी शादी कर देनेसे बड़ा अच्छा होता। दोनों ही सुखी हो सकते। बड़ी अच्छी लड़की है सरस्वती। अगस्त महीनेमें पुलिसने उसे पकड़ लिया। तीन महीनेके बाद उसे सबूत नहीं मिलनेपर छोड़ दिया। फिर २६ जनवरी स्वाधीनता दिवसमें जेलमें आई है। उसके साथ शादी होनेसे दोनों ही राजनीतिके कामोंके साथ-साथ घर-संसार भी बसा सकते। लेनिनने भी तो शादी की थी।········

कपिलदेव और उसकी माँने मेरे पास प्रस्ताव भी किया था। उनके अपने ही वंशमें कुछ गोलमाल है। नहीं तो ऐसा कम पढ़-लिखा भूमिहार ब्राह्मण-परिवार बंगालीके घर लड़की देनेको राजी होना? मुझे इसके लिए

बिल्कुल आपत्ति नहीं थी। बिलूकी मांका मत नहीं हुआ। और बिलूका विचार तो पूछा ही नहीं गया। आजकलका लड़का,—उसका विचार, मुझे पहले ही पूछना उचित था। लेकिन बिलूकी मांका ही जब मन नहीं था, तब फिर बिलूसे ही पूछ कर बात बढ़ानेसे क्या लाभ? बिलूकी मांने ही मुझे बहुत दिन पहले ही कहा था कि बिलूके मतसे राजनैतिक कार्यकर्त्ताको विवाहका शौक रखना ठीक नहीं। लेकिन सरस्वतीके साथ जोड़ी बड़ी अच्छी लगती। आजकलके मध्यवित्त बंगाली घरकी लड़कीसे सरस्वती कहीं ज्यादा काम की है। उसका स्वास्थ्य भी खूब अच्छा है। देखने सुननेमें भी अच्छी है। देखते-देखते तो इतनी बड़ी हो गई। कपिलदेवका मामला-मुकदमा सदरमें लगा ही रहता है—और इसी कचहरीके कामसे आकर वह आश्रममें ही ठहरता है। आने के समय प्रायः हमेशा सरस्वतीको ले आता था। यही तो उस दिन भी, गुलाबी रंगकी साड़ी पहने, गोरी-चिट्टी लड़की गुलाब बागका मेला देखनेके लिए बैलगाड़ी पर चढ़कर कपिलदेवके साथ आश्रममें आई थी। हम लोगोंकी लड़की होती तो इस उम्रमें फ्रॉक पहनती। रसोईघरके बरामदे पर बिलूकी मांने उसे खानेको दिया। दूधकी कटोरीमें मुँह लगाते ही लड़की रोने लगी। किसी तरह बोलेगी ही नहीं, क्यों रोती है। पीछे सहदेवके आने पर, उसके बक-झक कर, खुशामद और दुलार करने पर रोनेका कारण निकला—"दूधअ फिकअ लगैछे"—यानी उसे भैंस का दूध खानेकी आदत है गायका दूध उसे पनसोर लगता हैं, इससे खा नहीं सकती है।······ शादी नहीं हुई, अच्छा ही हुआ। होनेसे तो सिर्फ एक अभागिनी की संख्या बढ़ती? मेरा ही बोझ बढ़ता। और भी जकड़ जाता। इसके अलावा, मैं ही और कितने दिन बचूँगा। उसके बाद निलू तो है। निलूका रहना और नहीं रहना! वह

रहकर भी नहीं है। उसपर भरोसा किया तो हुआ। वह खामखयाल और गैरजिम्मेवार है। एक बिलूके पास ही तो वह जरा ठण्डा रहता है। वह क्या और किसीको आदमी समझता है या और किसीकी बात सुनता है? बचपन से ही वह शासनसे बाहर है। बड़ा होकर कुछ शान्त और गभीर हुआ है। बचपनमें कितना शैतान था। रोज एक न एक बदमाशी लगी हुई है।....

........एक बार दुर्गा बाबूका एक बत्तक काटके पका रहा था, आश्रमके पश्चिम बाँसबाड़ीमें। दुर्गा बाबूने बिगड़ते हुए आकर नालिश की। उनको साथ लेकर निलूको खोजने निकला। दुर्गा बाबूका बड़ा लड़का साथमें था। उसीने घरमें खबर दी थी। बांसकी झाड़ीमें आसामी और माल पकड़ा गया। साथमें मुहल्लेके और भी कई लड़के थे—और सबसे आश्चर्यकी बात थी कि दुर्गा बाबूका छोटा लड़का 'नरू' भी उन्हीं लोगोंमें था। निलूसे 'बत्तक' काटनेकी बात पूछने पर बोला—"हाँ हम सबोंने मिलकर 'बत्तक' मारा है।"—वह जैसे इस प्रश्नके लिए तैयार बैठा था। पीछे जिरहमें पता चला कि छुरी नरूने लाई थी—काटा था निलूने। काटनेके पहले निलूने सबसे शर्त करा ली थी कि काटनेके वक्त सभी उसे छूते रहेंगे। उसने काटा था और उसके पीछे नरू वगैरह एकके पीछे एक, बच्चोंके रेलगाड़ी खेलनेकी तरह पीठ पकड़ कर खड़े थे।........इतना फंद भी उसके माथेमें भरा रहता है!........

निलूकी मजबूत सीधी देह, भावुकताहीन मुख, बिलूकी बगलमें ठीक मेल नहीं खाती है। आज-कल देखनेमें निलू ही बिलूसे बड़ा मालूम होता है। वह जो चाहेगा सो करेगा ही। उसके अदम्य साहसके सामने सारी बाधा-विपत्ति भी तुच्छ मालूम पड़ती है। निलूको कुछ कहनेमें डर-सा मालूम

पड़ता है। उसके मुँहमें तो कुछ रुकता नहीं। लेकिन बिलूको कुछ कहनेके पहले अपने ही मनमें सोच लेता हूं कि मेरी बात इसके भावुक मन पर कुछ चोट तो नहीं पहुंचावेगी? बिलू मुँह खोलके कुछ कहेगा नहीं—लेकिन हो सकता है उसकी आँखोंमें आँसू आ जाँय। और निलू—निलू तो मेरे दिल पर चोट पहुंचानेका मौका पाने पर छोड़ता नहीं है। निलूके जिस समय कालिजमें पढ़नेकी बात पहले पहल उठी, मैंने रोका नहीं। क्योंकि मैंने देखा कि निलूकी इच्छा तो है ही;—तिस पर बिलू और बिलूकी माँ की भी इच्छा है की वह अग्रेजी कालेजमें पढ़े। वह काशी विद्यापीठमें पढ़ कर संतुष्ट नहीं हुआ है, और उसकी माँ विद्यापीठमें पढ़नेको पढ़ना ही नहीं समझती है।········सब ठीक हो गया। इसी बीच निलू बोल बैठा कि वह गांधी-सेवा-संघके पैसेसे कालिजमें नहीं पढ़ेगा। इतनी बातें भी उसके माथेमें भरी रहती हैं। नौकरी करनेके समय जो थोड़े-बहुत रुपये-पैसे जमा किए थे, उसमेंसे खर्च करके खाते-खाते करीब-करीब सब खत्म हो रहा था। अपने पैसेसे आश्रमकी नींव डाली थी। इसमें भी बहुत रुपए खर्च हो गए। तीन बार जुर्मानेमें भी लगभग नौ सौ रुपए चले गए। बहुत लोगोंने कांग्रेसके नामसे मुझे सहायता देनेकी कोशिश की, उसे लेनेसे भी मैंने इन्कार किया। और-और आश्रमोंमें जिस तरह चंदा वगैरह उगाहा जाता है;मेरे आश्रममें शुरुसे ही वह सब मना था। चंदा लेनेसे आत्म-सम्मान रखना जितना मुश्किल है, निष्पक्ष और निर्भीक भावसे काम करना भी उतना ही असम्भव है। धनकी कमीसे जब मेरा संसार चलना मुश्किल हो गया, ऐसे ही समयमें खबर मिली कि गाँधी-सेवा-संघसे मुझे पचहत्तर रुपए माहवार मिला करेंगे। महात्माजी मालूम होता है सब जान गए। ये रुपये

नहीं मिलनेसे मुझे आश्रमकी आमदनी पर ही निर्भर करना होता। आश्रमकी आमदनी ही कितनी है? दो बैलगाड़ियाँ भाड़ेपर चलती हैं। दो तेलके कोल्हू हैं, एक ग्रामोद्योग भंडार, कपड़ा साफ करनेका साबुन तैयार करना और कई दैनिक पत्रोंकी एजेन्सी, यही तो आमदनीके जरिए हैं। मधुमक्खी पोसने और रेशमके कीड़े पालनेके काममें हमारे आश्रमको कभी ज्यादा नफा नहीं हुआ। तब हाँ तरकारीकी बाड़ीसे आश्रमके लोगोंके खानेके लायक साग-सब्जी मिल जाती है। लेकिन इतना करने पर भी आश्रमकी जो आमदनी होती है, उससे आश्रमके स्वयं-सेवकों का खाना, पढ़ना चलना मुश्किल है। उस पर अगर हमारे संसारका खर्च आश्रमकी आमदनीसे चलाना होता, तो कहाँ रहता आश्रमका पाठागार और कैसे चलती जिला कांग्रेसकी साप्ताहिक पत्रिका? जिला कांग्रेसके और-और खर्च से तो आश्रमका कोई सम्बन्ध ही नहीं है। इन सब दुश्चिन्ताओंसे गाँधी-सेवा-संघकी माहवारीने मुझे बचा दिया था। इन रुपयोंको लेना कुछ अपमान-जनक हो सकता है, यह बात मेरे मनमें आई ही नहीं। ये रुपए मुझे जिस संस्थासे मिले, वह चाहे किसी करोड़पति का दान ही क्यों न हो,—मैं तो जानता हूं कि यह महात्माजीका आशीर्वाद है,—उनके सेवकको असुविधा होती है इसलिए उन्होंने इसका इन्तजाम कर दिया है। और निलू बोल बैठा कि वह कालिजमें नहीं पढ़ेगा—क्योंकि तब उसे गाँधी-सेवा-संघके रुपए लेने पड़ेंगे! गाँधीजी की जायसवालजी की बहनके साथ उस बार की बातचीत सबको याद थी। कोई जोर भी नहीं डाल सकता था। बिलू और बिलूकी माँ भी देखता हूं निलूके मतका ही समर्थन करते थे। देखता हूं मेरे दृष्टिकोणसे कोई इस बातको नहीं देखता है। मेरे और मेरे परिवार के बीचका व्यवधान एक जगह इतना गहरा है, उसे पहले मैं सोच भी नहीं सका था। बिलूकी

माँकी सहन करनेकी शक्ति को ही मैंने उत्साह पूर्ण सम्मति समझकर भूल की थी। लड़कोंके दूसरे राजनैतिक पथ पकड़ लेनेकी जड़में भी शायद यही आन्तरिक द्वन्द्व रहा है। उसके बाद देखा निलूने कालिजमें भी पढ़ा—मेरा एक पैसा लिया भी नहीं। कालिज के खर्चका बिलूने जोगाड़ किया था। विहार भूकम्प-सहायता का काम कांग्रेस-कर्मियोंके ऊपर पड़ा था। इस कामका पूर्णियाँ जिलाका, एकाउन्टैन्ट था बिलू। उससे वह तीस रुपए माहवार पाता था।—ये रुपए वह निलूके पढ़नेमें खर्च करता था। भाईसे रुपए लेनेमें निलूको उज्र नहीं हुआ—जितना भी सकोच था वह मेरे रुपए लेने में था। इतना बड़ा कठोर आघात मैंने जीवनमें और किसीसे पाया है कि नहीं, इसमें सन्देह है।········और यह बात मन ही मन ठीक जानता हूं कि पढ़ना-लिखना छोड़कर निलूको किसी भी क्षेत्रमें क्यों न छोड़ दिया जाय, वह उस क्षेत्रमें सबसे ऊँचा उठेगा ही। और बिलू पढ़ानेके काम को छोड़कर और किसी ओर रहनेसे विशेष सफलता नहीं पाता। कितने लड़के इन्हीं हाथों से निकलते रहे हैं और इतना भी मैं न समझूंगा? किन्तु, निलू अपने भाईके खिलाफ तुम्हारी गवाही देनेका मतलब मैं समझ नहीं सका। तुम्हारी पार्टीने आदेश किया हो तो मुझे कुछ कहनेका नहीं है। महात्माजीका आदेश होनेसे मैं भी अपना सब कुछ छोड़ देनेको तैयार हूं। लेकिन कोई राजनैतिक पार्टी क्या ऐसा आदेश दे सकती है? निलू और बिलू दोनोंके दलोंका लक्ष्य एक है—कार्यक्रममें शायद कुछ भिन्नता हो गई है। इसका असर क्या इतनी दूर तक जा सकता है? जनमतके ऊपर जो पार्टी निर्भर करती है, उसका तो एकमात्र कर्त्तव्य होना चाहिए जनताको अन्य दलकी भूलोंको बतलाना, और समझाके भूले-भटके जनमतको अपनी ओर करना। निलूको जरूर आदेश

समझनेमें गलती हुई है, और इस गलती का फल भोगना ही पड़ेगा। मैं तुम लोगोंके 'फार्मूला' में बठायी हुई युक्ति समझ नहीं सकता हूं यह ठीक है, लेकिन साधारण बुद्धिसे तो जितना समझता हूं सो ठीक है कि नहीं, यह बात अपने दलके नेताओंसे पूछ लेना। और अब यह ठीक हो या गलत उससे क्या आता जाता है? अन्याय और हानि जो होनेकी थी हो गई। सारी जिन्दगी उठते-बैठते तुम्हें यह बात खोंचा देगी। तिल-तिल करके अनुतापकी ज्वाला तुम्हें जलावेगी—तो भी तुम्हारे किए हुए कर्म का प्रायश्चित्त नहीं होगा। यह क्या, अपने लड़केको अभिशाप दे रहा हूं क्या? नहीं निलू, भगवान करें तुम कभी अपनी भूलको नहीं समझो। तुमने अपने दलके आदेशके बारेमें जो समझा है, वही जैसे ठीक हो। क्योंकि उसके ऊपर भार देकर ही तुम अब भी खड़े हो। तुम्हारे मनकी ताकत चाहे कितनी भी क्यों न हो, तुम्हारी युक्तिके न्यायसंगत होनेमें सन्देह होनेसे ही तुम टूट जाओगे। मैं तो जानता हूं तुम्हारे लिए तुम्हारा भाई क्या था।

"महाशयजी!"

आँखें उठाकर देखता हूं, खेदनलालजी मेरे सामने खड़ा है। "नींद नहीं आती है क्या?"

नहीं बैठे तो अच्छा। बैठेगा तो अभी बेकार बातें करता रहेगा। इतनी बेकार बातें कर सकता है भला आदमी। भले आदमी के तीन लड़के हैं—स्वराज प्रसाद, स्वतन्त्र प्रसाद और संगठन प्रसाद। विचित्र नाम हैं। निलू और बिलू—मेरे लड़कोंके नाम एकदम साधारण हैं। सोच विचारके नाम नहीं रक्खा जाता है। बाबूजी बिलूको 'बलाई' कहकर पुकारते थे,—उसीसे

धीरे-धीरे बिल हो गया। निलूको बाबूजीने शायद नहीं देखा था। नहीं, जिस बार निलू हुआ था, उसी बार बाबूजी मर गए। सोच विचार के नाम रखना भी एक झंझट है। खेदनलालजीने अपने झँझले लड़के स्वतन्त्र प्रसादको चिट्ठी लिखी थी। चिट्ठीमें और-और लड़कोंके नाम भी थे। जेल सी० आई० डी० उस चिट्ठीको किसी तरह पास नहीं करनेका। उसका विश्वास था कि 'कोड' में कोई खबर भेजी जा रही है। उसके बादसे ही सी० आई० डी० से इनका झगड़ा चलता है। ठीक तरहसे समझा देनेसे ही होता सो नहीं, दोनों आदमी अपनी-अपनी जिद बनाए रखेंगे। भले आदमीने छोटे लड़के को चिट्ठी लिखी थी। जिद्दाजिद्दीमें परसों वह चिट्ठी भी वापस आई है। चिट्ठीमें एक पंक्ति थी—"तुम लोगोंने जो इतने दिनों तक चिट्ठी नहीं पाई उसमें मेरा हाथ नहीं था। इस चिट्ठीको कोई उल्लूका बाप भी नहीं रोक सकेगा।" वह चिट्ठी भी वापस आई—साथमें एक टुकड़े कागजमें लिखा सी० आई० डी० का नोट—"इस कैदीने चिट्ठीमें अपने बापके बारेमें क्या सब लिखा है, वह सन्देहजनक मालूम होता है। इसीलिए यह चिट्ठी पास नहीं की गई।"

यह क्या, खेदनलालजी उठकर जा रहे हैं, जो अभी मेरे अनुरोधसे कम्बल पर बैठे और अभी चले जा रहे हैं। मालूम होता है मैंने बात नहीं की इसलिए उठ गए। क्या समझा भले आदमीने ? भले आदमी जाकर बैजनाथ वगैरहकी कुर्सी पर बैठे। बैजनाथका दल सो गया है, शायद बैठे हैं खेदनलालजी, सूरजबल्ली बाबू, हरिहरजी और रामशरणजी। शायद ये बारी-बारीसे रात जाग रहे हैं। जाग तो शायद सभी रहे हैं। चार-चार आदमी बारी बारीसे बगलकी सीट पर आकर बैठते हैं। इसीलिए मालूम होता है बैजनाथका दल कुछ देर पहले बैठा था ? सदाशिव और

बैजनाथके बीच वहां जो प्राइवेट बातचीत होती थी इसीलिए,—अब समझमें आई बात। ये लोग मुझ पर नजर रखना चाहते हैं। पहरा दे रहे हैं कि कहीं मैं कुछ कर न बैठूँ। कौन इन्हें समझावे कि मुझे ये लोग जितना उतावला समझते हैं, मैं उतना उतावला नहीं हूं। लड़केके प्रति अगर मेरा इतना आकर्षण होता तो आज बिलूकी यही अवस्था होती? सदाशिव फिर कहाँ गया? मेरी ही खाट पर बैठा था। ओ, यही तो देखता हूं, मेरे बिछावन पर ही लेट गया है। मालूम होता है उसे तन्द्रा आ गई है। आहा, मच्छड़ तो उसे एकदम खा ही गए। उठके मशहरी गिरा ही दूँ। मुझे उठते देखकर सुरजबल्ली बाबू और हरिहरजी झटसे आए—"क्यों, क्या हुआ? छोड़ दीजिए मैं ही मशहरी गिरा दूँ। आप बैठें।" हल्ला-गुल्लामें सदाशिव उठ बैठा। बेचारा एकदम झेंप गया—छि-छि इतने गोलमालका केन्द्र वही है। फिर आकर कम्बल पर बैठ गया।

"बैठिए सुरजबल्ली बाबू।"

सूरजबल्ली बाबू मेरी बगलमें आकर कम्बल पर बैठ गए। भला आदमी बड़ा अच्छा लगता है। ऐसे ही वह गम्भीर स्वभावका आदमी है। तिस पर उसका एकमात्र बेटा गत आन्दोलनमें अगस्त महीनेमें बन्दूककी गोलीसे मारा गया है। दस बरसका लड़का। उसके पिताको जब गिरफ्तार करके थानेमें ले जाया गया, तो झुण्डके-झुण्ड लोग जुलूसमें थानेकी तरफ आ रहे थे। वह भी भीड़में आ रहा था, सदर भेजे जानेके पहले अपने पिताको एकबार देखनेके लिए। घरमें उसकी दादी रोना-पीटना मचा रही थी। माँ खिड़कीके पास बैठी थी। उसे लेकिन अच्छा लग रहा था। "जय सुरजबल्लीजीकी जय!" अगनित लोगोंके मुँहसे अपने पिताका नाम। सबके

मुँहसे उसके बाबूजीकी प्रशंसा। बम्बईमें महात्माजीकी सभा हुई है। आज सुबह ही बाबूजीने सबको खबर सुनाई है कि महात्माजी गिरफ्तार हो गए हैं। उसके बाद ही हो गई बाबूजीकी गिरफ्तारी, क्षण भरमें ही लोगोंके मुँहसे बाबूजीका नाम निकल पड़ा। बाबूजी महात्माजीके समान बड़े आदमी हो गए हैं। पुलिसवालों पर उसे गुस्सा आ रहा है। क्या जाने शायद उसके बाबूजीको कुछ करें। जेलकी बातसे भी पहले उसे डर लगता था। लेकिन पिछले साल अपने बाबूजीको सत्याग्रह करके जेल जाते समय देखा था, कितना गेंदा फूलकी माला बाबूजीके गलेमें थी! दादी तो उसके पहले ही बोली थी कि जैसे ही बाबूजी "न एक पाई, न एक भाई, अंग्रेजकी लड़ाई" में यह नारा लगावेंगे, वैसे ही लाठीकी चोटसे जान निकाल देगा। लेकिन उसके बदले उसने उस वक्त देखा था कि दारोगा साहबने—इतने बड़े एक हाकिम—बाबूजीको अपने घर नेवता देकर खिलाया था। दारोगा साहबकी स्त्रीने उसे भी बुलाकर खाना खिलाया था। कई महीनोंके बाद जेलसे आनेके समय बाबूजी बक्समें कितनी चीजें लाये थे। साबुन, पेंसिल लाइन खिंची हुई कापी। जेलके दाढ़ी बनानेके 'ब्लेड' से उसने छुरी बनाई थी। उसी बक्समें उसने 'विलायती दतवन' देखा था। नानाके माथा मुँड़वानेके दश दिनके बाद जैसे बाल हो जाते हैं, विलायती दतवनके सफेद रोएँ ठीक वैसे ही देखनेमें थे। उस पर मलाईकी तरह दवा रखकर दतवन करना होता है। छोटी बहन धनखनिया इतनी बेवकूफ है कि उसके गाल पर यह दतवन जरा घिस देनेसे वह रो उठी थी। बचपनमें नाना भी उसे इसी तरह दाढ़ी घिस देनेका डर दिखाते थे।........थानाके तारके घेरेके चारों ओर लोगोंकी भीड़ लगी थी। थानेकी छत देखना ही मुश्किल है तो

भला बाबूजी दिखाई पड़ेंगे! घेरा तोड़कर जनसमुद्र थानेके हातेमें घुसा। भीड़के धक्केमें वह धीरे-धीरे आगे बढ़ता जाता है। सुरजबल्ली‌जीकी जय! सभी थानेकी तरफ दौड़ते हैं क्यों? उसके बाद।······

उसके दूसरे दिन सुरजबल्ली बाबूको 'लाकअप' के बाद दरवाजा खोलकर जेलसे निकाला गया। सुना सदर अस्पतालमें ले जा रहे हैं। अधिकारियोंकी असीम अनुकम्पा, आखिरी वक्तमें भेंट करा दी थी। कई एक घण्टेके लिए श्मशान घाट पर भी रहने दिया था। लड़केका बांया पैर घुटनेके ऊपरसे काटकर फेंक दिया गया था, और उसके बाद ही सिविलसर्जनने समझ लिया था कि वह बचेगा नहीं!········दूसरे दिन शामको जब सुरजवल्ली बाबू फिर लौटकर हम लोगोंके बीच आए, तब उनके सामने जानेमें संकोच होता था। उस चुप-चाप गम्भीर भले आदमीको क्या कहकर ढाढ़स दूँगा? उस दिन मैं भी इसी तरह उसकी बगलमें जाकर बैठा था। भले आदमीने भी मुँहके कोनेमें हँसी लानेकी चेष्टा करते हुए कहा था "बैठिए"। बहुत देरके बाद सिर्फ एक बात कही थी—"थोड़ी देरके लिए ही ज्ञान हुआ। तब मेरा गला जोरसे पकड़कर मुझे कहा—"ओह, कैसी जोरकी गर्मी है। नहीं बाबूजी? उसके बाद दो घण्टेमें ही तो सब शेष।" यह क्या? देखता हूं मेरी आँखके कोनेमें आँसू आ गया। नहीं, यह आँसू आया है सुरजवल्ली बाबूके प्रति सहानुभूतिके कारण; बिल्लूकी बात सोचकर नहीं। सुरजबल्ली बाबूकी आँखोंमें आँसू देखता हूं। एक आदमीको रोते देखकर पासके आदमीके लिए आँसू रोकना बड़ा मुश्किल है। छि-छि, मुझे अपनेको रोकनेकी इतनी भी क्षमता नहीं! इतनी सहनेकी भी शक्ति नहीं है! महात्माजी, मेरे मनमें बल दो। सिर्फ सुरजबल्ली बाबू ही मेरे मनकी अवस्था ठीक समझ सकते हैं। उनकी सहामुभूति····

बरामदे पर दौड़ता हुआ कौन इस ओर आ रहा है ? वार्डर सिंहजीने हाँफते-हाँफते आकर खिड़कीके सामनेसे लालटेन उठा ली। उसके बाद धीरे-धीरे पाँव रखते हुए गम्भीर भावसे दूसरी तरफ चला गया। दो-एक मिनट बाद सींखचोंवाले दरवाजेके सामने आकर खड़ा हो गया, जाफर साहब—असिस्टैन्ट जेलर। हम सब लोगोंको हँसके आदाब किया ; उसके बाद और कुछ न कहकर चला गया। ये आये थे रातके 'राउण्ड' में। एक-एक दिन, एक-एक असिस्टैन्ट जेलरकी ड्यूटी रहती है। इसीलिए वार्डर आकर लालटेन ले गया।····

अच्छा सुरजबल्ली बाबूको जिस तरह दाहकर्मके लिए श्मशान जाने दिया था, मुझे भी क्या उसी तरह जाने देंगे ? शायद नहीं। देनेसे, मुझे जरूर पहले ही खबर देते। देनेसे, बिलूका मुँह एक वार, आखिरी दफा, देख ले सकता। देखनेको है ही क्या ? शायद उस ओर ताक भी न सकूँ। नहीं, नहीं, बिलूका जैसा सुन्दर चेहरा मेरे मन पर अंकित है वह मुख ही अच्छा है। वही स्वाभाविक परिचित मुख ही मेरे हृदयमें रहे। अब क्या जाने क्या देखनेको मिले ? तब, कल एकवार बाहर जानेसे, निलूके साथ मुलाकात होती। उसके साथ मुलाकात इस समय बड़ी जरूरी है। उसके मनकी अभी जो हालत होगी ! अन्तमें क्या न क्या कर बैठे, यही मेरी आशंका है। एक तो गया। और एक के भाग्यमें क्या है, भगवान तुम्हीं जानो। मेरा तो जो होनेका है होगा—चिन्ता बिलूकी माँको लेकर है। उसने तो जरूर नहाना खाना छोड़ दिया होगा। जेलके अन्दर क्या कोई भी खबर मिलनेमें देर लगाती है ? सब खबरें उसे मिल गई होंगी। निलूकी गवाही देनेकी बात भी शायद वह जानती है। वह कैसे यह चोट

बर्दाश्त करेगी ? राजनीतिका उबेड़ खाबड़ क्षेत्र उसने अपनी इच्छासे नहीं चुना। बादमें बहके चली आयी है। उसका स्वाभाविक क्षेत्र घर-गृहस्ती की दुनियाँ है,—सुखसे भरी बहुत यतनके साथ अपने हाथसे, बनायी हुई। जिस घरके घेरेमें बाहरकी कोई हलचल नहीं पहुँच पाती है, जिस घरके घेरेने विशाल अनुपलब्ध जगत्को सीमित, प्रत्यक्ष और निश्चित कर दिया है, वही उसकी इच्छित वस्तु थी। वहाँसे एक तरहसे जबर्दस्ती मैं उसे एक अस्पष्ट लक्ष्यके कण्टकमय पथ पर ले आया हूं। मुंह खोलकर नहीं बोलने पर भी बह इसे कैसे बर्दास्त कर सकेगी? बिल्लूकी माँने बहुत सहन किया है; लेकिन सहन करनेकी भी तो एक सीमा है।·······उसे क्या कल दाहकर्मके समय जाने देगा? नहीं जाने देनेसे ही अच्छा है। अधिकारीगण शायद किसीको नहीं जाने देंगे। हो सकता है कि मिलिटरी लारीमें बंदकर शवदेहको ले जाया जायगा। और शायद सुपरिण्टेण्डेण्ड बहुत खातिर करके ब्राह्मण वार्डरोंसे दाहकर्म करावे।········जेलके चारों ओर आज क्या सशस्त्र पुलिसका पहरा पड़ रहा है? वे लोग शायद इस समय दीवालके चारों ओर टहल रहे होंगे। व्यर्थ ही परिश्रम कर रहे हैं। इतनी सतर्कताकी कोई जरूरत नहीं थी। न मालूम, बाहरकी आबोहवा कैसी है; जेलके भीतर तो जरा भी विक्षोभ और कुछ भी हलचल नहीं है। सब कुछ और दिनोंकी तरह चल रहा है?········सबेरे शायद जेलके दरवाजे पर खूब भीड़ होगी। हुक्म नहीं मानकर भी शायद कोई-कोई शोक सभा करें। शायद शहरमें हड़ताल रहेगी। लेकिन मेरी कमी तो उससे कुछ पूरी नहीं होगी। बिल्लूकी माँ तकको ढाढ़स देने वाला कोई नहीं है। उसकी छोटी बहन वृन्दावनमें रहती है। वह तो संसारसे उदासीन है। बहनके लड़कोंसे अच्छी तरह परिचय

भी नहीं। और बिलूका मामा सरकारी नौकर है ; ऐसे ही तो एक दूर-दुरावका भाव है। विजयादशमीकी प्रणामी चिट्ठी भी नहीं आती। उस पर फिर यह काण्ड। इसके बाद तो वह नौकरीके खातिर हम लोगोंके रिश्तेकी बातको स्वीकार भी नहीं करेगा।····निलू बिलू कोई भी ननिहाल जाना नहीं चाहता है। वे बड़े होने पर एक बार गये थे। अचानक एक दिन देखा, लौट आये हैं। क्यों चले आये, कुछ भी समझमें नहीं आया। पीछे जान पाया था। उनके मामाने मेरे बारेमें विचार प्रकट किया था कि मैं एक 'परफेक्ट वैगे बाण्ड' हूं। वे मेरा यह अपमान सह नहीं सके। ठीक तो है—उसकी नजरमें मैं एक आवारा छोड़ कर और क्या हूं? संसारके बारेमें मुझे जवाबदेहीका खयाल नहीं है, रुपए पैदा नहीं करता हूं, और यों ही हो-हल्ला करते फिरता हूं। हिसाबी आदमी इसे आवारा नहीं कहें तो और आवारा कहते है किसे? साधारणतः वे लोग हमें पागल समझते हैं। जब जरा प्रशंसा और सम्मानकी नजरसे देखते हैं, तभी आवारा कहते हैं। विलायतमें पहले जो आवारगीका कानून था, उसमें मैं ठीक पड़ जाता। यहां अब भी मजेमें हम लोगों पर बी० एल० केस चल सकता है। १९२१-२२ सालमें बहुतसे बड़े-बड़े कांग्रेस नेताओंको बी० एल० केसमें सजा हुई।···· लड़के-फड़के इतने भावुक होते हैं। मैं रहता तो हँस कर उड़ा देता। और निलूकी ही बात कहता हूं—खुद तो जैसा आदर पूर्वक बाबूजीके बारेमें बातें करता है, इसे घरके सभी लोग जानते हैं। दूसरे लोग कुछ बेलगाम बोल बैठें, फिर तो खैरियत नहीं। तब हां, एक बात मैं जरूर स्वीकार करूँगा कि अब भी मेरे सामने वह कुछ बोलता नहीं है। मेरे मुंह पर आज तक उसने कभी जवाब नहीं दिया।

जाऊँ, जरा मुंह-हाथ धो आऊँ। बैठे-बैठे पीठ और कमरमें दर्द हो गया है। अपनी देहकी बात क्या आदमी अपनी तबीयतसे सोचता है—देह ही याद दिला देती है। उठते ही सुरजबल्ली बाबूने पूछा, "क्या, कहाँ चले ?"

बोला, "ड्रामके पास, जरा मुंह हाथ धो आऊँ।"

एक हवाई जहाजकी आवाज कानोंमें आई। इन लोगोंके आने जानेका विराम नहीं है। जिनके सैकड़ों आदमी लड़ाईमें मर रहे हैं, वे एक जानकी क्या कीमत समझेंगे। मेरी नजरोंमें बिल्लू, मेरा लड़का। लेकिन उनकी नजरमें ? लड़ाईके जमानेमें क्या और वक्तके विचारोंका साधारण मापदण्ड बनाए रखा जा सकता है ? आज साधारण नागरिक, रक्तमांसका बना हुआ विचार बुद्धिवाला मनुष्य नहीं है,—आज तो उसका परिचय 'आइडेण्टिटी कार्ड' में है, रेशन टिकटके नम्बरमें है। लड़ाईमें मशगूल सिपाहियोंकी बात छोड़ दो। सब जगह स्वाभाविक जिंदगीको लोग भूल गए हैं। पहले दो-एक हवाई जहाज चले जानेसे लोग आँख उठाकर देखते, अब तीन दर्जन बम बरसानेवाले हवाई जहाज जानेसे भी कोई ताकता तक नहीं है। जब बम गिरते थे, तब कलकत्तेके लोग क्या इसी तरह उदासीनतासे इसको देखते थे ? वे लोग क्या जरा भी विचलित नहीं होते थे ? लोगोंको अभी बिल्लूकी बात सोचनेकी फुर्सत ही कहाँ ? लोग ही जब नहीं सोचते तो गवर्मेन्टको क्या पड़ी है। बिल्लू वगैरहका दल ठीक ही कहता है—किसका हृदय परिवर्त्तन होगा। हृदय रहे तब तो उसका परिवर्त्तन हो। लेकिन यह बात तो ठीक है कि हिंसा जितनी बढ़ाओगे, दूसरे पक्षका दमन भी उतना ही बढ़ेगा। इतना दमन, सहन करनेकी शक्ति क्या देशके लोगोंमें है ? लक्ष्य तक

पहुंचनेकी आकांक्षा कितनी तीव्र है, उसका मापदण्ड है कि उसके लिए कितना त्याग करनेके लिए देश तैयार है। यही सीधी बात बिलू वगैरह नहीं समझते हैं। कूद पड़नेके पहले अपनी ताकतका विचार तो करना होता है!...

मुँह-हाथ धोकर गमछेसे मुँह पोछता हूँ। यह क्या, देखता हूं दासजी उठ गये हैं! मुँह-हाथ धोने और कुल्ला करनेकी आवाजसे तो उसकी नींद नहीं तोड़ दी मैंने? नहीं, शायद तीन बज गए। भले आदमी रोज रातमें तीन बजे उठते हैं। उसके बाद क्या जाड़ा क्या गर्मी आधा घण्टा टबमें बैठे रहेंगे। बहुत खर्च करके जेल फेक्टरीसे जल चिकित्साका 'टब' तैयार कराया है। देखनेमें बहुत कुछ आराम कुर्सीकी तरह। उसमें गले तक पानीमें डुबाकर बैठेंगे, और मुँहसे एक तरहकी आवाज निकालेंगे। झारीकी नलीसे पानी ढालनेके समय जैसी आवाज होती है, उसी किस्मकी। बिछौनेकी चादर टाँगकर टबके चारों ओर एक पर्दा कर लेते हैं। स्नान खत्म होने पर शीर्षासन करेंगे। आधे घण्टेसे ऊपर सिर नीचे और पाँव ऊपर करके बिना हिलेडुले खड़े रहेंगे। मुझे डर होता है कि कहीं किसी दिन नाक मुँहसे खून न निकल पड़े।

अपने सीट पर लौट आया। सुरजबल्ली बाबू बैठे हैं। बिलू अभी क्या करता होगा? शायद डर और चिन्तासे जर्जर होकर सेलमें चहलकदमी कर रहा होगा। मेरे बारेमें क्या उसे एक बार याद आवेगी? मेरे बारेमें आखिरी वक्तमें बिलूने क्या सोचा, यह मैं अगर जान सकता। निलूको वह दोष नहीं देगा। उसे वह क्षमा करेगा, यह बात मैं जोरके साथ कह सकता हूँ। अभी उसके मनकी क्या हालत है, सो भगवान ही जानें। शायद

पागलकी तरह हो गया हो। रूखे बिखरेबालोंको शायद हाथसे नोच रहा हो। शायद सींखचों पर सिर पटक रहा हो। शायद बच्चोंकी तरह, दरवाजा खोल देनेके लिए वार्डरसे कर रहा हो अनुरोध। नहीं नहीं, बिलू क्या कभी ऐसा कर सकता है? दुःसह मर्मवेदनामें उसका हृदय चूर-चूर हो जाने पर भी, उसके मुँहसे वह भाव नहीं प्रकट होगा। आखिरी वक्त तक उसका आदर्शके योग्य सम्मान जिसमें बना रहे, इसकी कोशिश वह करेगा। सुपरिण्टेण्डेण्टको दिखानेके लिए वह आखिरी वक्तमें जबर्दस्ती चेहरे पर हँसी लानेकी कोशिश करेगा; शायद जेलरको मजाकसे कुछ कहे भी, सीढ़ीसे मञ्च पर चढ़नेके समय शायद अफसरोंको धन्यवाद देकर जाय कि ऐसे सुन्दर भोरमें शुक्र ताराको साक्षी रखकर उसे फाँसी दी जा रही है; लेकिन किसी तरह भी वह दुर्बलता दिखाकर अपना नाम और खासकर अपनी पार्टीका नाम कलंकित होने नहीं देगा। मेरा बेटा, मेरा बड़ा बेटा, उसे भला मैं ही नहीं पहचानूँगा? बिलूको क्या सभी यों ही प्यार करते हैं? हरदाके दूबे-दूबेइन बिलूका नाम सुनते ही विभोर, सहदेवकी माँ बिलूके लिए पागल, और जितेनकी माँ—भाभी—की तो बात ही नहीं कही जा सकती। बिलू भी स्नेहका कम भूखा नहीं है। जितेनकी माँ—भाभी—तो घरके लोगोंकी तरह हैं। दूसरे कम परिचित स्थानमें भी जहाँ स्नेह पानेका संकेत मिला, वहीं बिलू उस धाराको स्थायी करने और बनाए रखनेकी बराबर कोशिश रखता है। कहीं होलीके बाद प्रणाम करने जायगा। कहीं आश्रमसे नींबू भेज देगा। किसीके लड़केके पढ़नेका इन्तजाम कर देगा। उसके इस तरहके कामका तो अन्त ही नहीं है। इस सब स्नेहका दायित्व नहीं, कोई दावी नहीं, बन्धन भी सब जगह वैसा दृढ़ नहीं। यह सिर्फ स्नेह वसूल

करनेका नशा है। घरमें, मांके स्नेहके अलावा यह सब ऊपरी पावना है ; इसीलिए इसकी खुमारी इतनी मधुर है। निलूको लेकिन यह सब बला नहीं है। स्नेहका दावी पैदा करनेवाली मीठी बातें क्या वह करना जानता है ? अपने खयालमें ही वह पागल रहता है। अपने मतको ध्रुव सत्य समझ कर उसे जोरके साथ व्यक्त करनेमें ही वह व्यस्त रहता है। स्नेहका ऋण चुकानेके लिए जो सब छोटे-छोटे कर्त्तव्य हमेशा करने होते हैं, उन सबमें क्या निलू समय नष्ट कर सकता है ? उतने समय तक उन सबकी समालोचना कर सकनेमें उसे अधिक आनन्द आवेगा। और बिलू ? बिलू तो लोगों पर जैसे जादू कर सकता है। पिताजी पर भी उसने किया था। यों तो कहना नहीं चाहिए, वह स्वर्ग चले गये,—पिताजीको गुस्सा बराबर कुछ वेशी रहा। कितने दिन देखा है,—खाने बैठे हैं ; रसोई अच्छी नहीं लगती है ; पहले कुछ घुन घुनाये, उसके बाद 'रेचेड डाएट' कहकर, ठकसे पानीका गिलास जमीन पर ठोक कर उठ गए। बिना खाए आफिस चले गए। इधर मांको भी सारा दिन बिना खाए रहना पड़ा।···चाय खराब हो गई, बस पिताजीने "अजीब निकम्मे सब" कहकर उठाके प्याला रकाबी फेंक दी। इस तरहकी कितने दिनोंकी बातें याद हैं। बुढ़ापेमें गुस्सा और भी बढ़ गया था। अन्तमें थोड़ा-थोड़ा पागलपनका लक्षण भी देखा गया था। दोनों पांव धीरे-धीरे बेकाम हो चले थे। बाध्य होकर उन्हें काशी छोड़कर पूर्णियां आकर रहना पड़ा। देह जितनी अबस होती जाती थी, गुस्सा भी उतना ही बढ़ता जाता था। ऐसे समयमें जन्म हुआ बिलूका। बस, दिन रात इसी ज़रा-से बच्चेको लिए हुए हैं। चल फिर नहीं सकते हैं, आरामकुर्सी पर लेटे रहते हैं, किन्तु 'बलाइ' को आंखोंसे ओट नहीं करेंगे। अन्य

किसी घरकी औरतोंके घूमने आतेसे ही कहते वे लोग डायन हैं—बलाइको जादू करनेके लिए आयी हैं। बिलूकी मांको इसके लिए कितना गाली-गुफ्ता करते। अन्तमें जब खाटसे लग गए तो माथा बहुत खराब हो गया था। खाटके चारों ओर काठका फ्रेम बनवा दिया, जिससे लुढ़क कर नीचे न गिर पड़ें। बोली लगभग बन्द हो गई। आँखें बन्द किए रहते। समझनेकी ताकत भी बहुत कम हो गई थी। लेकिन इस हालतमें भी गुस्सा नहीं कमा था। बिलूकी मांको और मुझको नोंच खसोट कर परेशान कर देते थे। भात खिला देनेके समय अंगुली काट लेते थे। लेकिन उस समय भी बिलूको उनके पास बैठा देने पर सब गुस्सा क्षणभरमें जाने कहाँ चला जाता था! बहुत गुस्सा होने पर बिछौने पर बच्चोंकी तरह लोटते थे, बिलू छोटे-छोटे दोनों हाथ ज्यों ही उनके मुँह पर रख देता, वैसी ही मन्त्र-मुग्ध सांपकी तरह ठण्डे हो जाते। कभी आंख बन्द किए हुए हैं; हम लोग बहुत पुकार रहे हैं; किसी भी तरह आँखें नहीं खोलेंगे। जितना ही बोलता था उतना ही जैसे बदमाश लड़केकी तरह उनकी जिद्द बढ़ती जाती थी। हम लोगोंने बिलूको कह दिया—'बिलू-दादूको पुकारो तो'। आश्चर्य, इस अर्द्ध-चेतन अवस्थामें भी, ठीक समझ जाते थे कि बिलू पुकारता है। वैसे ही हाथसे टटोलना शुरू करते कि बिलू कहां है। उसके बाद आखें खोलकर ताकने लगे।··· जिस दिन पिताजीका सब कुछ अन्त हो गया, उस दिन उनके कानके पास मुँह ले जाकर बोला 'बाबूजी! बलाइ पुकारता है, बलाइ, बलाइ!" उस समय भी मनमें क्षीण आशा थी कि शायद बिलूका नाम सुनकर आँख खोलें। लेकिन उस समय वे, किसी पुकारको सुननेके दायरेसे बाहर थे।··· बिलूकी बुद्धि आश्चर्यजनक थी। उस समय उम्र ही क्या थी? उसको

छोड़कर और कोई दादूको वशमें नहीं कर सकता है, यह बात इतना-सा बच्चा ठीक समझता था। उसके दादूको शान्त करनेके लिए, या खिलानेके लिए उसकी उपस्थितिकी आवश्यकता है, यह बात वह उसे पुकारनेकी आवाजको सुनकर ही समझ सकता था। उस समय जैसे कुछ उदासीनना और नकली गम्भीरता दिखाता था। ऐसा मालूम पड़ता था कि वह चाहता था कि उसकी माँ जरा उसकी खुशामद करे।···बिलू क्या फिर अपने दादूको देख सकेगा? बाबूजी! क्या अपने दुलारे बलाइको अन्तमें इसी तरह अपने पास खींच रहे हो?

मन बड़ा बेचैन लगता है। कमरेमें इतने आदमी। सभी जाग रहे हैं। कमरेके बाहर वार्डर। कमरेकी बातचीतकी आवाज क्षीण होनेपर भी एक-दम बन्द नहीं है। दासजीके नहानेके समयकी आवाज कानोंमें आ रही है। कमरा कुछ ठढा हो गया है। वाहरके कुतेकी आवाज सुनाई पड़ती है। तोभी जैसे आकाशमें, हवामें चरों ओर एक सन्नाटा छाया हुआ है।

सींखचोंके भीतरसे बाहरके बरामदेमें रोशनी जा पड़ी है। साड़ी पहने हुई—वह कौन है? नहीं, वह बहुतसी जलावनकी लकड़ी जमा की हुई रक्खी हैं, उसपर रोशनी पड़नेसे ऐसी दीखती है। विशुनदेवजो मेसकी जलावनकी लकड़ी भी जमा करके रखेंगे। जेलमें सबकी, देखता हूँ, जमा करनेकी प्रवृत्ति है फटा हुआ कपड़ा, पुराने खड़ाऊँ, सब जमा करना चाहिए! जेलमें रहनेसे ही ऐसी मनोवृत्ति हो जाती है। लकड़ीके ढेरको देखकर अचानक ऐसा धोखा हुआ क्यों?······ आश्रमके रसोई-घरके बरामदेपर लकड़ीके चैले और गोयठेकी ढेर। कमरेके अन्दर बिलूकी माँ रसोई बना रही थी। बिलू कहीं जायगा। इसीलिए वह खाने बैठा है। इतनी जल्दी

खाता है ; बिल्कुल नहीं चबाता है।············रूखे बिखरे बाल। जेलकी अधमैली नीली धारीवाली गञ्जी और जाँघिया पहने हुए। रोगी जैसा फीका हो गया है·········

भगवान! गांधीजी! तुम लोगोंका नाम लेकर भी तो मनमें बल नहीं पाता हूँ। फिर चरखा लेकर बैठता हूँ। यही मेरा आखिरी सहारा हैं, अँधेकी लाठी, मेरी जपकी माला।····तिब्बतमें 'यरवदा चक्र' की तरह एक चीज घुमाकर लोग नाम जप करते हैं।····अचानक सुरजबली बाबूकी तरफ आँखें गई। भले आदमी चिन्तित भावसे मेरे चेहरेकी तरफ देख रहे हैं। मेरे चेहरेपर और व्यवहारमें जरूर कोई विलक्षणता दीख पड़ती है। इतनी खराब पिउनी है—सूता बारबार टूट-टूट जाता है।······विदेशमें जरा भी बीमार पड़नेसे लोग परेशान हो जाते हैं ; अपने लोगोंको देखनेकी इच्छा करते हैं, घरके लोगोंकी प्रेमभरी सेवाके लिए मन व्याकुल होता है। और आजके ऐसे दिनमें, बिलू घरके लोगोंको अपने पास पा न सका। शायद उसे बहुत-कुछ कहनेको था। लड़कोंकी जरा-सी बीमारीमें भी बिलूकी माँका नहाना-खाना बन्द हो जाता। दिनरात रोगीके बिछावनकी बगलमें ही काटती है। पँखा झलनेका अन्त नहीं। चंगे होने लगनेपर, पथ्यापथ्यका कितना विचार! बुखार छूटनेके दूसरे दिन सिर्फ थोड़ासा सुखता (कड़वा झोल); उसके दूसरे दिन दूध-पावरोटी ; उसके बाद आटेकी रोटी ; उसके दूसरे दिन भात। निलू-बिलू जानते हैं कि बुखार होनेसे इसमें रद्दो-बदलकी कोई गुंजाइश नहीं है।···लेकिन आज मैंने इन्हें ऐसी हालतमें ला पटका है कि आखिरी वक्तमें बिलूकी माँ, बिलूको अपने पास नहीं पावेगी।····अनेक जानवर अपनी सन्तानको खा जाते हैं। मैं क्या उन्हींके दलमें हूं? फिर

सूता टूट गया। शायद बहुत महीन सूत कातता हूं इसलिए टूट जाता है। नहीं इससे अधिक मोटा सूत कातनेसे तो शायद दरी बुननेका सूत हो जायगा।····

नेपालमें, सुना है, एक आदमीके बदले दूसरा आदमी राजदण्ड भोग सकता है। सच है कि नहीं, नहीं जानता ; लेकिन सुना है बड़े आदमी नौकर-चाकरको अपने बदले जेल भेज देते हैं। यहां अगर ऐसा नियम होता, जिससे बिल्लूके बदले मेरे जानेसे भी काम चलता ··।

बहुत किस्से सुने गए हैं कि एक आदमीने दूसरे आदमीका रोग अपने ऊपर ले लिया। हुमायूँकी मृत्युशय्याके पास बाबरने ऐसा ही किया था। लड़ाईके समय जो 'होस्टेज' रखा जाता है, वह एक जानके बदले दूसरी जान के दावीके सिवा और क्या है ?

फिर सूत टूटा। मालूम होता है रुई ही पुरानी है। इतनी दफे सूत टूट जानेसे भला चरखा काता जा सकता है ? इसी पिउनीसे तो पहले भी सूत काता है, उस समय तो टूटा नहीं। नहीं, मेरा हाथ-पैर कांप रहा है। पिउनी ठीकसे धर नहीं सकता हूँ, और न ख्वाहिशके मुताबिक खींच ही सकता हूँ। आंखें झलमला रही हैं। सूत धुँधला दीखता है, लालटेनका तेल खत्म हो चला है शायद। आंखोंकी रोशनी और कितने दिन रहेगी, उम्र तो कम नहीं हुई ? नहीं, फिजूल अपनेको गलत समझानेकी कोशिश करता हूँ। मेरी अभी की हालतमें चरखा कातना असम्भव है।····
सोहराव रुस्तमकी कहानीके मूलमें कोई भी ऐतिहासिक सच्चाई नहीं है,— वह बिल्कुल काल्पनिक है। पिता-पुत्र क्या कभी ऐसे हो सकते हैं ? होगा क्यों नहीं, संसारमें सब कुछ सम्भव है। सिंहासनके लिए बाप-बेटेमें युद्ध ही

तो इतिहासकी साधारण धारा है।··· लेकिन मुझे क्या सजा होगी। सजा हुई थी, सिख गुरु बंदा की। अपने हाथसे अपने कलेजेके टुकड़ेकी हत्या करनी पड़ी थी। ओह, कैसा रक्त! फव्वारेकी तरह, छातीसे रक्त निकला था!

मुरजबली बाबूने पूछा,—"कुछ बोले क्या?"

घबड़ाके कहा—"नहीं, कुछ तो नहीं कहा।"

आखिरी बात अनजानेमें मैं जोरसे बोल गया। मुरजबली बाबू कुछ हिचकिचाते हुए बोले, "चरखा कातनेमें अगर कुछ—कुछअ 'ये' हो—तो अभी छोड़ क्यों न दिया जाय।"

बोला, "नहीं नहीं, ठीक तो है।"

मनमें होता है जैसे गलत काम करते पकड़ा गया हूं। जवाब देनेमें बात लटपटा जाती थी। किसी तरह इस छोटी बातको खत्म करके सूतकी तरफ दृष्टि देनेसे जैसे बच जाऊँगा। पिउनीमेंसे जहांसे सूत निकलता है, जोर लगाके उसी ओर देखता हूं—जिससे किसीसे आँखें चार न हो जायँ। आँखोंका पानी रोके नहीं रुकता है। अवश्य, रातमें जागनेके कारण; और किसी कारणसे नहीं। रात जागनेसे आँखें लहरती हैं। महात्माजी, मेरे मनमें बल दो। संयमका बांध, अब मालूम होता है, रहेगा नहीं। और मैं अपनेको सम्हाल नहीं सकता हूं।······

मुरजबली बाबू बोले,—"मास्टर साहब! मास्टर साहब! ओ मास्टर साहब!"

जैसे बहुत दूरसे, यह आवाज कानोंमें आ रही है। ऊँघ लगनेपर दूरसे रेलगाड़ीकी आवाज जैसी लगती है, वैसी ही। समझता हूँ, मुरजबली बाबू

पुकार रहे हैं। लेकिन जवाब देनेकी इच्छा नहीं होती है। सुरजबली बाबू पीठ पर हाथ देते हैं—स्नेह भरे हाथका स्पर्श लगते ही अपनेको और सम्हाल नहीं सका।—"बिल्लू! बिल्लू!" चरखा और पिउनी छोड़कर सुरजबली बाबूका हाथ दाब कर धरता हूँ। दोनों चुप हैं। भले आदमीकी आँखोंसे भी आँसूकी धारा निकल रही है। कुर्सी छोड़कर वे चारों आदमी भी आ गए। छिः, यह क्या किया! लोग जमा हो गए! झटसे हाथ छोड़ दिया। फिर चरखा कातनेके लिए बैठनेकी कोशिश की। बेकार कोशिश। देखता हूँ सदाशिव पंखा झलने लगा। वह तो शायद सो गया था। फिर उठा क्यों? स्वस्थ आदमीको पंखा झलनेकी क्या जरूरत है? वे लोग क्या समझ रहे हैं कि मैं तुरत बेहोश हो जाऊँगा?

सदाशिवसे कहा—"खूब ठण्ढी हवा आ रही है। और पंखा झलनेकी जरूरत नहीं है।"

कौन किसकी बात सुनता है।

कुछ देरके बाद सुरजबली बाबूने खूब धीरे-धीरे मुझसे पूछा,—"जरा गीता पढ़ूँ, सुनियेगा?"

ऐसी स्नेह भरी मीठी बात; अनुरोध टालनेका मौका नहीं है। बोला—"पढ़िए।"

फिर चरखा कातनेके लिए बैठा। उन्होंने गीतापाठ आरम्भ किया। मैं समझ गया, क्यों वे मेरे सामने गीतापाठ करना चाहते हैं? मेरे मनमें बल लानेके लिये नहीं, सहानुभूतिसे नहीं, अपनी दुश्चिन्ता दूर करनेके लिये नहीं—लाशको ले जानेवाली मिलिटरी लारीकी आवाज, मैजिस्ट्रेट और डाक्टर साहबके मोटरकारकी आवाज जिसमें मेरे कानोंमें नहीं आवे, इसीलिये।

इसके पहले जितनी फाँसियाँ हुई हैं, उन मौकों पर हम लोग भयमिश्रित उत्कण्ठाके साथ इस आवाजके लिये इन्तिजार किया करते। मोटर हार्नकी तीव्र कर्कश ध्वनि उस समय हम लोगोंके स्नायुओंको जैसे अचानक आलोड़ित कर दिया करती थी। उसके बाद वार्ड शान्त। ऐसी निस्तब्धता छा जाती थी कि अपने दिलकी धड़कन भी सुनाई पड़ती थी। वह समय जैसे कटता ही न था—जैसे सुबह और होगी ही नहीं। फिर मोटर लारीकी आवाज होनेसे लोग समझते कि लाश निकली। उसके बाद नौ बार घण्टी बजती, कैदियोंको जगानेके लिए खास घटी। फाँसीके दिन सभी जगे ही रहते—तो भी नियमको तोड़नेका कोई उपाय नहीं। उसके बाद दो बार, घण्टी सुनी जाती—। सुबहकी 'गिनती मिलान' के लिए। वह आवाज सबको बता देती कि रातमें जितने कैदी बन्द किए गए थे, सुबह भी ठीक उतने ही हैं—एक भी बढ़ा नहीं, एक भी कमा नहीं। सब वार्डर अपने-अपने वार्डके कैदियोंकी संख्या गुमटी पर बता देते हैं। ये सब टोटल रातकी संख्यासे मिल जाने पर, यह अभावनीय संवाद दो बार घण्टा ठोंककर चारों ओर प्रचार कर दिया जाता है। जेलर साहब जमादारको चाबी दे देते हैं, और सब वार्डके दरवाजे खोले जाते हैं। चींटियोंकी पंक्तिकी तरह कैदी लोग पांती बाँधकर निकलते हैं। "जोड़ा फाइल" "जोड़ा फाइल"! उन लोगोंकी मियादमेंसे एक दिन कमा। नई मिहनतसे, कठिनाईसे ढोते हुए, मुश्किलसे कटनेवाला एक और दिन काट देनेके लिए वे कोशिश करते हैं। हरेक घण्टा उन्हें याद दिला देता है कि चौबीस घण्टोंका एक दिन होता है—एक दिन कट गया—फिर भी अभी इतने दिन बाकी रहे।......

मुझे ये लोग बहलानेकी कोशिश करते हैं? लेकिन अभी क्या बिलूकी

बात भुलाई जा सकती है ? अभी क्या कोशिश करनेसे मन दूसरी तरफ जा सकता है ? जा सकता तो फिर क्या था। ..भगवानकी असीम कृपा है कि एक साथ, एक ही क्षणमें, एकसे अधिक बात सोची नहीं जा सकती है। बिलू अगर अन्तिम कुछ क्षणोंमें अपनी मृत्युकी बात छोड़कर कोई दूसरी बात सोच सकता, तो मानसिक अशान्ति और आतङ्कसे बच सकता। शायद कष्ट मालूम भी न पड़े। भगवान! तुमसे कभी कोई चीज मैंने नहीं माँगी। आज इस कठिन विपत्तिके समय अपने सभी सिद्धान्तोंको तिलाञ्जलि देकर, तुम्हें अपनी इच्छा बताए बिना नहीं रह सका। भगवान! बिलूको अन्तिम समयमें दूसरी कोई बात याद दिला देना, दूसरी बात सोचनेकी ताकत देना। अन्तिम समयके बहुत पहलेसे ही, मृत्युके भयसे उसे तिल-तिल करके नहीं मरना पड़े।...'टेलिपैथी' क्या ठीक है! मेरे मनकी इच्छा-आकांक्षा क्या बिलूके पास पहुँचती है ? बिलू देखो, तुम्हारा पिता, तुम्हारे लिए अपने सामने, भगवानके सामने आज कितना छोटा हो गया!...

सुरजबल्ली बाबू गीता पाठ करते हैं। अति परिचित गीताके श्लोकोंको जैसे सुनकर भी नहीं सुन पाता हूँ, सुनकर भी समझ नहीं पाता हूँ। शब्दोंकी लहरी कानोंमें आती है, लेकिन मनमें और मस्तिष्कमें कोई असर नहीं पैदा कर पाती है।—विशाल युद्ध क्षेत्रके सामने खड़े होकर गीताकी वाणी सुनना द्वापरयुगमें ही सम्भव था, मैं तो कोई अर्जुन नहीं हूँ। हम लोगोंने गीताका मर्म समझा ही क्या है ? जिस नास्तिक बिलूने गीता वापस की थी, वही कर्मयोगका मूल मन्त्र समझ सका है, काममें अपनेको लीन कर दिया है। और निलू, वही क्या कम है ? उसके कठोर कर्त्तव्य ज्ञानके सामने स्नेह-प्रेम, अपनेपनका दावा, जनमत, इतना प्यारा भाई—सब तुच्छ हो

गया है। इन्हीं लोगोंको मैं नास्तिक कहता हूँ? ईश्वरका विश्वास हम लोगोंके मनमें बल देता है; ईश्वर पर अविश्वास इन लोगोंके मनमें कमजोरी नहीं लाया है। जिसमें दूसरोंका पतन हो जाता है, तान्त्रिक साधकोंको उसीमें सिद्धि होती है।······

"ऐं!" चौंक उठा हूँ। हाथसे पिउनी गिर पड़ी। चरखेका घर्घर और गीता-पाठके मिले हुए स्वरको चीरकर, सभी आवाजोंको डुबाकर, सुन पड़ा मोटर लारीका हार्न—उसके बाद मोटर रुकनेकी आवाज। मेरी छाती पर से ही जैसे लारी चली गई, पकड़ कर अगर रोक सकता,—शरीरके बलसे, जितनी भी ताकत मेरे शरीमें है—कंकर भरे रास्ते परसे मुझे घसीटकर ले जाता है—लारीका चक्का रोक सकूँ, इतनी ताकत क्या मेरे शरीरमें है—लारी रुकी—मेरे दिलकी धड़कनसे सुर मिलाकर मोटर इञ्जिनकी आवाज होती है—क्रुद्ध, हिंस्र जन्तुकी गुर्राहटकी तरह।···सदाशिव पीठ पर हाथ फेरता है। चारों ओर सभी आकर खड़े हो गए हैं, किसीके गाड़ीसे दब जाने पर जैसी भीड़ होती है, वैसी ही।···

सदाशिव बोला—"आइए, सब मिलकर थोड़ी प्रार्थना करें। सभी वहीं बैठे। बैजनाथका दल, फारवर्ड ब्लाकका दल, किसान सभाका लड़का, कम्यूनिस्ट पार्टीके लड़के, और सभी तो हैं। मेहरचन्दजीने "राष्ट्र गगनकी दिव्य ज्योति······" आरम्भ किया। आज किसीको प्रार्थना करनेमें उज्र नहीं है, आज व्यंग भरा गीत नहीं। मेहरचन्दजीको जो कड़ी याद नहीं रहती है, उसे पहलेसे ही सबने गा दिया। जेबसे उन्हें कागज निकालना नहीं पड़ा। सभी प्राणपणसे चिल्ला रहे हैं। इतनी चिल्लाहटके बीच, मैजिस्ट्रेट और डाक्टर साहबके मोटर-कारकी आवाज नहीं सुनाई पड़ेगी। इसी मतलबसे

ये लोग प्रार्थना करने बैठे हैं। जैसे ही मेहरचन्दजीका गान खत्म हुआ, वैसे ही सदाशिवने आरम्भ किया "रघुपति राघव राजाराम……"

महात्माजीका प्रिय भजन। भजनका कैसा मधुर चिर नूतन स्वर! बिल्लूके दलको आज इस भजनके गानेमें भी आपत्ति नहीं है। पहला गान तो 'राष्ट्रीय पताका' के बारेमें था, लेकिन यह भजन तो सो नहीं है। बिल्लूके अन्तिम मुहूर्त्तमें, उसके आत्माकी शुभकामनाके लिए और बिल्लूके पिताका मन दूसरी ओर लगाए रखनेकी कोशिशमें उन्होंने अपने मनको जरा नरम कर लिया। बिल्लूका दल—ये लोग क्या इतना भी नहीं करेंगे? निल्लू होता—तो क्या वह भजनमें साथ देता? कभी नहीं। वह टूट जायगा लेकिन झुकेगा नहीं। निल्लू बिल्लू, पहले आश्रममें इस भजनको कैसा अच्छा गाते थे। महात्माजीके सामने भी उन्होंने गाया था।… मानसिक उद्वेगको दबानेके लिये, ये लोग अस्वाभाविक जोर लगाकर गा रहे हैं। ठीक कर लिया है कि अभी खत्म नहीं करेगा।—जितनी देर तक सकेगा, जी-जानसे गाता जायगा… बिल्लू तख्तेकी सीढ़ियों पर चढ़ रहा है—आह! खाली पाँवमें ठोकर लगी—कैसा कमजोर हो गया है—चिड़ियाके गलेकी तरह गला पतला हो गया है—नाक तलवारकी तरह हो गयी है, नीचे अँधेरा—डोरी झकोरेके साथ खींची गई—बिल्लू—बिल्लूके चले जानेसे क्या होगा? मेरे इतनेसे बिल्लूको वह रख गया है। भगवान! महात्माजी! बिल्लूकी माँको यह चोट सहनेकी शक्ति दो, निल्लूके मनमें बल दो, बिल्लूकी आत्माको शान्ति दो। भजन चल रहा है—

रघुपति राघव राजा राम, पतित पावन सीताराम।
जय रघुनन्दन जय घनश्याम जानकी वल्लभ सीताराम।

जोरसे, और भी जोरसे!

# औरत किता

## ( माँ )

# औरत किता

सरस्वती चली गई। तो दरवाजा बन्द होनेका समय शायद हो गया। हां, इसीसे तो—वही तो लूसी जमादारनीकी बात सुनाई पड़ती है। सरस्वती जरा सिर दबा रही थी, अच्छा लगता था। बड़ी नरम हैं उसकी अँगुलियां। दो नसोंको दबाकर उसके बाद धीरे-धीरे अँगुलियां भवों पर चलाती हुई नाकके छोर पर ले आती है। साथ ही साथ नसोंका धमकना कम जाता है। और, माथेमें जो जाने क्या जमा हुआ है, पत्थरकी तरह—साथ ही साथ वह भी लगता है जैसे गलकर; हल्का हो गया। जमादारनी क्या उसे एक मिनट भी ज्यादा बैठने देगी? हम लोगोंसे तो जरा अदबसे भी बात करती है—लेकिन सरस्वती तो 'सी किलासी' है न। उन लोगोंका वार्ड जो अलग है। उसे इतनी देर तक इस वार्डमें रहने दिया है, यही बहुत है। हायरे! वह फिर क्यों जेलमें चली आई, सो तो मैं समझती हूँ। मुझसे क्या वह कारण छिपा रह सकता है? पहले अगर इतना समझती, तो सहदेवकी माँने जिस समय मुझसे बात चलाई थी, उसी वक्त राजी हो जाती। फिर मेरे दिलकी शायद यह हालत नहीं होती। सो राजी कैसे होऊंगी? भगवानने मेरी ऐसे ही दुर्दिन देखनेके लिए सृष्टि की है!···फिर दुनिया भरको खा-पीकर कैसे बैठती?

अभागा सोना भी छूता है तो मिट्टी हो जाता है—वही हाल मेरा हुआ है। सरस्वतीका कपाल तो ऐसे भी जला, और शादी होनेसे भी शायद

जलता। मैंने बिल्लूसे राय भी नहीं पूछी। सिर्फ मिडिल तक पढ़ी हुई लड़की, आज-कलके लड़के क्या कभी यह पसन्द करते हैं, सहदेवकी माँको इस बातका जरा आभास भी दिया था। सहदेवकी माँने तो मुझे कुछ जवाब नहीं दिया। वह केवल अवाक् होकर मेरे मुँहकी ओर टक-टक ताकती रही। लेकिन इसका जवाब सहदेव मुझे पीछे सुनानेसे बाज नहीं आया। सहदेवने कहा था—"हम लोग ठहरे देहाती आदमी। हमारी बहन मिडिल पास न होगी तो क्या सरोजनी नायडू और विजयलक्ष्मी पण्डितकी तरह विदुषी होगी? और बिल्लू बाबू ही ऐसे क्या पढ़े हुए हैं? विद्यापीठके शास्त्री ही तो हैं।" सहदेव देखनेमें बुद्धू सा लगता है। मुँहचोरकी तरह चुपचाप रहता है। लेकिन जब बात सुनाने लगता है तो एकदम छेद-छेद कर। मेरे लड़केकी शादी—जहाँ मेरी ख्वाहिश होगी करूँगी, जहाँ खुशी नहीं करूँगी; इसको लेकर फिर पंचायत क्यों? मैं राजी इसलिए नहीं हुई कि दोनोंकी जोड़ी नहीं मिलती है। हिन्दुस्तानी और बंगालीकी जोड़ी क्या अच्छी लगती है? जो जहाँका है वह वहींका है। एक गाछकी छाल दूसरे गाछमें लगा देनेसे क्या कभी जुट सकती है। मैं बोलूँगी 'सरस्वती' तो वे लोग बोलेंगे 'सरस्सती'। सरस्वती क्या 'सुक्तो' का झोल राँधना जानती है? 'गोकुलपीठ' का नाम सुना है? बिल्लू अरहरकी दाल पसन्द नहीं करता है और उन लोगोंको अरहरकी दाल छोड़कर और कोई दाल अच्छी ही नहीं लगती है। वे लोग मसूरकी दाल सिर्फ तब खाती हैं, जब बच्चे होने पर औरतें सौरमें रहती हैं।...एक दिन बहुरियाजीको 'डाँटा-चरचरी' बनाकर दी थी। वह बोली,—"हामी डांटा खाते खूब पसन्द करे।" "डाँटोंको मुँहमें देती और चूस-चूस कर फेंक देती; चबाना होता है सो

तो जानती नहीं। और बगला बोलनेका कितना शौक? ये लोग क्या एक भी अच्छी मिठाई बनाना जानती हैं? जेलमें देखती हूँ तो। और उन्हीं लोगोंकी तरफ, तो सारी जिन्दगी काट दी—कुछ जानना तो और बाकी नहीं। मिठाईमें मिठाई बस एक पूआ—सभी पूजा, कथामें, पर्व-त्योहारमें, पानीमें थोड़ा आटा घोलकर, उसमें जरा गुड़ डालकर किसी तरह पका लेनेसे ही हो गया 'पूआ'। न तो चाशनीमें डाला गया, न और कुछ। दो चीजोंको मिलाकर तरकारी बनाओ, वे लोग चौंक उठेंगी। और उसीके साथ में अपने बिलूकी शादी करती! यह तो कुछ एक-दो दिनोंकी बात नहीं। सारी जिन्दगी लहसुन और गोल मिर्च खाकर क्या बंगालीका लड़का बच सकता है? तो भी सरस्वती मुझे बड़ी भली मालूम पड़ती है। अपने बेटेकी बहू नहीं बनाना चाहती तो उसे दोनों आँखोंसे देख भी नहीं सकती, सो बात नहीं है। उसे तो बचपनसे देख रही हूँ। कपिलदेवके साथ आकर कितनी दफे आश्रममें कई दिनों तक रह गई है। बिलू तिलूकी तरह सहदेव और सरस्वती भी तो मेरे अपने हाथोंसे गढ़ कर बने हैं। उसकी उम्र ही क्या है? अभी उस दिन भी तो यह लड़की, जरा-सी बच्ची थी।

...मेरे रसोई-घरके बरामदे पर सिउली फूलके बूटेवाली रंगीन खद्दरकी वृन्दाबनी साड़ी पहने हुई बदमाश लड़की बाँस पकड़ कर घूम रही थी। कहाँ केश, कहाँ चोटी, कहाँ आँचल—दनादन घूमती ही जाती थी। मैंने कहा—ठहर, माथा घूमने लगेगा, जी मिचलाने लगेगा—कौन किसकी बात सुनती है। "सरस्वतीकी स्कूल; भेरी बैड भेरी बैड टीचर कुल"—इस पद्यको जोर-जोरसे दुहराता हुआ बिलू आकर रसोई-घरके बरामदे पर खड़ा हो गया। तो भी क्या लड़कीका घूमना रुका। घूमते-घूमते ही बिलूकी बातका जवाब दिया गया—

"म्याऊँ म्याऊँ म्याऊँ म्याऊँ कू ;

बिल्ली भैया, थैंकू ।"

बिल्लू उसके साथ सुर मिलाकर बोला—"मुरगी भैयाकी टांग खाओ ।"

तब लड़कीका घूमना रुका, और बरामदे पर हँसते-हँसते लोटपोट हो गई !......

अच्छी गढ़न है लड़की की। काम चला लेगी। बंगाली गृहस्थके घरकी लड़की आकर क्या कांग्रेस आश्रमकी दुनिया चला सकती है ? आश्रम तो नहीं—एक होटल ही है। मुकदमेबाज लोग सदरमें मुकदमेकी पैरवीमें आवेंगे और आकर आश्रममें ही ठहरेंगे। मिटिङ्ग तो लगी ही रहती है। क्या समयमें क्या असमयमें, रात बिरातमें—लोगोंके आनेका क्या कोई ठिकाना है ? मैं ही जो सम्हाल सकी हूँ ;—कोई दूसरी होती तो रोके मर जाती।···लेकिन सरस्वतीके हाथका खाकर बिलूका पेट एक दिन भी नहीं भरता। मेरा बिलू तरकारी खाना बड़ा पसन्द करता है। बैठा-बैठा टप-टप करके खायगा, जितना भात लगभग उतनी ही तरकारी। वही खाकर तो किसी तरह कुछ हड्डियाँ बची हुई हैं—नहीं तो भात खानेका जो ढंग और तरीका है ! चिड़ियेकी तरह, ठोकर मार-मार दाना चुगता है या भात खाता है, एक मुट्ठी भर—बस। और ये सरस्वती वगैरह,—उन्हें भी तरकारी खानेकी आदत है भला ? उनमें जो लखपती हैं, उन्हें इस बातका घमण्ड है कि वे भातके साथ दो-तीन किस्मकी तरकारियाँ खाते हैं। मुहल्लेके सभी इस बातको लेकर आलोचना करते हैं और साधारण गृहस्थके घर ? ऊँचे कनखेकी पीतलकी थालीमें लाल चावलके भातमें गड्ढा करके एक नाद अरहरकी दाल ; और थालीके कोनेमें नमो-नमो करके चन्दनकी बूँदकी

तरह जरा-सी तरकारी ! खुशी-खुशी उसे खाकर कपिलदेव और सहदेव एक-एक लोटा पानी पीते हैं।......

कौन ? मेरे पांवको लेकर यह खींचातानी क्यों ? कौन है ? मनचनियां ? पैरमें तेल लगानेको किसने कहा ? जरूर बहुरियाजीने कहा होगा। अपने तो रामायण लेकर बैठ गई और इसे भेज दिया है मेरा शिर खाने। रामायण पाठ तो खब जम गया है, देखती हूं। बहुरियाजी पढ़ती हैं,—और बाकी सत्रह औरतें साथमें सुर मिलाती हैं। कान एकदम झनझना जाता है। हम लोगोंमें कैसा अच्छा है, एक औरत रामायण या महाभारत पढ़ती है और बाकी सब बैठकर सुनती हैं। ज्यादासे ज्यादा, एक आध बार जरासा 'अहा, ओहो,' करती हैं। इन लोगोंका सब कुछ अजब है।......."हारे मनचनिया। मेरे पांवमें तेल लगानेको किसने कहा रे ?"

"सरस्सतीजी खानेके समय बोल गई थी कि कई दिनोंसे उपास रहनेसे माईजीके हाथ पैरमें लहर होती है। हाथके तलवेमें और पांवमें ज़रा तेल—पानी लगा देना। माईजी आप बिगड़ेंगी यही सोचकर मैंने अबतक लगाया नहीं। मैं तो दरवाजे पर बैठी थी। अभी ज़मादारनी आकर फिर धमका गई। बोली कि अभीसे सोनेकी कोशिश हो रही है। माईजीकी सेवा—टहलके लिए तुम्हारी और गलकट्टीकी ड्यूटी पड़ी है,—अभी आकर दरवाजेपर क्या बैठ गई ? आधी रात तुम जागोगी और बाकी रात गलकट्टी जागेगी।" यही कहकर वह फ़ड़फड़ाती चली गई।—"जब सरकारने जेलमें रख दिया है, तो यहां तुम लोग जो कहो वही करूंगी। बहुत पाप किए हैं, नहीं तो कहीं ब्राह्मणकी बेटीको दूसरेकी देह दबानेका काम करना होता ? उन लोगोंके

हुक्मके मुताबिक, तुम्हारे पाँव दबाने आई तो माईजी, तुम हो रही हो नाराज।”......

मनचनियांकी उम्र करीब तीस बरसकी होगी। वह सी क्लासकी साधारण कैदी है। चेहरा बड़ा अच्छा है। ब्राह्मणके घरकी बाल-विधवा। कुछ दिन पहले एक लड़का हुआ था। तुरत जन्मे हुए बच्चेकी लाश बाँस-बाड़ीके बीच एक हाँड़ीमें पाई गई। बच्चेके गलेमें उंगुलीका दाग था। आह! मक्खन को तरह नरम गलेपर खून जमकर नीला-नीला हो गया होगा। बच्चा क्या, जरासा खूनका लोंदा था वह। उसीमें मनचनियांको दस बरस और मनचनियांकी मांको दो बरसकी सजा हुई है। अच्छा हुआ है। खूब हुआ है। तुम हुई माँ! अपने पेटमें रखा था बच्चा, वह बच्चा उस समय अच्छी तरह रोना भी नहीं सीख सका था। उसी बच्चेको माँ होकर ऐसा कर दिया! तुम्हारी जैसी मांको तो सिरसे लेकर पैरतक कांटासे भोंककर, भूसेकी आगमें जला-जलाकर मारना चाहिए। नहीं, उसने स्वयं यह काम नहीं किया है। वह बेचारी शायद उस वक्त बेखबर, बेहोश थी। किया है उसकी माँने। वह औरत भारी शैतान है। और उसको सजा हुई सिर्फ दो बरस! इन लोगोंके 'आइन-इजलास' का क्या कुछ ठीक ठिकाना है? सो रहता तो क्या मेरे बिल्लूको ऐसी सजा होती। न तो किसीका खून किया है और न किसीको मारने गया! कांग्रेसका काम किया है। उसके लिए जेल दो, जुर्माना करो। उसके लिए फाँसी? भगवान क्या इतना अन्याय सहेंगे? ... ...

“माईजी, तब तो तलहथीमें जरा तेल-पानी लगा दूं?” ओहो? और मत जला। सिरके घावसे कुत्ता पागल। मैं, जो है सो, मर रही हूं अपनी ज्वालासे! और ये सब मिलकर मेरे पीछे पड़ी हुई हैं! मुझे विरक्त मत

करो। जरा शान्तिसे चुपचाप रहने दे। चौबीस घण्टे छत्तीस लोग मुझे घेरकर बैठे रहते हैं, जैसे मुझे 'गोदान' करनेके लिए तुलसी गाछके नीचे रखा गया हो। रामायण पाठ आरम्भ होते देखकर, कहाँ तो सोचा कि जाओ, कुछ देरके लिये चैन मिला,—सो नहीं, यह आकर लगी बड़बड़ करने। मनचनियां कह चली—"माईजी, आज सबेरे जब आप बेहोश हो गई थीं न, तब डाक्टर साहब आया था। कह गया है कि आपको उपवास करते तीन दिन हो गए, कल अगर कुछ नहीं खायंगी तो जबर्दस्ती खिलावेगा। 'सुई देगा, और नाकके भीतर नली देकर मुर्गीका अण्डा खिला देगा। समझीं?"

"हां रे हां, मेरा खाना ही अभी हुआ सबसे बढ़कर। और मैं नहीं खाऊंगी तो किसकी मजाल जो मुझे खिलावेगा?"

"बूढ़ी माईजी आप इन लोगोंको नहीं जानती हैं। नर्मदा बहनकी बिछौना बांधनेकी थैली है न? समझीं? खटियाके साथ उसी तरहके चमड़ेसे बांधनेका इन्तजाम इनके पास है। कई जमादारिनें मिलकर आपको इस खटिये पर लेटा देंगी। उसके बाद बिछौना बांधनेकी तरह आपको अच्छी तरह बांध देंगी, इस गद्दीदार खटियेके साथ। समझीं?"

"अरे मैं नहीं निगलूंगी तो जबर्दस्ती निगलवावेंगे कैसे? जा, और ज्यादा मत बक।"

लेकिन यह पिंड छोड़नेकी नहीं। मनचनियां अपने मनसे कहती जा रही है—"यह जोहारिन मगहिया डोमिन है न, उसकी नाकमें घाव है, जानती हैं माईजी। जबतब खून गिरता है। उसने पिछले साल, आप लोगोंके आनेके पहले 'अनसन' किया था, उसे पैखाना सफाई या कमान्डमें काम दिया गया था, इसीलिए! समझीं? वह बोलती थी कि राजा हरिश्चन्द्रके

वंशके हैं ये लोग; अपनी जातिमें उनका कितना बोलबाला है। वह क्या कभी मैला साफ कर सकती है ? उनकी जातिवाले मुर्दा नहीं छूते हैं, और जो लोग नाली साफ करते हैं, उनके साथ बैठकर वे लोग खाते भी नहीं। वह यह बात भी कहती थी कि इस जेलमें सफाईयाका काम बराबर सन्नालिनें करती हैं। उसके बाद कई दिनतक उसे मुर्गीके अण्डेका शर्बत पिला दिया गया। लेकिन देनेसे क्या होगा,—उसका संस्कार अच्छा था। मुर्गीके अण्डेकी बात डाक्टर वगैरहने उसे नहीं कही, तब भी उसे कै होने लगी। समझी ? तब सरकारको हार माननी पड़ी। साहबने उसे पैखाना कमान्ड-से हटा लेनेका हुक्म दिया। महात्माजी सरकारसे नहीं सकते हैं। लेकिन उसने सरकारको कुछ ही दिनोंमें ठण्ढा कर दिया। 'कलस्टर' साहब आकर 'सुपरिटन' साहब पर खूब बके। चमेन जमादारिन एक दिन मुझसे कहती थी। एक बला तो गई। लेकिन तबसे उसकी नाकसे खून गिरता है।"···

फांसी पर लटकनेके समय नाक मुंहसे खून निकलता है क्या ? मनचनियां से पूछनेसे तो मालूम होसकता है कि उसने जब गलेको दबाया तो छोटे बच्चेके मुंह नाकसे खून निकला था कि नहीं ? नहीं, मां होकर मांसे यह सब बात भी भला पूछी जाती है ? उसने अगर अपने ही हाथों यह पाप किया हो, तो क्या उस समय उस नन्हेंके मुंहकी तरफ ताक सकी होगी ?····

दुर्गाके उस छोटे बच्चेका क्या हुआ। मेरी गोदमें ही तो उसका अन्त हो गया। बुखारमें भुगत-भुगत कर उसकी देहमें हड्डी ही हड्डी रह गई थी और पेट निकल आया था।····अचानक दुर्गाकी मांने बुला भेजा। मैं तरकारी की कड़ाही उतार कर दौड़ी-दौड़ी उसके घर गई। और दुर्गाकी मां जैसी कर्कशा है कि सब उससे डरते ही रहते हैं। रो-पीटके उसने सारा मुहल्ला

सिरपर उठा लिया है। लेकिन जिस छोटे लड़केकी, भगवानके यहांसे पुकार आ गई है उसके पास दो घड़ी भी तो निश्चिन्त होकर बैठे—सो नहीं—कहती है, यह मुझसे पार नहीं लगता है दीदी, मुझे बड़ा डर लगता है। जाकर देखती हूं, दुर्गा डरसे निस्तब्ध होकर बच्चेके पास बैठी है। बच्चेकी हालत 'अब-तब'। जाकर बच्चेको गोदमें लेकर बैठी। गलेमें घर-घरकी अवाज होती थी। आंखकी पुतलीका उजला हिस्सा दीख पड़ता है। बच्चा जी-जानसे सांस लेनेकी कोशिश करता है। कष्टसे मुंह, हाथ पैर नीले पड़ गये हैं। इतने छोटेसे बच्चे की, बचनेके लिए कितनी कोशिश, कितनी चेष्टा! उसके बाद, मेरी गोदमें ही उसकी सारी कोशिश खत्म हो गई। दवाकी बात तो दूर; एक बूंद पानी भी उसके गलेके नीचे नहीं उतरा। लेकिन सबसे आश्चर्यकी बात थी कि अन्तकालमें नाक मुंहसे खून गिरनेसे मेरे कपड़े लत्ते एकदम तरबतर हो गए। ऐसा कभी नहीं देखा। दुर्गाकी मांने रो-पीटकर सारा घर सिरपर उठा लिया। दुर्गा काठकी तरह बैठी है और उसे टेपीकी मां खोद-खोदकर पूछ रही है "हां रे दुर्गा, बच्चेने सबेरे पपीता और ताल मिश्री तो खाया था न?"....

......बिलू जब पैदा हुआ था, उस वक्त काफी मोटा ताजा था—गोदी भर होता था। सौरमें हेड पण्डितजीकी स्त्री देखने आई। रुक्मिनी दाईने एक चोता काजल बच्चेके गालमें लगा दिया। उसने कहा कि तुम नहीं जानती हो इन पण्डितानियोंको—ये लोग भारी डायन होती हैं। इनकी जहरीली नजर जिधर पड़ती है, एकदम जल भुन कर खाक हो जाता है। गालमें कालिख नहीं लगानेसे देखोगी बच्चा दिनोदिन सूखके कांटा हो गया है। बूढ़ी दाई मुझे उस समय चौबीस घण्टे हुकूमतमें रखती थी—यह मत

करो तो वह मत करो, उठते-बैठते मुझे चेताती रहती। अच्छा बाबा जैसा कहे वैसा ही सही। बिलू श्री विजया दशमीके दिन हुआ था। हेड पण्डितजीकी स्त्री पूजाकी छुट्टीके बाद आई। वे पहले अपने देशमें ही रहती थीं। उसी बार पहले-पहल पण्डितजी परिवार ले आए। पण्डितजीकी स्त्री विश्वास ही नहीं करती थी कि उस समय बिलूकी उम्र सिर्फ बीस दिनकी थी। बिलूके हृष्ट-पुष्ट हाथ-पैरकी ओर देखती थी, और रुकमिनी बड़बड़ाती हुई कपड़ेसे ढँक देती थी।···

उसके बाद डबल निमोनिया होने पर बिलूकी देह टूट गई। तब वह अढ़ाई बरसका था। बिलूके दादा उस समय खाट पकड़ चुके थे ; पाँवकी तरफ धीरे-धीरे सुन्न होता जाता था। उन्हीं दिनों बिलू बीमार पड़ा।···· कातिक-कातिक दो बरस, अगहन, पूस, माघ, फागुन, चैत—दो बरस पाँच महीने—बिलूकी उम्र उन दिनों दो बरस पाँच महीने थी। दिन महीनेका इतना हिसाब मुझे याद भी नहीं रहता है। रहती अभी टेपीकी माँ तो मेरे हिसाबमें जरूर ही गलती निकाल देती। उसके सामने क्या कोई बात बोलनेका उपाय है—एक भी बात नीचे नहीं गिरने देगी।··· पहले दिन बिलूका माथा 'छक्-छक्' करते देखकर मेरा मन घबड़ाने लगा। सारी रात बच्चा कैसा रोता-छटपटाता रहा। और 'बाबूजी' के घरसे गुस्सा होने और बकभककी आवाज आती रही। बच्चेको किसी तरह सम्हाला नहीं जा सकता था। उन्होंने कहा कि हरिगोबिंद डाक्टरको कल सुबह दिखलानेसे भी हो सकता है, कोई बात नहीं। सुनते ही बिलूके दादा तो मारे गुस्सेके लाल-पीले। उनके बकभकके मारे आखिर डाक्टरको खबर दी गई। डाक्टर बाबूने कहला भेजा कि रातमें नहीं आ सकेंगे। सुनकर 'बाबूजी' को कितना

गुस्सा हुआ। कहने लगे कि गवर्मेन्टमें रिपोर्ट करके उसका डाक्टरी करना में घुसाड़ दूँगा। एक बजे रात तक तो सीतापतिकी दुकान पर पासा खेलेगा, और रोगीके मरनेसे भी रातमें रोगी देखने नहीं आवेगा। अभी तो न जाड़ा है—न बरसात। ये लोग सब खूनी हैं। डाक्टर नहीं डकैत, बटमार। 'बाबूजी' तो उस समय बिछौनेसे उठ नहीं सकते थे। उनके पास रिपोर्ट लिखनेके लिए लालटेन, चश्मा, कागज कलम रखकर उन्हें शान्त कर आई। स्कूलके दरवान ननकूको फ़िर डाक्टरके पास भेजा। अली बक्सकी कम्पनी खुद हांककर ननकू रातमें ही डाक्टर बाबूको ले आया।···· अब भी लाठीके सहारे बूढ़ा ननकू बीच-बीचमें आश्रम आता है, 'भाईजी' से भेंट करने।·· हरिगोविन्द डाक्टरका मुँह टेढ़ा करना देखकर ही मैं समझ गई कि मेरे बच्चेकी बीमारी टेढ़ी है।···उसके बाद कई दिनों तक चली यम और मनुष्यके बीच लड़ाई। एक दिन तो हो ही गया था। उसी बार पहले-पहल कस्तूरीका गुण देखा। हाथ-पैर एकदमसे बरफ हो गये थे। हरिगोविन्द डाक्टर नाड़ी दाबे मुँह बनाए बैठा हुआ। दवाकी गर्मीकी हद हो गई, देखते ही देखते बूंद-बूंद पसीनेसे, देह, हाथ-पैर लथपथ हो गये। तकिया बिछौना सब भीगके लथपथ। भला इतने छोटेसे-अधमरे बच्चेको पोंछ पांछ करना आसान है! तिस पर छाती पीठ भरके 'पुलटिस' का बोझा। सुबह-सुबह डाक्टर बाबू मुझे कह गए,—'आपके बच्चेका नया जीवन दिया;' बात जरा भी बढ़ाकर नहीं कही गई। धन्य हैं धन्वन्तरि डाक्टर हरिगोविन्द बाबू! लेकिन इस कस्तूरी खानेके बाद, एक महीने तक बच्चेकी देहकी जलन नहीं गई—दिन रात छटपट करता। सारी रात पंखा खींचनेका इन्तजाम किया गया। उसके बाद धीरे-धीरे बच्चा अच्छा हो गया, लेकिन

वह जो देह पटक गया सो क्या फिर कभी अच्छी तरह सम्हलकर वह उठ सका ? देहमें कभी मांस नहीं लगा। रोज बीमारी लगी ही रही। अमीर घरमें पैदा होता तो पेटीमें जैसे अंगूर रखे जाते हैं, वैसे ही आदर-यत्नसे आदमी बन पाता। लेकिन ऐसी तकदीर लेकर आया कि जरा आदर, यत्न, खाना-पहरना तो एक दिन भी बच्चेको जुट नहीं सका। हरिगोविन्द बाबूने क्यों उसे उस समय बचाया था, क्यों इतना बड़ा होने दिया ? भगवान, अगर उसे लेनेकी ही इच्छा थी तो उसी समय क्यों नहीं ले लिया ? मेरा मोह क्यों बढ़ा दिया ? ऐसे राक्षसी ढंगसे ले जाना क्यों ठीक किया ? मैंने कितना भी पाप किया हो। भगवान, मेरे पापोंके लिए जो कोई भी सजा दे सकते थे, मुझे देते। मेरे पापोंके लिए उसे क्यों सजा दी ? उस समय जानेसे, शायद निलूको गोदमें पाकर, मैं इतने दिनोंमें उसे भूल जाती। सिर्फ एक लड़का हो तो नहीं, उसका हजार किस्मका रूप ! उसके लाख किस्मके हाव-भाव, बातचीत मनमें आते हैं। एक लड़का हजार लड़केके समान है। कितनी स्मृतियां, छोटी-मोटी कितनी घटनाएं, कितना आदर, हठ, हँसने, रोनेकी छवि आँखोंके सामने चौबीसों घण्टे तैरती रहती हैं, उसका कोई हिसाब है ? इच्छा होती है कि इन सब स्मृतियोंको जकड़के धरकर पड़ी रहूं। हो सके तो हृदयमें ही घुसाकर रख दूं। लगता है जैसे बिलूको मैंने हृदयमें पाया है, उसे छूती हूं, देह पर हाथ फेर देती हूं—जोरसे पकड़े हूं—किसी तरह नहीं छोड़ूंगी। किसकी मजाल कि मांकी छातीसे चिपके हुए बच्चेको छीनकर, खींच ले जाय।····

बड़े जोरोंसे चिल्लाकर इन लोगोंने रामायणकी आरती आरम्भ की। तो अब रामायण पाठ खत्म हुआ। ये लोग 'आरती' नहीं कहेंगी, कहेंगी

'आर्ति' ।···आरतीके समय कितना चिल्लाती हैं ये ! जेलमें आनेके बाद रोज, तीसों दिन, सुनते-सुनते एकदम जी ऊब गया है ।

आर्ति-गान चल रहा है, सब शब्द समझमें भी नहीं आते हैं....

आरत श्रीरामायण-अ जी कि
कीरति-कलित-ललित-अ, सिय पी कि ॥
गावत-अ-ब्रह्मा दिक-अ मुनि नारद-अ
बाल्मीक विज्ञान विसारद-अ
शुक सनकादि शेषु अरु सारद-अ
वर्नि पवन-सुता कीरति कीरतिनि-ई-ई-कि ॥
कीर्ति नीकि रामा कीरतिनी-ई-ई कि ॥
गावत-अ वेद-अ पुराण-अ अष्टदश-अ
छवो शास्त्र-अ सब-आ ग्रन्थ-अन्हको रस-अ
मुनिजन-अ धन-अ सन्तन्हको सरबस-अ
सार-अ अस-अ सम्मति सबही-ई की-ई ॥
सम्मति सबही की रामा, सम्मति सबही-ई-की-ई ॥
आरत-अ श्रीरामायण-अ-जी-की-कीरति कलित-अ
ललित-अ सिय पी की ॥

गावत-अ सन्तत-अ सम्भू भवा-आ-नी
अरुबह-अ सम्भ-अ-व-अ मुनि विज्ञा-नी-ई
व्या-आ-स-अ आ-आ-दि कवि वर्ज बखा-आ-नी
कागा भूखण्डि गरुड़ाके हि-ई की-ई ॥
गरुड़ाके हिया रामा, गरुड़ाके ही-ई की-ई ॥

आरत-अ श्रीरामायण-अ जी-कि कीर-अ-ति

कलित-अ ललित-अ सिय पी की ॥

उसके बाद नए सुरसे आरम्भ हुआ—

आज-अ कथा-आ इतनी भई, सुनहु बीर-आ हनुमान ।

राम-आ लक्ष्मण-आ सिया जानकी—सदा-आ करहु कल्याण ॥

अबकी घर कँपाते हुए चिल्लाना आरम्भ होगा शायद—

अयोध्या रामलला की जै ! वृन्दाबन बिहारीलाल की जै !

उमापति महादेव की जै ! रमापति रामचन्द्रजी की जै !

पवनसुत हनुमान की जै ! महात्मा गांधी की जै !

सर्व-अ सन्तन की जै ! जै जै हो-ओ-ओ-ओ ।"....

सभी एकबार दोनों हाथसे ताली वजाकर प्रणाम करती होंगी । अब सब उठ खड़ी हुई होंगी । लूसी जमादारनी, चमेन जमादारनी सभी जहाँ रामायण होती है, उसके बाहर बरामदे, घर, खिड़कीके पास हाथ जोड़कर बैठी रहती हैं । लूसी संताल क्रिस्तान है ; लेकिन भगवानके नाममें भी भला जाति विचार है क्या ? खूब भक्ति है उसकी । 'आरत श्रीरामायण जी कि, कीरति कलित ललित सिय पी की' यह पद उसे मुखस्थ हो गया है । जयध्वनिके समय और इस पदके गानेके समय वह भी बाहरसे चिल्लानेमें बाज नहीं आती है ।....गला है तो गरुड़जीका ।....उसका असल नाम है सन्ध्या देवी । रामायणके समय उसका गला सबके गलेको मात करता है । आरतिमें जहाँ 'गरुड़के ही की' है, वहाँ पहुंचने पर उसका स्वर सप्तममें चढ़ जाता है । इसके अलावे उसकी नाक भी गरुड़की चोंचकी तरह है । इसीलिये सभी दिल्लगीमें उसे गरुड़जी कह कर पुकारती हैं । अभी ऐसा हो

गया है कि सभी उसका असल नाम भूल गई हैं। जमादारिनें उसे गरुड़जी कहकर पुकारती हैं। पहले पहल वह बिगड़ती थी, अब सह गई है।.... एक दिन जमादारिन 'कपड़ा गुदाम' से गरुड़जीके नामसे साड़ी ले आई थी— उस दिनका काण्ड! जिस बहीमें जेलसे चीज-वस्तु पाने पर नाम दस्तखत करना होता है, उस बहीको खोलकर देखती है, लिखा हुआ—'गरुड़जी— एक साड़ी।' बस फिर क्या कहना! वह रो-पीट कर खाना-पीना छोड़ कर बैठ रही। जमादारनीने उसका अपमान किया है यह लिखकर जेलर साहबके पास चिट्ठी भेजी। और लिखा कि लूसी औरत कैदियोंके हाथ बीड़ी और खैनी बेचती है। लूसी तो एकदम परेशान हो गयी। जेलर साहबने आकर लूसीसे गरुड़जीसे माफी मँगवाई। तब जाके कहीं उसका गुस्सा ठण्ढा हुआ। लेकिन उसका नाम और नहीं बदला।...

बचपनमें बिलूने कितनी बार हम लोगोंको रामायण और महाभारत पढ़कर सुनाया है। मार्निंग स्कूलके समय और गर्मीकी छुट्टीके दिनों, दोपहरकी धूपमें जलते-जलते, टेपीकी माँ, दुर्गाकी माँ, और जितेनकी माँ— दीदी आश्रममें आतीं—बिलूका रामायण-महाभारत सुननेके लिये। बिलूको रामायण पढ़नेमें अच्छा नहीं लगता था। वह महाभारत पढ़ना चाहता। लेकिन जितेनकी माँ-दीदी आकर कहतीं—"अरे बारिन्दिका बेटा, यह 'काशीराम दाश कहे सुनो पुण्यवान' बद करो। तुम्हें कहा न है कि हम-लोग पुण्यवान नहीं हैं। हम लोग महाभारत नहीं सुनना चाहती हैं। ले आ रामायण। रामायण हुआ एक चीज, और यह हुआ एक चीज।" बिलू कहता, ठहर न चाची, यहाँ तक जरा खत्म कर लूँ। सिर और देह हिल-हिलाकर बिलू पढ़ता जाता—"कांदे याज्ञसेनी, तितिल अवनि, नयनेर-अ-नीर-

अ-भरे ...” बिलूकी आँखोंमें आँसू आ गए। जहां इन पंक्तियोंको पढ़ा कि उसकी आँखोंमें आंसू आ जायेंगे। और वैसे ही टेपीकी माँ कहेगी “आहा, विजयादशमीमें जन्मा है न,—इसीसे उसकी वर्षाकी धात है।” सचमुच, पढ़ते-पढ़ते कितनी जगहोंपर उसकी आँखोंमें आँसू आते, इसका कोई ठीक नहीं। हमलोग बूढ़ी औरत हैं, बच्चोंकी माँ हैं, षष्ठी-मंगलवार करती हैं ; धर्म-कर्मकी किताबें पढ़कर कहां तो हम लोगोंकी आंखोंके आँसूसे हृदय उमड़ पड़ना चाहिये। सो इन जली हुई आँखोंमें कभी आँसू आते थे ? बिलू छिपाकर दूसरी ओर मुंह करके आँखोंके आँसू पोछनेकी कोशिश करता। निलू कुछ दूरपर पेटके बल पर सोकर सब देखता रहता और चिल्ला उठता,—माँ देख देख, भैया क्या कर रहा है ? जितेन की माँ-दीदी उसे डाँटकर चुप कर देतीं। कहतीं “घरके कोनेकी फूटी हाँड़ी;—कहता है मैं सब जानता हूं। आप चुप तो रहिए।” लेकिन निलूको क्या रोका जा सकता है ? वह हँसके, चिल्लाके सारा घर सिर पर उठा लेता है। ननकूने स्कूलके दफ्तरीसे महाभारत बंधवाके ला दिया था। उसके पहले पन्नेपर बिलूके हाथकी लिखी दो पंक्तियों—“खुद ही मालिक—माँ। बाकलम बिलू।” जितनी मलेच्छ पण्डिताई दिखलानी थी सब महाभारत ही पर।....दुर्गाकी माँ कहती, “अबकी बिलूको चोटी रखा दो। महाभारत पढ़नेके समय चोटी खूब नाचेगी। अरे संक्रान्ति ब्राह्मण, खूब झूम झूमकर पढ़, समझा।” लाजसे बिलू उनके मुंहकी ओर ताक नहीं सकता था। इधर निलूने चिल्लाना आरम्भ किया—‘चोटी पकड़कर मारूं टान, उड़ जाओगे वर्द्दमान।’ जितेनकी मां दीदी भी कहती—“हां, अबकी बिलूको जनेऊ करा दो।”........

हां, बिलूकी ठाकुर-देवतामें इतनी भक्ति अचानक जैसे बड़े होनेके साथ-

साथ कपूरकी तरह उड़ गयी। निलूका भी वही हुआ। कुछ दिन तक तो ऐसा हुआ कि जनेऊ नहीं हो तो जीना ही जैसे बेकार हुआ जा रहा है। जबतब बिलू वही बात छेड़ता, और कहता—"तुम लोगोंका जनेऊ नहीं देनेका क्या मतलब है? जनेऊ तो नौ बरसकी उम्रमें हो हो जाना ठीक था। इस साल तो एक ही शुद्ध दिन है।" जनेऊके बाद भी देखा है नियमित सन्ध्या, गायत्री, पूजा, एकादशी। बहुत दिनोंतक खानेके वक्त बात नहीं बोलना था, बाजारका खाना नहीं खाना, कहीं भोज-भातमें खाने नहीं जाना। कितनी निष्ठा! कितना आचार-विचार! बचपनसे ही उसे पूजा-अर्चाका झोंक था। कितने ही श्लोक, 'स्तोत्तर' उसे याद थे। चार साल-की उम्रसे ही श्रीकृष्णके एक सौ आठ नाम और "देवी सुरेश्वरी भगवती गंगे" फट-फट करके कह जाता था। बड़ा होनेपर भी—जनेऊके पिछले साल,—मैं रसोई-घरमें थी, वे लोग दोनों भाई सोनेके कमरेमें बिछौना पीट रहे हैं, और बगलमें रखनेके तकिएको लेकर दुर्योधनका उरु भंग कर रहे हैं। इसी बीच अचानक बिलूका चिल्लाना सुना। "माँ, माँ, जल्द आ।" अब क्या हुआ? हाथ-पांव टूटा क्या? साँप बिच्छू नहीं है तो? डरसे छाती धक् धक् करके जान निकली जाती है। चूल्हे परकी तरकारी चूल्हे पर ही रही। गिरते-पड़ते जाके देखा—निलू चुपचाप बिछौने पर बैठा है,—जिस तरह सिर मुड़ानेके समय लोग हजामके सामने बैठते हैं, उसी तरह। बिलू निलूको जोरसे पकड़े बैठा है। दोनों डरसे जड़वत् हैं। बिलू एक हाथकी मुट्ठी बाँधे केहुनीपर जाने क्या दाबे हुए पकड़े है। मेरे जाते ही दिखलाया। निलूके हाथमें बँधा हुआ था माँ पूर्णेश्वरीका जन्तर, एक रुद्राक्ष और एक हर्रे। सूत टूट गया है। वे लोग जानते थे कि जन्तर हाथमें बँधा न रहनेसे एक डेग भी

नहीं चलना होता है। चलनेसे ही निलूका अमंगल होगा। बोला, माँ जल्द एक सूत ठीक करके ले आ। जन्तर फिर हाथमें बांधा गया। उसके बाद दोनों महारथी बिछौने परसे उतरे।.........

एक बार महात्माजीकी यात्राके समय, ठीक मनसाही पुलपर जब हम लोगोंकी मोटर गाड़ी चढ़ी, सामने देखा कि धूल-कीचसे सने दो नगे लड़के हैं। अचानक मोटर देखकर डर गए हैं। क्या करें नहीं समझकर इधर उधर दौड़नेकी कोशिश करने लगे। उसके बाद दोनों सटकर रास्तेके बीच लेट रहे। भगवानकी दयासे वे बच गए। लेकिन जब मोटरसे उतरकर उन्हें उठाने गयी,—देखा, वे डरसे नीले पड़ गए हैं। किसी तरह भी आंखें खोल-कर नहीं ताकते हैं। बिलू निलू दोनों भाइयोंकी बात याद करके उस समय मेरी आंखोंसे आंसू टपक पड़े। उनके घर पहुंचाकर मनमें जरा शान्ति हुई। और जरा-सा होता तो कैसा एक काण्ड हो जाता! इसके बाद जभी बिलू निलूकी बात एक साथ याद आती है, तभी आंखोंके सामने इन असहाय धूलभरे दो लड़कोंका रूप नाच उठता है।........

भगवान, तुमपर बिलू-निलूका इतना विश्वास था, वह विश्वास क्यों छीन लिया।.... बिलू जिस दिन पहले पहल आश्रमके सांध्य-कीर्तनमें नहीं गया, मैंने सोचा शायद सिर-विर धर लिया है। पूछनेपर उसने कहा कि मन अच्छा है। देहपर हाथ रखकर देखा बुखार भी नहीं है—तब क्या हुआ? पीछे जब जाना तो छाती पीटके रह गई। बिलूका जब यह हाल हो गया तो दुनियांमें सब कुछ हो सकता है। यह तो निलूके जनेऊ फेंकनेकी तरह उड़ा देने लायक बात नहीं है। निलू तो मस्त-मौला लड़का है—वह अपने ख्यालमें ही मस्त रहता है। उसका माथा गरम देखकर मैं मन ही मन

हँसती हूं; ये आए हैं तैश दिखलाने। अरे मैं तो तुम्हारे पेटसे नहीं जन्मी हूं, तू मेरे पेटसे जन्मा है। तुम्हारी नाड़ी मैं न पहचानूँगी तो और कौन पहचानेगा? आज गुस्सा करता है, कल सवेरे ही तुम्हारा गुस्सा भाग जायगा। बचपनसे ही तुम्हारा गँवारपन देखती आती हूं। बचपनमें मोदीकी दूकानसे फेंके गए कागजके ठोंगेमें पैर छू जानेसे निलू प्रणाम करता था। भूलसे पंजिकाको लांघनेपर, मुंह बनाके, मेरे पास आकर अपने पापकी बात कहता—मुझसे कहला लेना चाहता कि अनजानेमें करनेसे पाप नहीं होता है।... एक दिन मैं रसोई-घरके काम खत्म करके, रातमें सोडा देकर अण्डीके कोकून उबाल रही थी, उसी समय बिलूने पुकारा,— माँ देखो निलूका काण्ड! लड़कोंकी परीक्षा उस समय खत्म हो चुकी थी। पढ़ने-लिखनेकी बला नहीं थी। सोचा, कोई एक नया फिसाद निलूके माथेमें घुसा है। जाके देखती हूं कि फ्रेममें बँधी माँ सरस्वतीकी तस्वीरको नीचे रखकर उसपर निलूने लाद दिये हैं घरके सभी जूते। मैं तो अवाक्! निलू क्या कभी ऐसा काम कर सकता है? परीक्षा देने जानेके समय रोज मुझे प्रणाम करनेके पहले वह सरस्वतीकी तस्वीरको प्रणाम करता था। इसी तस्वीरमें हरसाल सरस्वती पूजाके दिन पूजा होती है। अब भी चन्दनका दाग लगा हुआ है। अरे डकैत, पिशाच, तुम्हारी ऐसी दुर्मति क्यों हुई? बिलूने कहा कि हिसाबमें फेल-कर गया है। इसीलिए निलूने गुस्सेमें ऐसा काण्ड किया है। कैसा बदमिजाज लड़का है बाबा! हिसाबमें फेल किया है तो यह कुकाण्ड करनेकी क्या जरूरत? पढ़ोगे नहीं—समूचा साल हमेशा खेलते फिरोगे, तो हिसाबमें फेल नहीं करोगे? कितनी दफे कहा नहीं कि उनके पास बैठकर कुछ हिसाब-उसाब दिखालो। जवाबमें लड़केने कहा कि "अगर पढ़कर ही पास करूँगा तो

माँ सरस्वतीकी खुशामद क्यों करने जाऊँ ? नहीं पढ़नेवाले लड़केको अगर पास नहीं करा सकता है, तो देवता कैसा ?" कहकर लड़का उसके कोनेमें बैठा रहा। बिलूने तब जूतोंको हटाके, गंगाजलसे धुलाकर तस्वीरको दीवालपर फिर टांग दिया। मैंने पांच पैसे मां सरस्वतीकी तस्वीरमें धुलाकर उठाकर रख दिये कि इस गँवारका गुस्सा जब ठण्डा होगा तो उससे पूजा कराऊंगी। बिलूके ये सब खामख्याली काण्ड ख्याल करने लायक नहीं हैं। लेकिन बिलूका कीर्त्तनमें नहीं जाना, देवता द्विजकी भक्ति मनसे निकाल फेंकना, मुझे सचमुच सोचमें डाले हुए था। मेरे बिलूको ठाकुर, देवतामें विश्वास था। बचपनमें लक्ष्मी-पूजाके दिन अपने लट्टू और गुल्लीके ऊपर मां लक्ष्मीके पद-चिन्ह अंकित करा लेता था। नहीं तो फिर बहुतसे लट्टू और बहुत-सी गुल्लियां कैसे होंगी ? वही बिलू ऐसा हो गया— और मेरी ही आंखोंके सामने ! मैं चौबीस घण्टे भगवानसे कहती हूं, बिलूका तुमने यह क्या किया ? उसके पिताके कानमें जिससे यह बात न पहुंच जाय, इसके लिए मैंने कितनी कोशिशें कीं। लेकिन वह लड़का कीर्त्तनमें नहीं जायगा—यह बात और कितने दिन छिपाई जा सकती है ? मैं छिपाकर बिलूके पीनेके पानीके साथ पूर्णेश्वरीके खड्गका धोया जल और चरणामृत मिलाकर देती, और कहती मां पूर्णेश्वरी, मेरे लड़केके अपराध का कुछ ख्याल मत करो।···और वह भी कैसे आदमी ? तुम हुए उसके पिता। बच्चोंकी भूल गलती होती है, उन्हें जरा समझा दे सकते हो। तुम्हारे समझानेके सामने तो उनका बहाना नहीं चलेगा। लेकिन वे मुंह खोलकर कुछ कहेंगे नहीं। जैसे लड़केके भले बुरेका ठेका अकेले मेरा ही है। यह भी एक अजीब आदमी हैं !···

हाय रे ! फिर ये लोग आए तंग करने। अभी लोग देखनेसे मेरी देह जल जाती है, यह बात इन्हें कहूं कैसे, समझाऊँ कैसे ?···

कमला देवीने आकर मेरी नाड़ी पकड़ी।····कैसी नाड़ी देखना जानती हो, सो तो मुझे जानना बाकी नहीं है। पति डिस्ट्रिक्ट बोर्डके डाक्टर हैं—इसीलिए चेष्टासे कुछ ऐसी भाव-भंगी दिखला रही है कि वे भी कुछ-कुछ डाक्टरी जानती हैं। झूठ-मूठकी यह दिखावट किस लिए? 'वे' भी तो मास्टर थे। मैंने तो एक दिन भी नहीं सोचा कि उनकी स्त्री हूं, इसलिए मैं भी पण्डित हो गई। वे कांग्रेसका हाल कितना ज्यादा समझते हैं—इसीलिए क्या मैं कहूँगी कि मैं भी समझती हूँ?

कमला देवीने पूछा "अब कैसी हैं? गुस्सेसे सिरसे पैर तक जल गयी। मेरे लिए तुम लोग जितनी परेशान हो, सो तो समझती हूँ—तब यह ढंग क्यों? गुस्सेसे जलकर जवाब दिया। "जो सोच रही हैं उसमें अभी बहुत देर है। वैसी अच्छी तकदीर ले करके क्या दुनियामें आई हूँ जो सबोंको छोड़कर आंख मूंदकर सीधे स्वर्ग चली जाऊँगी। ऐसा होता तब तो ठीक ही था। सारे परिवार भरको एक-एक कर खाये बगैर मैं हटनेकोनहीं।"

कमला देवीका नाड़ो देखना सिर पर चढ़ गया। उसका हाथ अलग हो गया। ऊपरसे मेरा हाथ बिछौने पर गिरा। हाथमें झनझनी लग गई। ओह! गई, गई! कैसा दर्द हो गया हाथमें! माथेका बायाँ हिस्सा कैसा तो भारी लगता है। बाएँ कानके पीछे, माथेके अंदर लगता है जैसे सुन्न हो गया है। तकिएसे सिर उठानेसे बायाँ हिस्सा जैसे ढुलककर धपसे फिर तकिए पर गिर पड़ता है। कानमें झिल्लीकी आवाजकी तरह झीं-झीं बराबर हो रही है।···खूब अच्छी तरह सुना दिया कमला देवीको। यह सब उस्तादी दिखाओ रामायणके दलमें, जो तुम्हारी सब बातें नहीं सुनती, मुँह बाके निगल जाती हैं। उन लोगोंमें, कुछ लोग तो न समझती हैं, न कुछ

जानती हैं। अनसूयाजीको उस दिन मैंने चाय बनाकर दी थी। बोली जरासा अदरख नून देके 'चाहा' बना देंगी ? चाय तो ली उन्होंने अपने लोटेमें। उसके बाद, जिस तरह लोग लोटेसे बिना मुँह लगाए ऊपरसे पानी ढालके पीते हैं, उसी तरह झटपट मुँहमें ऊपरसे उसने चाय ढाल ली ! अब फिर क्या था। मुँह-जीभ सब जलकर एकाकार। बनाई हुई चाय तो ठीकसे पीना नहीं जानती है, उसकी भी विद्याकी बड़ाई। उस दलके सभी एक-से हैं। और एक हैं सरला देवी,—उसे भी अगर थोड़ी बुद्धि-सुद्धि होती ! उसके बापका घर रुपौली थानाके बूढ़िया धनघट्टा गांवमें है। लोग कहते हैं गांव खूब बड़ा है। कितना बड़ा है इसे समझाते हुए एक दिन बोली—"गांवमें हाकिम हुकुम, दरोगा पुलिस, हैजाके डाक्टर, ये लोग बराबर आते-जाते रहते हैं। इतनी तरक्की पर गांव है कि गांवके कुत्ते तक यह सब देखते-देखते आदी हो गए हैं—हाफ पैन्ट पहने हुए लोगोंको देखकर वे भूकते भी नहीं।" धन्य है गांव तुम्हारा और धन्य है तुम्हारी बुद्धि। इन सबके बीच कमला देवी पंडिताई बघारती है, दल बाँधती है। कमला देवी असेम्बलीकी मेम्बर है न। अंगरेजी नहीं जानती है। हाथ उठाना छोड़कर, कैसे वहांका और काम चलाती है, सो नहीं समझती। नर्मदा बेन उस दिन मुझसे कहती थीं कि कमला देवी नहीं चाहतीं कि बिहारकी कोई लिखी-पढ़ी औरत कांग्रेसमें आवे। फिर तो उसकी कद्र कम जायगी न। इसीलिए इन बेवकूफ लोगोंको लेकर जमात बनाती है। बात शायद ठीक ही है। वह टीनके विलायती दूधको 'मेमियांका दूध' (मेमका दूध) कहती है। टीनका मक्खन यहाँ किसीको खाने नहीं देगी। कहती है कि उसमें अण्डा मिला हुआ है। नहीं तो मक्खन भी क्या कभी पीला रंगका होता है। उसके साथ कौन बेकार बहस करे ?

…यह क्या, कमला देवी फूट-फूट करके रो रही है। छिः छिः, मैंने यह क्या कर डाला। उठके बैठकर कमला देवीके हाथको दाबके पकड़ा।…

"कमला मैं तुम्हारी मांकी उम्रकी हूँ। गलती हो गई, कुछ खयाल मत करो। मैं क्या अभी अपनेमें हूँ? अभी मेरा माथा ठीक नहीं है; क्या कहते क्या कह गई।" उसके माथे पर हाथ फेर दिया। वह आंखोंमें आंसू लाकर मुंह पर हंसी लानेकी कोशिश करती।

पूछा, "मुझे माफ कर दिया तो?"

"कैसी बातें करती हैं! अभी सो रहें।"

कहकर जबर्दस्ती मुझे बिछौने पर उसने सुला दिया। मेरे प्रति सहानुभूति और स्नेहकी छाया उसके चेहरे पर झलक रही थी। ठीक जैसे बेटी मांकी सेवा करती है। मुझे तो बेटी नहीं है। अगर एक भी बेटी होती! बेटीकी साध क्या बेटेसे मिट सकती है? जभी बेटीकी बात मनमें आती है, तभी मनमें होता है कि बिलू मेरी बेटी है, निलू मेरा बेटा है। बिलूका स्वभाव बेटीकी तरह नरम है; उसका व्यवहार उसी तरह स्नेह भरा है; बेटीकी तरह उसे बर्दाश्त करनेकी ताकत है, और उसी तरह जरा-सामें ही उसकी आंखोंमें आंसू आ जाते हैं। यहीं देखो न, कमला देवीको इतनी कड़ी बात मैंने कही; सो क्या उसने कुछ भी गुस्सा किया? वह तो मुझे उलटके सुना दे सकती थी। मुंह तो उसका कमजोर नहीं है। उस दिन रसद गुदामके असिस्टेन्ट जेलरको तो रुला डाला था।…इस घरकी सभी मुझे कितना प्यार करती हैं, मेरे लिए कितनी फिक्र करती हैं, कितनी सेवा करती हैं। और मैं ऐसी हूं कि उनकी उपेक्षा करती हूं,—भली-बुरी बात कहती हूं। ऐसी तो मैं नहीं थी। जिन्दगीमें कभी मेरे साथ किसीका

झगड़ा नहीं हुआ। जेलमें जैसे मेरा स्वभाव बदल गया है। अभी मेरे मुंह और मन पर कोई बन्धन नहीं है।...कमला मुझे पंखा झल रही है।

उसने कहा—मिश्रीका शरबत थोड़ा क्यों नहीं पीती हैं—थोड़ा-सा दूँ"—"ना" जरा मीठी बात मैंने की है न, बस सिर चढ़ गई। इनके साथ क्या करूँ सो भी तो सोच नहीं पाती हूँ। भूख लगनेसे खुद निगलूंगी, तब और किसीकी खुशामदकी जरूरत नहीं रह जाती। लूसी जमादारिन कहती थी कि परसों डाक्टर कह गया है कि चौबीस घण्टे मेरे बिछौनेके पास कुछ न कुछ खानेका रख दिया जाय, कब खानेकी इच्छा होगी सो तो कहा नहीं जा सकता है। इन लोगोंका ढंग देखके हँसी भी आती है, दुःख भी होता है। यह जैसे हाड़िन मगहिया डोमिनका अनशन है न। हम लोग ब्राह्मणके घरका व्रत-उपवास करनेवाली औरतें हैं। दो-एक दिनका उपास तो हम लोगोंके लिए कुछ भी नहीं है।

ढन् ढन् ढन् करके वार्डकी घण्टी बजी। इतनी रातको फिर कौन आया?...घरका दरवाजा बन्द करके जमादारनी, दीवाल पार करके चाबी बाहर जमादारके पास गिरा देती है। वह जमादार जाकर जेलर साहबके पास चाबी जमा करता है। और हम लोगोंके वार्डके बाहरका फाटक चौबीस घण्टे भीतरसे बन्द रहता है। किसीको कुछ कहना होता है तो बाहरसे रस्सी खींचता है और भीतर घण्टा बजता है।....यही तो, लूसी शायद किसीके साथ बातें कर रही है। फिर कुछ काण्ड-वाण्ड हुआ क्या? लूसी खुद भी कुछ कम है क्या? सारा दिन बाहर घूमती रहेगी, दुनिया भरके वार्डरोंके साथ बातें करती रहेगी; और जो मैंने कहा कि थोड़ी तरकारी बनाकर देती हूं, बिलूको सेलमें दे आ सकोगी? तो आँखें फाड़के कहेगी, मैयारे! सो

कैसे होगा? सेलमें क्या किसी चीजको पहुँचानेका उपाय है? वहाँ तो चौबीस घण्टे कड़े पहरेका इन्तजाम है। वहाँ जानेसे क्या मेरी नौकरी रहेगी! अरे मेरी सती सावित्री रे! सत्तर चूहे खाके बिल्ली चली हजको। तुम तो वार्डरके डरसे एकदम सटकी रहती हो न। दिन-रात उनके साथ हँसी-मजाक चलता है। और जो एक कामकी बात कही तो पचास बखेड़े खड़े हो गए। "अरे तुम भी तो बेटेकी माँ हो। तुम्हीं अगर मेरी बात नहीं समझ सकी तो और कोई नहीं समझे तो उसे कैसे दोष दूँ! भगवान करे, मेरी जैसी हालत तुम्हारी कभी न हो—लेकिन यदि होती तो समझती। परसों बत्तीसों दाँत निकालकर मुझसे कहा गया कि आपके लड़केको आज अलग पकाके आलूकी तरकारी खाने दी गई है। क्या खबरमें खबर है? बड़ी कीमती चीज दी है! सरकारने एकदम भण्डार खोलके दान छत्तर आरम्भ कर दिया है। यही खबर देने आकर वे आनन्दसे गली जा रही हैं।....

दरवाजेके बाहरसे लसी चिल्ला रही है—"कमला देवी।" "क्योंरी, कौन आया था?"

"रातका डाक्टर बाबू पूछ गया कि बंगाली माईजी कैसी है? ज्यादा गड़बड़-सड़बड़ होनेसे अस्पतालमें उन्हें खबर करनेके लिए कह गया है। और बेहोश होनेसे हरी शीशी सुंघानेसेके लिए। मनचनिया और गलकट्टी सुनले! दोनों एक ही साथ पड़ी-पड़ी सो गईं, मालूम होता है?"

कितना दर्द है! जैसा डाक्टर बाबूको वैसा ही लसी जमादारनीको। तुम लोगोंको क्या मैं नहीं पहचानती हूं? तुम सबोंको मैं एक-एक करके, हड्डी-हड्डी पहचानती हूं। तुम लोगोंके मुंहमें कुछ और मनमें कुछ। ऊपरसे नीचे तक सब

एक ही तरहके। इस दरोगा साहबको ही देखो न। जिस दिन बिलूके बाबूजी को गिरफ्तार किया। उस दिन जिला कांग्रेस आफिसमें भी ताला लगा दिया गया। और मुझे कह गया "मां, आप लोग अपने घरमें रह सकती हैं। उसे सरकारने दखल नहीं किया है, सिर्फ जिला कांग्रेस आफिस जब्त हुआ है।" भैया रे! तीन चार दिनोंके बाद आकर मुझे गिरफ्तार करके थाना ले आया। बोला कि मास्टर साहबकी तरह आपको भी नजरबन्द रखा जायगा। थाना लाकर भी कितनी खातिर! दरोगा बाबूके क्वार्टरमें दरोगा बाबूकी स्त्रीने मेरे जप-संध्याकी व्यवस्था कर दी। स्वामी, स्त्री दोनों मां, मां, कहके परेशान। खूब बहू थी, नन्हें बच्चेको मेरी गोदमें देकर बोली—"आप लोग आशीर्वाद दीजिए, मेरा यह बच्चा जीता-जागता रहे। जैसी नौकरी है कि दुनियां भरके लोगोंकी गाली-श्राप ही असल कमाई है!—आप मां, हृदयसे आशीर्वाद दीजिए। एकके बाद दूसरा गोद सूनी करके चला गया।" मैंने कहा, "धत्‌धत्, मेरे क्या बाल बच्चे नहीं हैं। भले आदमी क्या सरापते हैं। यह लड़का तुम्हारे वंशका नाम उज्ज्वल करेगा। यहांका 'बरहमथान' जानती हो तो,—पूर्णेश्वरीके मन्दिरके पास—बड़ा प्रतापी है। उसी गाछमें अपने लड़केके नामसे एक ईंट बांध देगी।"—खैर, वह अध्याय तो समाप्त हुआ। जेलमें आनेपर सुना कि दरोगाने रिपोर्ट की है कि सरकारका जब्त किया हुआ जिला कंग्रेस आफिस सरकारको बेदखल करके मैंने वहां अनधिकार प्रवेश किया है। इसीलिए मेरे ऊपर कहते हैं कि मुकद्दमा चलेगा। अच्छा देखो! क्या तमाशा है बोलो तो। आकाशमें चन्द्र सूर्य रहते इतनी बड़ी झूठी बात! दरोगा बाबूने खुद मुझसे कहा कि मेरे अपने घरमें रहनेमें कोई हानि नहीं है—उधर सरकारने दखल नहीं किया है। और देखो, खुद पांच बात जोड़के लगा दिया है।···

जेलका डाक्टर भी इसी दरोगाकी तरह है। कैदीको लाल-नीला पानी देके अच्छा करेगा, पीछे उसको फांसीकी रस्सीमें झुलानेके लिए ठीक मियांकी मुर्गी पोसनेकी तरह। और मां कहके पुकारने आता है। कोई मां कहके पुकारता है तो मन ऐसा पिघल जाता है कि दो एक वाजिब सच्ची बात सुनाके देहकी जलन मिटाऊं, इसका उपाय भी नहीं रहता है। मैं तो दुनियां भरके लोगोंकी मां हूं, जिनके सब कांग्रेस कार्यकर्ताओंकी मां, मेरे तो दुनियां भरके लड़के हैं। लेकिन मन जो बिलु निलू पर ही रहता है। इनको छोड़कर और किसी लड़केकी मां होना नहीं चाहती हूं। इन्हीं दो को तो मैं जी भरके प्यार नहीं कर सकती हूं—नहीं तो मेरा बिलू क्या प्यारका ऐसा भूखा होता। नहीं तो क्या वह जितनकी मां-दीदीको मां कहता? नहीं तो क्या निलू वगैरह जेठाई मांके लिए इतने पागल रहते। मैं चाहती हूं बिलू निलूको एकदम अपने हाथमें रखना, जिससे उनपर और किसीका दावा न रहे। लेकिन मेरे उन्हें कलेजेसे चिपकाए रहनेसे क्या होगा, और लोग भी तो उन्हे चाहते हैं। सभी उन्हें अपनी ओर खींचना चाहते हैं। मैं क्या उन्हें पकड़ कर रख सकती हूं? ऐसे ही तो बिलू जैसा मानी लड़का है। "तू" नहीं कहकर "तुम" कहनेसे ही मारसे उसकी आंखोंमें आंसू आ जाते हैं। एक दिन उन्होंने दुपहरमें कहा था—"बड़े बाबूको घरमें नहीं देखता हूं। अभीतक शायद लौटे नहीं है?" बिलू घरमें ही था। यह बात सुनकर वह रो-रो के परेशान हो गया। निलू होता तो हल्ला-गुल्ला करके घर हिला देता।.... दीदी तुम्हारे तो जितेन, धीरेन, हबेलू, बेला, बौरा, नाती-नतनी सभी हैं। तुम्हारे घरमें लक्ष्मी बिराजती हैं। किसी चीजकी कमी नहीं है। क्यों तुम बिलूको मुझसे छीन लोगी? क्यों

पराया बना दोगी ? अपने लड़केका जरा-सा भी हिस्सा मैं किसीको नहीं दूँगी। मेरी दुनियाँ तो इन बिलू निलूको छोड़कर और कुछ नहीं है। चावल नहीं, चूल्हा नहीं, माथा छिपानेके लिए थोड़ी सी जगह भी नहीं है! न तो रुपए पैसे हैं, न धन दौलत है। मैं तो लड़कोंके मुँहको देख कर ही सब दुःख तकलीफ भूल गई हूँ। यह भी भगवानसे सहा नहीं गया। लड़के फुसलानेके मन्तरसे सबने मेरे लड़कोंको पराया कर दिया।....जितेन की माँ-दीदी देखनेसे तो भले आदमीसी मालूम पड़ती हैं, लेकिन मन एकदम जलेबीके पेंचके तरह है। दूसरे घरमें कोई एक गहना बना कि उसे उलट-पुलटके देखकर, सात किस्मकी गलती निकालेगी। सब खबरकी उन्हें जरूरत। सोना तो लगता है खोटा सोनाकी तरह—कितना भर है—खाद कितना दिया है, किससे गढ़वाया है—कितना वजन है—गढ़ौनी कम दिया है तो गढ़न कैसे अच्छी होगी ? बिलू निलूसे मेरी दुनियाकी सब खबर उसे जानना ही चाहिए; तुम्हारी माँ तेलसे फोरन देती है कि घीसे—तुम्हारी माँ तेलमें बैगन छौंकती है कि थोड़ा तेल देके बैगनको भूँज लेती है, यह सब बात बचपनमें निलू वगैरहसे पूछती थी। अच्छा कहो तो, इन सब खबरोंकी उसे क्या जरूरत ? बिलू तो जैसा गुम-सुम है, किसी दिन कुछ बोलता नहीं, लेकिन निलू मेरे पास आकर यह सब बात नकल कर करके कहता था। एकदम हूबहू दीदीकी तरह आवाज, दीदीकी तरह हावभाव, सुनके हंसते-हंसते परेशान हो जाती थी। किन्तु दीदीको ऐसा करना चाहिए था ? मेरी तो अभाव की दुनियाँ है। तुम लोग हुए अपने आदमी। इसे लेकर आलोचना करनेकी जरूरत ? इधर दीदी हम लोगोंके लिए खूब करती भी है, सो मैं मानती हूं। रोग-बीमारीमें देखभाल करना, छूतक वगैरहमें खिलाना-पिलाना,

इन सबकी तो बात क्या। निलू तो अभी तक वहीं रहा करता है। जी-जान से करेगी—लेकिन खूब करती हूं यह बात सुना देनेसे भी बाज नहीं आवेगी—दीदीका स्वभाव ही इस तरहका है। और जरा भी गम्भीरता नहीं है—बड़ी हलचल-गलागल करती रहती है। बिलूको कहेगी "वारिन्दिरका बेटा"। निलूको कहेगी 'माछ पातरी', और उनके पिताका नाम रखा है 'दाँड़ी'। यह सब फिजूल बात नहीं कहकर सीधी भाषामें नाम पुकारनेसे क्या हो जाता? .. आदमी का मुंह वाला एक किस्मका बन्द कटोरा हम लोगोंके समयमें था—एकदम वैसा ही मुंह। नेनुओंकी बीजकी तरह काले दांत। ढेर-सा जर्दा मुँहमें रखकर चौबीस घण्टे पच पच थूकती रहती है।...... थी तो ब्राह्मण पुरोहितकी लड़की। नैवेद्यका चावल और कच्चा केला बचपन में खाकर तो आदमी बनी। पुरोहितीमें मिली लाल पाड़की साड़ी छोड़कर और कोई कपड़ा पहनने नहीं पाया। बड़े आदमीके घरमें शादी हुई इसलिए तर गई। सो नहीं, अब तो शानसे जमीनपर पांव नहीं पड़ते हैं—एकदम जैसे साँपके पाँच पैर देख लिए हैं। तुमको भगवानने दिया है, तुमको है। इसीलिये जिसे नहीं है उन्हें भी जरा आदमी समझो! मैं भी ऐसे अभागेके घरकी लड़की नहीं थी—और अभागेके हाथ पड़ी भी नहीं। लेकिन मेरा कर्मफल—सोना छूते ही मिट्टी हो जाता है......अच्छा दीदी, बिलू तुम्हें चाची कहता था तो उससे तुम्हारा मन भरा नहीं क्यों? नहीं दीदी सच्ची बात कहती हूं, तुमपर मुझे जरा भी गुस्सा नहीं है। तुम लोग थीं इसलिए निलू बिलू अपने जीवनकी एकाध साध मिटा सका। जब वे जेलमें थे, उन्हें खड़े होनेकी जगह नहीं थी, उस समय तो तुमने ही उन्हें रहनेकी जगह दी। बिलूके जानेसे क्या तुम्हें मुझसे कम दुःख होगा? सो क्या मैं जानती नहीं

हूं। अन्तरसे यदि तुम्हें बिल्लूको दे सकती तो क्या दीदी! तुम बिल्लूको बचा सकती? मेरा बिल्लू बचे दीदी, तो उसे तुम्हारे हाथ दे देनेमें मैं कंजूसी नहीं करूँगी। अब तो तुम्हारा भी संबल रह गया। बिल्लूकी कितनी स्मृतियाँ, और मेरा भी वही। उन्हें लेकर चर्चा करके ही अब जीवन काटना होगा। नहीं दीदी, तुम्हारी दया, तुम्हारा प्रेम मैं किसी दिन भूल नहीं सकूंगी। मेरे लड़के मछली खाना इतना पसन्द करते हैं, लेकिन आश्रममें तो मछली पकानेका कोई उपाय नहीं है। हमलोग बूढ़े आदमी— गांधीजीके कहनेके अनुसार बीस बरससे मछली मांस खाना छोड़ दिया है। लेकिन बाल-बच्चोंपर कैसे जोर डालूं? तुम तो दीदी मेरे मनकी बात समझती थी; रोज बिल्लू-निल्लूको बुलाकर मछली खिलाना;—मुझे अपने घरमें मछली खिलानेके लिए कितना जोरसे पकड़ना,—दीदी, तुम्हारे मनका प्रेम मैं समझती हूं। तुम्हारी मैं जन्म-जन्ममें ऋणी रहूंगी। तुम्हारी निन्दा करनेसे मेरी जीभ गल न जायगी। तुम्हारी निन्दाकी बात सोचना भी पाप है। आज मेरा मन ठीक नहीं है दीदी। सारा संसार तो मेरे लिये विष हो गया है। अच्छी बात मनमें कैसे आवे? तुम भी तो बिल्लूकी माँ हो—तुम्हें तो और फिरसे नहीं समझानी पड़ेगी मेरे मनकी बात। बिल्लू तुम्हें कितना प्यार करता है, कितनी भक्ति करता है। बिल्लूने जिसे एकबार माँ कहा, आजके दिन क्या मैं उसपर गुस्सा कर सकती हूं? बिल्लूके माँ कहकर पुकारनेका मर्म तो मैं समझती हूं। यह पुकारना तो नहीं है सिर्फ, पुकारना सुनके सारा मन दौड़ पड़ता है उसकी ओर। लड़के तो नहीं ये एक-एक दुश्मन हैं। लड़कोंके बारेमें जितना सोचा है, उसका आधा भी अगर भगवानके बारेमें सोचती तो जरूर भगवानको पाया जा सकता था।

लेकिन जितना भी जकड़ कर धरो फिसलकर भाग जायगा। यह फ़न्दा एक बज्र-गिरह है। नहीं तो—वही लड़का बिल्लू बरामदेमें चटाई बिछाकर बैठकर पढ़ता रहे—मैं अगर उसके पीछेसे दबे पांव चुपचाप चली जाऊं तो भी वह समझ जायगा। कहेगा "मांकी गंध लग रही है।" और सचमुच गंध लगती है। कहेगा तुम स्नान करके आती हो तो तुम्हारी देहमें मांकी गंध पाता हूं। मैं कहती अरे बदमाश लड़का, तू सात किस्मका बासी कपड़ा-लत्ता पहनकर मुझे मत छू, पूजा घरमें मुझे ढेर काम बाकी है। सो क्या लड़का सुनेगा,—कहेगा मटकाकी साड़ी क्या छूनेसे छुआ जाता है? और बिल्लू इतना बड़ा शैतान है कि वह कितने दिनोंकी कितनी ही बातें जमा करके रक्खे हुए है; वे सब बातें याद कर-करके मेरे पीछे लग जायगा, और कहेगा, मां तुम भैयाको मुझसे बेशी मानती हो।" अरे पगला, सो क्या होता है? मां क्या एक लड़केको कम, एक लड़केको ज्यादा प्यार करती है? भगवानका नियम ही वैसा नहीं है। वैसे ही बिल्लू कहेगा—"अच्छा मां मान लो, पूर्णियामें 'बक राक्षस' आया है। वह सिर्फ लड़कोंका मांस खायगा। और कोई मांस वह नहीं खाता है। हरेक घरसे एक लड़का उसे देना ही पड़ेगा। आज तुम्हारे घरकी बारी है। बोलो, ऐसी हालतमें तुम बक राक्षसके पास किसे भेजोगी—भैयाको या मुझे?" जा, जा, बक मत तू। इतनी फिजूल बात तू बोल सकता है रे? इतनी बात तुम्हारे दिमागमें आती कहांसे है, मैं तो समझ ही नहीं सकती हूं। किसे दूंगी, किसीको भी नहीं दूंगी।" ऐसे ही बिल्लू—'समझ गया समझ गया' कहकर घरको हिला देगा।—समझे हो तो खाक। तुम लोग अगर मांके मनकी बात समझते, तो मुझे और किस बातका दुःख था? नहीं तो क्या

पढ़ लिखकर निलू मुझे एक दिन समझाता कि मांका प्यार स्वार्थके लिए है। वह बात समझाते हुए उसने एक कहानी कही थी—"एक बिल्ली और उसके बच्चेको एक कड़ाहीमें बैठाके नीचेसे चूल्हेमें आंच दी गई। और ऐसा इन्तजाम किया गया कि जिसमें बिल्ली भाग न सके। जब कड़ाही खूब गरम हो गई तो बिल्ली धीरे-धीरे आकर बच्चेकी पीठपर बैठ गई।" सब मां शायद इसी तरहकी हैं, जबतक अपनी देहमें आंच नहीं लगती है तबतक मां, बेटा-बेटा कहकर मरती है।" कहांसे आजकलके लड़के ये सब सीखते हैं सो समझ भी नहीं पाती हूं कुछ भी। आजकल कालेजमें यही सब पढ़ाया जाता है क्या? बिलू तो कभी ऐसी बातें नहीं करता। यह बात सुननेके बाद निलूके साथ इस विषयमें तर्क करनेमें घिन मालूम पड़ती है। लेकिन निलूकी यह बात मेरे मनमें गँथ गई है। और एक दिन वह और भी एक बात बोला था—वह कहीं किसी दिन नहीं भूलूंगी। वह भी मां की स्वार्थपरताके सम्बन्धमें है। बड़े भूकम्पके बाद, बहुत दिनोंतक थोड़ा बहुत भूकम्प होता रहा। एक दिन रातमें जैसे ही जरा धरती हिली कि जितनकी बहू नींदके जोरमें गोदके बच्चेको घरमें फेंककर दौड़ कर बाहर चली आई। और कहां जायगी। उसे लेकर घर भरके लोग तो बेचारीको फाड़ खानेके लिए तैयार और निलूकी पूंजीमें भी एक नई कहानी जमा हुई, मुझे सुनानेके लिए। हां, बाबू हां, मां सब स्वार्थी हैं, हजार बार स्वार्थी। और लड़कोंका प्रेम एकदम निःस्वार्थ, जरा भी मिलावट नहीं। हुआ तो? यही सुनकर अगर खुश हो तो यही सही।.... बचपनसे निलूने क्या कम परेशान किया है मुझे? बिलू निलू दोनों भाई एक साथ ही आदमी हुए, किन्तु निलूने कहांसे इतनी बदमाशी सीखी, यही सोचती हूँ। कितनी दफे एकदम रुला-रुलाके छोड़ा है। दोपहरमें शायद

मुझे जरा नींद आ गई। कहाँसे उस सपूतने ढेरसे 'टोपार्टी' फूलके पके फलोंको लाकर मेरी नाकके पास फाड़ना आरम्भ किया। सब बीज छिटक कर नाक, कानमें घुसने लगे। हाय-माय करके उठी। और बकनेमें तो देहमें जैसे लगता नहीं है; हः हः करके हँसने लगा। छोटे-बड़ेका ज्ञान उसे जरा भी नहीं है। अपने खयालमें ही पागल। एक दिन क्या किया कि,—बड़ा हो जाने पर—खटमलोंको मार-मार कर उनके खूनसे 'साइन बोर्ड' की तरह लिख रहा है—"अहिंसा परमो धर्म" मैं तो समझ गई कि किसे ठेस देनेके लिए यह लिखा गया है। फिर उनके कान तक पहुँचेगा, यह सोच-कर मैंने ऐसा भाव दिखलाया जैसे मैंने लिखा हुआ देखा ही नहीं। अरे निलू एक दिन जब माँ-बाप नहीं रहेंगे, तब समझेगा कि माँ-बाप क्या चीज़ हैं। दाँत रहने पर क्या दाँतकी कदर जानी जाती है? अपने पिताके मनको दुःख पहुँचानेके लिए निलू करेगा क्या कि ठीक आश्रमकी जमीनका सिमाना जहाँ खत्म होता है, इंचसे नाप करके एक इंच दूर पर मांस पकाके खायगा। और कहेगा, "आश्रमकी जमीनमें खस्सी खाना मना है, यहाँ तो नहीं।" अरे निलू, महात्माजी बकरीका दूध खाते हैं क्या इसीलिए आश्रममें मांस खाना मना है? आश्रममें क्यों मांस खाना मना है सो तू भी जानता है, मैं भी जानती हूँ। तब क्यों उन्हें खोंचा देनेके लिए ऐसी बात कहेगा।... तू मछली मांस खाना पसन्द करता है, और तुझे पकाकर खिला नहीं सकती हूँ, यह क्या मेरे लिए कम दुःखकी बात है? लेकिन आश्रमका नियम जो है। क्या करूँ? बहुत बार दीदीके घर जाकर बैठी-बैठी बिलू निलूका मछली खाना देखती हूँ। निलूको मछली कितनी अच्छी लगती है—'रेवा' मछलीके काँटे तकको चबाकर खा जाता है। लेकिन बिलूने कई बार कहा है

कि अबकी माँ मैं मछली छोड़ दूँगा; मैं और दीदीने ही उसे कह-कह कर छोड़ने नहीं दिया। ऐसे ही तो जो चेहरा है।···दीदीके घर तो फिर भी दो-चार दिनमें एकाध मछली पेटमें तो पड़ती है। बचपनमें हमारे देशमें हम लोग सोच भी नहीं सकती थीं कि बिना मछलीके लोग किस तरह एक बेला भी भात खा सकते हैं। अपने लड़कोंको इस हालतमें हम लोगोंने ही पहुँचा दिया है। वे लोग बंगाल देशमें रहे भी नहीं, वहाँकी बातें, आचार-व्यवहार कुछ जान भी न सके। ये लोग तैरना जानते नहीं, बन्या, हिजल, गाव इन सब गाछके नाम सुने तक नहीं। एक दिन लड़कोंके सामने बंगालके "डफ-कीर्त्तन" की चर्चा की। निल तो "डफ" नाम सुनकर हँसते-हँसते लोटपोट हो गया, बोला ऐसा बेढब नाम तो कभी सुना ही नहीं। बिलूको एक दिन उस घरमें 'तिजेल' लानेके लिए कहा। वह पूछने लगा 'तिजेल' क्या है माँ? हमारे देशका छोटा बच्चा भी यह बात जानता है, ये लोग अभी तक यह नहीं जानते हैं। बारह मास, तेरह पार्वण क्या है, सो क्या ये जानते हैं? बिलू यह सब खोद-खोदके पूछता है। उसे सब बातें जान ही लेना चाहिए। माँ 'दोल' किस पूजाको कहते हैं? 'चड़क' के दिन बचपनमें तुम लोग क्या करती थीं? 'गाजन' गानका सुर कैसे है? तुम्हारे गाँवमें कोई वैरागी था? सारी दुनियांकी खबरकी उसे जरूरत थी। कब याद नहीं, बिलू उस समय छोटा था; उसके सामने मैंने कहा था कि हमारे गाँवके निखिल चौधरीका दामाद पिशाच सिद्ध करने जाकर श्मशानमें मर गया। उस दिन भी उसने वही गप्प किया। बिलूको अगर पूछती हूँ, अरे क्या करेगा इन सब गप्पोंको सुनकर, तो कहेगा—"तुम्हारा बचपन याद कर डालूँगा।" मेरा बचपन याद कर डालेगा क्या रे? ऐसी मीठी बातें वह लड़का

बोल सकता है, सुनकर ही मन आनन्दसे भर जाता है। निलूको लेकिन यह सब बला नहीं है। उसे यह सब खबर सुननेके लिए समय और धीरज कहां? दिन-रात घूमता फिरेगा; बीच-बीचमें हड़बड़ा करके घरमें घुसेगा। खींचके फेंक दिया पहनावेको। हुक्म हुआ, माँ गञ्जीमें साबुन लगा देना। माथेमें एक चुल्लू तेल देकर, दो लोटा पानी देह पर पड़ा कि नहीं पड़ा, आ गए रसोई-घरमें। 'अभी तक भात नहीं परसा गया।' कबसे पकाकर परोसकर बिलू और मैं भात आगेमें लेकर उसके लिए बैठी हूं, यह लड़केको मालूम ही ही नहीं।...और बिलू तो अपना कपड़ा-लत्ता साफ करता ही है, बहुत बार उसके कपड़े भी साबुनसे साफ कर देता है। अरे दुत्, किसके साथ किसकी उपमा!

"अब कैसी हैं?" अगुलीसे जरा ठेलकर ननादेवीने मुझे पूछा।

यह लोग क्या मुझे सांस लेनेकी भी फुर्सत नहीं देंगी? दो घड़ी एकान्त में बिलूकी बात सोचकर उसे जरा नजदीक पानेकी कोशिश करूँ, इसका क्या उपाय है? कितनी हितैषी हैं मेरी! झटसे धड़ाधड़ सात सवाल कर बैठेंगी— ग्रामोफ़ोनके गानेके रिकार्डकी तरह। एक सवाल खत्म होगा कि दूसरे सवालके लिये तैयार होना पड़ेगा। [illegible] क्त अगर घरमें आग भी लग जाय तो भी नेना देवी अपने [illegible] हुए सवालोंको छोड़ेंगी नहीं; प्रेम देखके तो मर जाती हूँ। जवाब देती हूँ, हाँ री हाँ। 'खूब अच्छी हूँ।' जी नहीं मिचलाता; सिर दर्द कम गया है, गरमी नहीं लगती है, पेटमें लहर नहीं मालूम देती है। मुँहका तीतापन कम गया है। कम्बल बिछौना झाड़ देनेकी जरूरत नहीं है। हो गया तो? मेरे लिये और फिक्र नहीं करना पड़ेगा। अब चुपचाप जाकर अपने बिछौनेपर शान्त होकर सो रहो।

नैना देवी मेरा जवाब सुनकर अवाक् हो गई। शायद सोच रही है कि माथा खराब हो गया है क्या? बिना कुछ कहे वह अपने बिछौनेकी तरफ चली गई। वह किसीकी बात चुपचाप सह लेनेवाली नहीं है। वह मेरी बात लेकर एक झंझट ही करेगी—आज हो या कल। यही तो कई दिन पहले उसकी मां मुलाकात करने आई थी। उसने क्या किया कि,—साबुन, पेन्सिल, बही, मक्खन, किशमिस और भी जेलमें मिली, कितनी ही छोटी-मोटी चीजें सब साथ ले गई जेलके दरवाजेपर—मां के साथ घर भेजनेके लिए। वहां सी. आई. डी. और जमादारने धर दबाया। पहले उन लोगोंके साथ झगड़ने लगी। कहने लगी कि ये सब मेरी चीजें हैं! क्यों बाहर नहीं भेजने देगा? तब सी. आई. डी. ने कहा कि मेरे साथ कानून बनियाने आई है तो इन सब चीजोंको जाने नहीं दूंगा। और अगर नर्मीसे मुझसे अनुरोध करें और कहें कि इन सब चीजोंकी आपके घरमें जरूरत है, तो आपकी मांको इन चीजोंको ले जाने दे सकता हूं। तब नैनादेवी उसीमें राजी हो गई। गेटके जमादारको किशमिश भी खिलानी पड़ी। देखो कितना अपमान हुआ। और अपमान क्या सिर्फ उसीका हुआ। इससे तो हम सबके मुंहपर कालिख लगी। जमादरनीने आकर सब बातें हमारे वार्डमें कह दीं। बहुरियाजी जरा मुंहफट किस्म की है। वह जैसे ही जरा नैनादेवीको कहने गई कि और कहां जायगी। एकदम आग लग गई। वह हंगामा मचा कि क्या कहा जाय?

बहुरियाजीको तो अब मारा कि तब मारा! यहां नरम मिट्टी पाई है कि नहीं। सी. आई. डी. के सामने यह तेज कहां था? उसके बाद पन्द्रह दिनों तक उसके और बहुरियाजीके दलके साथ झौंव-झांव चला। वह तो

अकेली एकरोंके बराबर थी। बोलीमें कितना जहर, कैसा तीखापन ? कहा है कि—'भैंसकी सींग टेढ़ी लड़नेमें अकेली।' उसने अकेले झगड़ा करके सबको ठंढा कर दिया था। अब न जाने मेरे पीछे पड़कर क्या करेगी ? करेगी तो करेगी। जो मनमें आवे सो करे, मरनेसे बढ़कर क्या गाली है ? भगवानने मुझे जो दुःख दिया है, उससे अधिक और मेरा वह क्या करेगी। हर चीजकी सीमा है, लेकिन आदमीके दुःखकी क्या सीमा नहीं है।....ऐसे ही तो बिल्टूकी बात सोचकर मेरा खून पानी हो रहा है,— उसपर चमैन जमादारनी एक दिन मुझसे बोली "बंगाली माईजी, तुम्हारे लड़केको सरकार बहादुरने क्या अपनी इच्छासे सजा दी है ? सुना है कि तुम्हारा ही एक लड़का गवाह है, इसलिए सजा हुई।" क्या बोलती है यह ? सुनकर मुझे तो काठ मार गया। पूछा, तुमसे किसने कहा ? उसने जवाब दिया कि "नैना देवी एक दिन मुझे कहती थी कि ऐसी चर्चा सुनती हूँ। बाहर वार्डरोंसे पूछकर ठीक बात क्या है मालूम करो तो। बाहर पूछ-ताछकर मैंने जाना कि नैना देवी ठीक ही कह रही थी। नैना देवी वगैरहने तुम्हारे सामने कहनेको मना किया था, माईजी। लेकिन मैंने सोचा कि तुम्हारे घर की बात है। सभी जानेंगे और सब बोल-चाल करेंगे और तुम नहीं जानोगी, सो क्या हो सकता है ? मेरा भी तो धर्म है। अच्छा माई-जी, तुम्हारे लड़कोंके बीच झगड़ा है क्या ? मेरे भी दो भाइयोंने एकबार एक कटहल गाछको लेकर सिरफुड़ौवल कर लिया था। उसके चलते कितने पुलिस आए। मुट्ठी-मुट्ठी रुपये खर्च हुए। सत्रह रुपए लेकर दरोगा साहबने मुकदमा उठा लिया। माईजी, तुमलोगोंको बहुत जोत-जमीन, माल-मवेशी हैं क्या ? उस लड़केने गांधीजीमें नाम नहीं लिखाया, मालूम होता है।

किसके पेटमें कैसी सन्तान भगवान देता है—कोई कह नहीं सकता।"—सुनकर तो मेरी छाती सुख गई। बोली,—क्या झूठी-मूठी बातें फैला रही हो। तुम्हारे नाममें रिपोर्ट कर दूँगी। वह बोली कि माईजी, मैं तो अच्छी समझ कर ही बोली थी। झूठ भी हो सकता है। मैंने तो जो सुना सो कहा—एक भी बात मनगढत नहीं है। रिपोर्ट मत करो माईजी। मेरा पुरुष तीन बरससे लकवासे पड़ा है—मेरे रोजगारसे ही बाल-बच्चे दो मुट्ठी खाते हैं। मैंने उससे कहा, अच्छा, हुआ जा. जा। खबरदार ऐसी बात फिर मेरे सामने मत करना। वह तो चली गई। किन्तु उसके बाद से, मेरे मनमें छः-पांच हो रहा है। इतना झूठ भी क्या लोग बोल सकते हैं।........

........पायजामा पहने दादा बिलू अपने छोटे भाई निलू—नंगे निलू को गाल छूके प्यार करता है 'निलू-निलू—पिल पिल्लू'।......

वही निलू, बिलूके विरुद्ध गवाही देगा! यह तो मैं मर जानेपर भी विश्वास नहीं करूँगी। निलू गँवार है, निलू खामखयाली, सब ठीक है—लेकिन वह भाईके लिये जान देता है। निलूआ कभी ऐसा कर सकता है? उस दिनसे जब यह बात सोचती हूँ मेरे कलेजाका खून जम जाता है। अगर खबर सच्ची हो? जेलके दरवाजेपर एक दिन उसके साथ मुलाकात थी। सुपरिन्टेण्डेण्ट बीच-बीचमें खातिरसे हम लोगोंको मिलने देता है, उस दिन सोचा कि उससे एकबार पूछकर देखूँ कि वह कुछ जानता है कि नहीं। फिर सोचा छोड़ो—यह बात क्या पूछनेकी है? अगर वे बोले कि, 'निलूके विरुद्ध ऐसी बातपर तुम भी विश्वास करती हो?' और मानो, अगर कहीं बात सच हो। ऐसे ही तो उनक चेहरेको देखकर ही समझ गई कि कितनी बड़ी आंधी

उनके मनमें चल रही है। मेरे मनमें क्या चलता है सो तो मैं जानती हूँ। उसी से तो उनके मनकी हालतका कुछ अन्दाज लगा सकती हूँ। उसपर देखा कि वे मेरे मुँहकी ओर ताक भी नहीं सकते हैं। अन्तमें छः पांच करते वह बात पूछी ही न गई। मुँहकी बात मुँहमें ही रह गई। सी. आई. डी. बोला, अब उठिए वक्त हो गया है।....घूम फिरकर सिर्फ यही बात याद आती है। निलू क्या कभी ऐसा काम कर सकता है? वह तो भाई कहने ही से मुग्ध हो जाता है। बचपनसे ही भाई जो करेगा सो उसे भी करना चाहिये। निलूको मैं बिलूसे अलग करके सोच ही नहीं सकती हूँ। निलू बिगड़ैल है। कब बाहरमें क्या कर बैठेगा; यही सोच कर मैं घबराती रहती हूँ। लेकिन हमेशा दिलमें एक भरोसा रहता है कि उसका भैया है, उसे सम्हाल लेगा।····वह जब जेल गया था, तब भी मनमें यही भरोसा था। बचपनमें निलूको कोई कुछ कह दे, तो वह भैयाके पास नालिश करता—"ए भैया, देखो न।"···

बचपनमें ही निलू और बिलू हेड मास्टरके क्वार्टरके आम गाछके नीचे खेल रहे हैं—हमीद दफ्तरी गेटमें घुसा। घुसते ही दूरसे कोरनीस करनेकी तरह आदाब किया, और बोला, "आदाब निल्लू बाबू, एक बुढ़िया मेमके साथ तुम्हारी शादी कर दूँगा। कल्ह मुझे एक बुढ़िया मेमने कहा था कि वह निल्लू बाबूको छोड़कर और किसीके साथ शादी नहीं करेगी।"

"भैया देखो न, मुझे क्या सब कहता है।"

बिलूने निलूको समझाया, "वह तो चिढ़ाता है। बूढ़ी मेम भी क्या शादी करती है?"

निलू बोला "नहीं। वह बोलेगा क्यों?"

दफ्तरी कहता गया—"बुढ़िया मेमके छोटी-छोटी मूछें हैं। पहले मुझे ही शादी करनेको कहती थी। तो मैंने कहा, जिसे दाढ़ी नहीं उसके साथ मैं शादी नहीं करता हूँ। तब वह बोली कि तब मेरी निल्लू बाबूके साथ शादी करा दो।"

"भैया! देखो न।"

निलूने रोना-चिल्लाना शुरू किया। बिलू उसे समझाते-समझाते मेरे पास ले आया। "कहांका बेवकूफ लड़का है, चिढ़ानेसे भी कोई रोता है। तब तो जितना रोओगे उतना और चिढ़ावेगा।" उसके बाद बिलू मुझसे बातें करने लगा—"निलू एकदम नहीं समझता है। मैं जितना समझाता हूँ उतना ही वह रोना शुरू कर देता है। जैसे मैंने बिलूसे कहा "तुम हुए उसके भैया, तुम नहीं समझाओगे उसे तो और कौन समझावेगा, बोलो।" वैसे ही बड़ा खुश हो गया। भाई पनेकी जवाबदेही तो कुछ कम नहीं है।····

बिलू निलूको आंखोंमें रखता था। बहुत दिन हुए निलूको शौक हुआ, कनेल फलके बीजसे खेलनेका। बिलूको कहा—"बिलू, देख तो भैया, निलू पर नजर रखना। मुझे बड़ा डर लगता है, निलू किसी दिन कनेल न खा ले। उसका बीज विष है, जानता है तो?" बिलूने पण्डितकी तरह कहा—"सो कहना नहीं होगा मुझे। यही तो उस दिन निलू वगैरहने बीए जमा किए थे, बोला खायगा। उन्होंने कहा कि इन बीजोंका नाम हिन्दुस्थानी बादाम है। मैंने ही तो उन्हें उस दिन खाने नहीं दिया।"····सचमुच बचपनमें, बिलू निलूको क्षणभर भी आंखोंकी ओट नहीं करता था। वह उस समय कितना छोटा था—निलूके कपड़ोंके बटन लगा देना, जूतोंका फीता बांध देना, सब अपने हाथों करता था। वही निलू कभी बिलूके विरुद्ध जा सकता

है। और अगर जाय भी तो अपनी इच्छासे कभी नहीं गया होगा। हो सकता है पुलिसके जुल्मसे गया हो। वह दरोगा सब कर सकता है। शायद निलू पर बहुत अत्याचार किया हो। शायद जज साहबके सामने बिलूके विरुद्ध बोलनेके समय उसकी छाती फटती हो, आँखोंमें आँसू आ गए हों। लेकिन मालूम होता है नहीं बोलनेका कोई उपाय नहीं था। नहीं, नहीं बिलूका साक्षी देना क्या विश्वासके लायक बात है। किससे क्या सुन लिया है चमेन जमादारिनने,—और उसे ही बढ़ा चढ़ाकर कहने आई है! निलूने अगर वही किया है, तो उस छोकरेका क्या और मैं मुंह देखूंगी? जहाँ आँखें ले जायँगी वहाँ चली जाऊँगी। मेरा मन कहता है कि ऐसा हो नहीं सकता है। और मांका मन क्या कभी गलती कर सकता है?····

वहीं कपिलदेवकी शादीके वक्त बिलू निलू उसके घर गए थे। मेरी ख्वाहिश नहीं थी कि वे वहाँ जाँय। उस समय तो वे छोटे थे। जाकर बीमार पड़ जांय; उन लोगोंके घरका आचार-व्यवहार मालूम नहीं, क्या करनेका जगह क्या कर दें। लेकिन जिस दिनसे "दही-भात" गाँवसे नाई हल्दी लगी हुई सुपारी उनके हाथ दे गया है, उस दिनसे उन्होंने जिद लगाई कि वे शादीमें जायँगे। कपिलदेवके पिता उस समय जीवित थे। वे एक दिन आकर बैलगाड़ी पर लड़कोंको ले गए। वहाँ आठ-दस दिनोंसे ज्यादा नहीं रहे। लेकिन क्या शिक्षा उस देशकी थी, इन्हीं कई दिनोंमें जो-सो गीत सीख आए।····आँगनकी एक तरफ बैठा है निलू—और एक तरफ बिलू। —दोनोंके सामने एक-एक बिस्कुटका पुराना टीन है, और हाथमें एक-एक लकड़ी। उसीसे टीन बजा रहे हैं। निलू बोला—"अब लेकिन भैया, 'बकड़ाके पाँच टाँग' को और नहीं बजाऊँगा। 'तेकड़के तकदुम मकड़के

लावा' भी नहीं। अबकी शादीके समय गीत होगा।" दोनों बजाने लगे। बिलू गाता है "कपिलदेवके पाँच बिहा, छठमा चुमौना"। बिलू वर पक्षका है। और ओसारेके दूसरे कोनेसे कन्या पक्षका निलू पलट कर जवाब देता है, "बजाते जाव धाँय-धाँय—कपिलदेवकी बहूका छठमा साँय"। खूब डाँटा उन लोगोंको। ये सब अट-संट गीत क्या भले आदमीके लड़के गाते हैं? बिलू एकदम ठकमका गया। निलू बोला "दही-भातमें शादीके समय तो सहदेवके गांवके सब लड़के-लड़कियाँ यही गीत गाती थीं। वे लोग भले लोग नहीं हैं क्या?" मैं जानती हूँ कि निलूको जो काम करनेको जितना मना किया जाता है, वह लड़का उस कामको उतना ही ज्यादा करता है। बिलू तो मेरी बात समझ गया। उसके रुक जाने पर अकेला निलू कितनी देर तक चलावेगा। उसे तो सिर्फ नकलनवीसी आती है। बिलूके रुक जाने पर निलू कुछ देर तक मुझे सुना-सुनाकर गाने लगा "तकईके तकदुम मकईके लावा"; उसके बाद धीरे-धीरे खुद ही शान्त हो गया। पीछे घरसे सुना कि वह भाईके पास जाकर चुपकेसे पूछ रहा है "भैया, गीत सचमुच खराब है क्या?" भाई खराब कह देगा तब खराब होगा। भैयाकी बात ही वेद वाक्य है, और मैंने जो इतनी देर तक समझाया, मना किया, चिल्लाकर मैं मरी—सो कुछ नहीं।……

आज-कल बड़े हो जाने पर कई दिन देखा है दोनों भाई घरमें बैठकर गप्पें लड़ा रहे हैं। मैं शायद जरा कुछ कहने या गप्प करने गई, बस निलू 'फैट-लैट' करके अंगरेजीमें भाईसे क्या सब कहने लगेगा। कहकर हः-हः करके हँसने लगेगा। मुझे लगता कि मेरे बारेमें कुछ कहा गया है—कोई हँसी-मजाक होगा। और अंगरेजीमें बड़े लोगोंके बारेमें कुछ

बोलनेसे तो दोष होता नहीं। क्या शिक्षा है! बिलू बोला "माँ गुस्सा मत करो। निलूने गुस्सेकी कोई बात नहीं कही है; क्यों निलू झूठ-मूठ माँको गुस्सा दिलाते हो?" मैं तुम लोगोंसे और क्या चाहती हूँ। दो मीठी बातें करके भी उपकार नहीं कर सकते हो। दिनभरमें निलू, तू मेरे साथ कितनी देर बातें करता है? सो भी क्या ऐसी लाठीमार बात न कहनेसे नहीं चलेगा? फिर हँसता है, लाज नहीं लगती। बचपनसे तू एक ही किस्मका रह गया। "अंगार शत धौतेन मलिनत्वं न मुञ्चति।" निलू फिर हँसने लगा। गलत कहा मैंने शायद।.......

"जमादारिन! जमादारिन! ए मनचनिया! बंगाली माईजी सोई हैं क्या?"

कहां जमादारिन, कहां मनचनिया। जमादारिन बरामदेमें सो गई है, और मनचनिया मेरे पास बैठकर ऊँघ रही है। नर्मदा बेनकी बातोंका कौन जवाब दे? जवाब नहीं देना ही अच्छा। नहीं तो और थोड़ी देर मनचनिया शायद मुझे दिक करे। नर्मदा बेनका घर अहमदाबाद है। बहुत बड़े आदमीकी लड़की है। वह महात्माजीकी प्यारी शिष्याओंमेंसे एक है। शरीरका रंग बिल्कुल गोरा, खद्दरकी साड़ी पहने हुई। जमशेदपुरके मजदूरोंकी सेवाके लिए बिहार आई थी। वहींसे गिरफ्तार हुई। हम लोगोंके वार्डके सामने ही एक छोटा घर है। पहले वह सौरी-घरके लिए या किसीको छूतकी बीमारी होने पर उसे अलग रखनेके लिए व्यवहार किया जाता था। नर्मदा बेन अंग्रेजीमें बातें कहती हैं; सुपरिण्टेण्डेण्टके साथ खूब बात-चीत है। उसे कहकर वह इस घरमें चली गई है। वहाँ अकेली ही रहती है। बड़े आदमीकी लड़की; यहाँ हम लोगोंके साथ रहनेमें उसे असुविधा

होती थी! घरको खूब सजाया है। कितने पर्दे, कितने टेबिलक्लाथ! चारों ओर फूलका बाग लगाया है। दिन-रात उसी बागमें छोटा-मोटा काम करती रहती है। रोज बहुतसे फूल मुझे दे जाती है। अभी भी सिरके पास पड़े हैं, उसीके दिए हुए शीशेके लोटेमें बहुतसे फूल सब मालूम पड़ते हैं, जैसे कागजके हैं। जरा भी गन्ध नहीं। बिलू रहता तो जरूर इनके नाम मुझे कह देता; आश्रममें बिलूने कितने फूल लगाए थे, उसका क्या ठीक है? जो कोई नया मौसमी फूल खिलेगा, मुझे उस फूलका नाम सुनाना उसे चाहिए ही। मुझे क्या खाक इतने अंग्रेजी नाम याद रहते हैं? नर्मदा बेनको बिलूकी ही तरह फूलोंका शौक है, इसलिए वह मुझे बड़ी अच्छी लगती है। लेकिन वह मुझे इतने फूल देती है—मैं फूलोंका मर्म क्या समझूँगी? यह तो सिर्फ छुट्टी छोड़ानेके लिए है। बिलूको अगर रोज सेलमें कुछ फूल भेज सकती, तब न समझती तुम्हारी अंग्रेजीका जोर—नर्मदा बेन अगर साहबको कहती तो साहिब जरूर सेलमें रोज फूल भेजनेकी अनुमति देता। यही सोचकर नर्मदा बेनको एक दिन बिलूके फूलोंके शौकके बारेमें कहा था। वह बात उसके माथेमें काहेको घुसेगी? विलायतमें जाकर क्या धान चावल देकर लिखना-पढ़ना सीखती थी! विद्या एक चीज है और बुद्धि दूसरी चीज है।—उसी दिनसे ढेर फूल मुझे दे जाती है। और साहबके सामने अनुरोध करनेके समय कहा गया सिर्फ अपने यूरोपियन किस्मके भोजनके लिए। साहब रोज नर्मदा बेनके लिए अपने घरसे चोकर भरे आटेकी एक पाव-रोटी भेज देता है। अपने मनकी बात उसे साफ-साफ कहनेमें भी हिचकिचाहट होती है। वह औरत लेकिन बड़ा लेक्चर देती है। कथावाचककी तरह जब-तब दिनमें आकर हम लोगोंको सत्य और

अहिंसाकी बातें समझाती है। हिन्दी तो मेरी ही तरह बोलती है। टूटी-फूटी हिन्दीमें क्या सब बोलती है, उसकी आधी बातें, खाक भी समझमें नहीं आती हैं। सिर्फ बीच-बीचमें कानोंमें आते हैं सत्य, अहिंसा और बापूजी। अगर यह सब लेक्चर देना हो तो कथावाचककी तरह इन बातोंको मीठी भाषामें बोलना भी सीखना पड़ता है। गांधीजीके आश्रममें ये सब लेक्चर सीखाए जाते हैं क्या? नहीं—बिल तो एक बार साबरमती गया था—वह तो यह बात कभी बोला नहीं। अच्छा, इतने आदमियोंके रहते नर्मदा-बेन ये सब बातें ज्यादातर मुझे ही क्यों सुनाने आती है? क्या वह समझती है कि मैं सत्य बात नहीं बोलती या दूसरेके गहने-कपड़े देखकर हिंसासे फट मरती हूँ। अरे ये सब बातें मुझे क्या सुनावेगी। आज बीस बरसोंसे यह सब सुनते-सुनते कान पक गए। कितनी ही वक्तृताएं सुनी हैं—और नर्मदा बेन समझती है कि मुझे नई बातें सिखला रही है।···जब पहले-पहल नया आश्रम हुआ, तब वे मुझे इन सब बातोंको समझानेकी कोशिश करते थे। उस समय मेरा मन निल बिल और दुनियादारीमें लगा हुआ था। उन सब बातोंको जाननेकी मेरी ख्वाहिश भी नहीं थी, समझ भी नहीं सकती थी। इस कानसे सुनती थी उस कानसे निकल जाती थी। मुझे सिर्फ यही लाभ मालूम होता है कि इससे मैं उनके कुछ समीप आ जाती। वे हमेशा जरा गम्भीर स्वभावके आदमी हैं। उनके साथ क्या कभी जी खोलकर बातें कर सकती हूं? जी खोलकर बातें क्या करूँगी—डरसे मरती हूँ। हमलोगोंके बीच और लोगोंकी तरह तो नहीं है। स्वामीके साथ जो बात मनमें आवे सो नहीं बोलना,—हँसी आने से हँसी रोकना, हमेशा 'यह क्या कर दिया, यह क्या कर दिया' का डर लगा

रहना, इसका दुःख भुक्तभोगी ही जानती है।...उन्होंने ही मुझे सिखाना आरम्भ किया—चरखा की बात उठनेपर, महात्माजीकी बात उठनेपर, देशकी बात उठनेपर लोगोंके सामने क्या बोलना होगा। इस देशमें तो 'चरखा मेरा भतारपूत, चरखा मेरा नाती' यह बात कोई समझेगा नहीं—यहां तो दूसरे किस्मकी बातें कहनी पड़ेंगी। इसलिये उन्होंने कितनी ही कहावत सिखा दीं। वे लोग कितनी ही जगह रोज लेक्चर देते हैं, इन लोगोंको तो इन सब कहावतोंकी जरूरत नहीं होती है।....कबकी बात थी, भूल भी गई, दूत्। क्या एक था;—स्वामीको फिर दूसरी शादी करनेकी इच्छा हुई। स्त्री यह समझ गई। समझकर बोली, जब तुम्हारी इच्छा है तो शादी करो। मेरे लिये फिक्र करनेकी जरूरत नहीं है; मेरा तो चरखा ही सहारा है। इसी तरहकी और भी कितनी बातें उन्होंने सिखाई थीं! सोचा था कि मैं भी शायद उन्हीं की तरह लेक्चर देती घूम सकूँगी। पीछे जब उन्होंने समझा कि मुझसे यह सब कुछ हो नहीं सकेगा, यह सिर्फ राखमें घी डालना है, तब उन्होंने छोड़ दिया। मेरी भी जान बची।....तुम सब छोड़-छाड़कर इस रास्तेपर आई हो, अच्छा किया है, मैं तो रोकती नहीं हूँ। मुझे सारी जिन्दगी दुःख झेलना पड़ेगा। उसके लिये मैं तैयार हूं; जेल जानेको कहा, जेल भी आई हूं। लेकिन एक जमात लोगोंके बीच खड़ी होकर 'प्यारे भाइयो!' यह मुझसे नहीं होनेका। तुम्हारा आश्रम चलानेका, लड़कोंको आदमी बनानेका भी तो एक काम है?...

...रामगढ़ कांग्रेससे पहले तुम्हारी बात मानकर बभनगामा जाकर कितनी परेशान हुई!—पटनासे चिट्ठी आई कि जल्द कई स्वयं-सेविका भेजो। बड़ी ताकीद। अभी उनको ट्रेनिङ्ग दी जायगी, नहीं तो कांग्रेस अधिवेशनके

समय वे लोग तैयार नहीं हो सकेंगी। महाराष्ट्रसे एक भद्र महिला आकर रामगढ़में बैठी हैं। स्वयं-सेविकाओंको ट्रेनिङ्ग देनेके लिये। राज तो गया ही लाज भी गई। मानो जिला की इज्जत और बचेगी नहीं। जेल जानेवाली औरतें तो कहनेको जिलाकी सिर्फ पांच हैं—मैं, हरदाकी दुबेइन, बहुरिया-जी, बुढ़िया धनकट्टाकी सरला देवी, और चोपड़ाकी खादिजुन्निसा तो आँखोंमें धुंध हो जानेसे कई बरस घरसे बाहर नहीं हो सकती है। सरस्वती तो इस बार आई है।... तब मुझे हुक्म हुआ कि कोढ़ा थानाके सब कांग्रेस-कर्मियोंके घर-घर जाओ। जोर डालकर उनके घरकी औरतोंके दस्तखत, 'स्वयं सेविका प्रतिज्ञा पत्र' पर कराकर लाना होगा। पुरुषोंके जानेसे नहीं होगा, तुम्हें ही जाना पड़ेगा।...जो जायँगी वे मुफ्तमें बिना पैसे कांग्रेस देख लेंगी; उम्रका कोई बन्धन नहीं है; ज्यादा उम्रकी औरत होनेसे उन्हें खूब हल्का काम दिया जायगा, जैसे दूसरे स्वयंसेविकाके बच्चे सम्हालना, भण्डारकी कुँजी रखना, या इसी किस्मका और कुछ; इसी तरहके बहुतसे छोटे-मोटे उपदेश उन्होंने जानेके समय मुझे दे दिये। वालेन्टियर मिसरी मेरी बैलगाड़ी हाँककर बभनगामा ले आया। दोपहरमें गाँवके सब औरत-बच्चे काजीके घरके आंगनमें जमा हुए। मैं उनके साथ बातें करने लगी, कांग्रेस स्वयं-सेविका होनेकी बात। कितनी ही किस्मकी बातें सब मुझसे पूछती हैं—जूते नहीं पहननेसे चलेगा कि नहीं, घोड़ापर चढ़ना ही पड़ेगा क्या, सिन्दूर लगाना और एतवार करना मना है कि नहीं, और भी कितने ही प्रश्न। उसके बाद कई औरतें राजी हुईं—हाँ, अगर उनके घरके मर्दोंको कोई उज्र न हो तब। फिर दौड़ी घरके मालिक लोगोंके पास। सबके साथ थोड़ी बहुत जान पहचान पहलेसे ही थी—बहुत बार वे लोग आश्रममें जाकर ठहरें

हैं। वे लोग भी पहले आगापीछा करते रहे, पीछे कई राजी हो गये। मैं तब प्रतिज्ञा-पत्र लेकर फिर घरके अन्दर गई, उनपर दस्तखत करानेके लिये। कलम दावात मंगाया गया, कई एक एकके दस्तखत भी हुए। झाजीकी लड़की शकुन्तलाने फार्म पर दस्तखत करनेके पहले कागजको जोर-जोरसे पढ़ा—"मैं देशके वास्ते हर तरहकी कुर्बानीके लिये तैयार हूँ"। ऐं, कुर्बानी क्या? यह तो ठीक समझमें नहीं आया। हां, बंगाली माई देशके लिये सब किस्मकी कुर्बानी करूंगी, यह लिखा लेना तुम्हारा क्या ठीक हुआ। पहले सब नरम थीं, बेलगरामियाकी नानी पहले जरा बिगड़कर मुझसे बोली—"हम लोग यह सब महात्माजी फहात्माजी नहीं समझती हैं; यह तुम्हारा कैसा व्यवहार है; तुम लोग मुसलमान होना चाहती हो तो हो जाओ, हमलोगोंकी जात लेनेके लिये खींचातानी क्यों? इसी कर्मके लिये तुम आश्रमसे इतनी दूर तक चली आई हो! छिः! लाज भी नहीं आती। गौ साक्षात् भगवती हैं...। हमलोगोंकी जात लेनेके सबूतमें दस्तखत लेने आई हो"! सब मिलकर मेरे पीछे पड़ गईं। मुझे भी इस बातका कुछ जवाब नहीं सूझा। सचमुच कुर्बानीकी बात इसमें क्यों लिखी रहेगी? उन्होंने आनेके पहले सब बातें समझाईं लेकिन इस बातको तो नहीं समझाया। मालूम होता है हिन्दू लोगोंके प्रतिज्ञा-पत्रके बदले मुसलमान लोगोंका प्रतिज्ञा-पत्र चला आया। मुझे तब डरसे देहसे पसीना छूटने लगा। उन लोगोंको समझाया कि मैं तो हिन्दी जानती नहीं हूँ, शायद कागज बदल गया होगा। उन लोगोंका गुस्सा क्या तब भी कमा? उसके बाद बाहर झाजीके पास जाकर बोली, फिर आना पड़ेगा, दूसरा प्रतिज्ञा-पत्र साथ लेकर। झाजी प्रतिज्ञा-पत्र पढ़कर हँसते-हँसते लोट-पोट हो गए? कहा, यह तो ठीक ही लिखा हुआ

है। हिन्दीमें कुर्बानीके माने त्याग है। भला देखो तो क्या काण्ड हो गया! कहां कुर्बानी कहां त्याग। मैं क्या खाक इतना जानती हूं! मैं तो नहीं भी जान सकती हूँ। लेकिन आँगनमें जमा लड़के-लड़कियोंमें से कोई भी इसका अर्थ नहीं जानती? तब ऐसी बात लिखनेकी क्या जरूरत थी? जिनके लिये लिखा गया वे ही नहीं समझते तो भी लिखना ही चाहिये। जैसे तैसे तो उस दिनका काम खत्म हुआ। मैं आश्रममें वापस आकर बोली—"यह रहा तुम लोगोंका कागज। इस कामके चरणोंमें कोटि-कोटि प्रणाम। अब फ़िर जो मैं कांग्रेसके किसी कामसे बाहर गई।" निलू इस को लेकर मेरी कितनी खिल्ली उड़ाता है।....

सखावतीजीका लड़का रो रहा है, चिल्ला रहा है—"बड़ाजी, बड़ाजी"। मुझे बड़ाजी कहता है! मेरा बड़ा दुलारा है। दिन-रात मेरे पास घुर घुर करता रहेगा—गोद चढ़के बैठनेके मतलबसे। जब खूब बदमाशी करता है और बात नहीं सुनता तब उसकी माँ उसे मेरे पास दे जाती है। मेरी गोदमें बैठकर शान्त हो जाता है। बच्चेको ले आना चाहिये। मनचनिया तो कबकी सो गई। अभी तो उठेगी नहीं। अभी 'डिउटी' है गलकट्टीकी। वह भी तो देखती हूं पंखा हाथमें लेकर बगलमें ऊंघ रही है। सारा दिन दालकी खुद्दी चुननेके कमाण्डमें काम करती रही। अभी क्या सारी रात जागती रह सकेगी? जेलमें आई है। इसलिये नींद-मींद तो घरमें छोड़ आई है। क्या कसूर किया था उसने। एक हतभागे स्वामीके अत्याचारसे जलभुनकर वह आत्म-हत्या करनेके लिये गई थी। झट से अपना गला अपनेसे कैसे काट लिया था। सोचकर ही देह सिहर उठती है। अभीतक गलेकी तरफ देखा नहीं जाता है। घाव तो नहीं है, लेकिन

गलेकी नली कटकर बड़ीसी फांक हो गयी है। नलीका भीतरी हिस्सा दिखाई पड़ता है। इस कटे हुए हिस्सेपर चौबिस घण्टे एक गमछा बांधे रखती है। कहती है कि, नहीं तो बात करनेके समय फस् फस् करके उसके भीतरसे हवा निकल जाती है, और खानेके समय उसमेंसे खानेकी चीजें निकल जाती हैं। गमछा लगाए रहनेसे पानी पीनेके समय गमछा थोडा थोड़ा भींग जाता है। देखो अभागिनका भाग। मरनेसे अपने भी बचती, स्वामीकी भी देह जुड़ाती। सो मरी भी नहीं, कुछ भी नहीं। हो गया आत्महत्या करनेकी चेष्टा करनेके लिये एक बरसका जेल। क्या इन लोगोंका कानून है! अपनी जानपर भी अधिकार नहीं। जो मरना नहीं चाहता उसे फांसी दी जाती है और जो मरना चाहता है, उसे लाके जेलमें रखा जाता है!

बच्चा बेतरह हल्ला कर रहा है। वह गला फाड़-फाड़के मरा—उसकी मां की भी क्या अक्ल है, कहो तो। हायरे! बच्चा, आज सारा दिन मेरे पासका नहीं आ सका। सखावतीजी लड़केको कहती है। लाड़ली—ई बङ्गाजी के पास जायगा क्या। बङ्गाजी आज बीमार है। कल सबेरे जाना। बीमार पड़नेसे उसके पास कैसे जाओगे? लड़का कुछ देर तक चुप रहकर शायद बात समझनेकी कोशिश करता है। उसके बाद फिर उसका रोना शुरू हुआ। "बङ्गाजी···"। सखावतीजी लड़केपर बिगड़ गई। ए देखो, वहां गलकट्टी है। पकड़ लेगी।"—बच्चा चुप हो गया। शायद डरसे। फिर शुरू हुआ उसका चिल्लाना "बंगाजी ई-ई···।" "जिद्दी! क्या जिद है बाबा लड़केकी। इतने-से लड़केकी इतनी जिद।" हायरे! चट्-चट् करके लड़केको मारती है! मांको क्या जरा भी दया-माया नहीं है।

गलकट्टी, ए गलकट्टी, जल्द लाड़लीको यहाँ ले आ तो। गलकट्टी भर्राई आवाजमें जवाब देती है 'वह लड़का मेरी गोदमें आवेगा क्या?' गलकट्टी कैसी कोढ़नी है? नींद आई है, उठनेकी इच्छा नहीं हो रही है—तो एक बहाना निकाला। मुझे गलकट्टीको बुलाते सुनकर बहुरियाजी, कमला सब आकर पूछने लगी—"क्या कहती हैं, पानी पियेंगी क्या?" हायरे! क्यों गलकट्टीको पुकार कर मरने गई! ये सबकी सब यहीं चुपचाप बैठी हैं सो क्या मैं जानती था। सच तो है गलकट्टीको देखकर तो लड़का डरसे ठिठक जाता है। लूमी जमादारिनीसे कपड़े साफ करनेके साबुनके बदले हमारे वार्डकी सब बीच-बीचमें बीड़ी लेती हैं। और गलकट्टीको वही बीड़ी देकर सब मिलकर तमाशा देखती हैं—कटे हुए गलेसे किस तरहमें धुआँ निकलता है। गलकट्टीको चार बीड़ियाँ देनेसे वह गलेका गमछा एकदम खोलकर धुआँ निकालकर दिखावेगी। लाड़ली लेकिन यह सब देखकर डरसे नीला पड़ जाता है, और मुझे जकड़ कर धर लेता है। अरे! वह तो बच्चा है, बहुत-से बड़ी उम्रके लोग भी उस दृश्यको देखकर चक्कर खाकर गिर जायँ।...

मेरी ओरसे कोई आदर न पाकर बहुरियाजी, ऊँघती हुई गलकट्टीको ठेल जगाकर पूछती है "बंगाली माईजी क्या कहती थी री?" "माईजी लाड़लीको लानेको कहती थी।"

"सो कहना चाहिए न। मैं उसे लिए आती हूँ। गलकट्टी तब तक तू इस दरवाजे पर जाकर बैठ। तुम्हारे रहनेसे तो वह लड़का यहाँ भी चिल्लावेगा। लाड़ली जब सो जायगा तो यहाँ आकर फिर बैठ जाना।" गलकट्टीकी जान बची, उसने जम्हाई ली। बहुरियाजीने लड़केको लाकर

मुझे दिया। लाड़ली एकदमसे मेरे गलेसे लग गया। सोयगा क्या, सो रह, मैं पंखा झल दूँ। दोपहर रातमें अच्छे लड़के भी कहीं जगे रहते हैं? खूब बात मानता है, मेरा लाडली! कहाँ गया रोना कहाँ गई जिद; लाड़ली मेरे कलेजेसे सटकर सो गया। मैंने उसके हाथमें सोए हुएके ही नर्मदा बेनका दिया हुआ एक फूल खोंस दिया। और कहा कल सवेरे, सब फूल दूँगी। वह हाथका फूल फेंक देता है। उसे इस वक्त फूलकी जरूरत नहीं है, किसी चीजकी जरूरत नहीं है। वह जो चाहता था सो पा गया। जरा पंखा न झलूँ तो मच्छड़ खा जायँगे। पंखा खोजते देखकर बहुरियाजी जरा नजदीक आकर बैठ गई—पंखा झलनेके लि । अब तक साहस नहीं होता था—कि कहीं मैं बिगड़ न जाऊँ। अ..। यह लड़का मुझे मानता है, इसलिए क्या सखावतीजी मुझपर गुस्सा करती है? ऐसा तो नहीं लगता है। तब मैं क्यों जितेनक माँ दीदी पर गुस्सा करती हूँ? मुझसे तो सखावतीजीका मन अच्छा है, यह मानना ही होगा। नर्मदा बेन क्या यों ही मुझे सुना-सुनाकर अहिंसाकी बुकनी झाड़ती है। बहुरियाजी भी लड़कीको बड़ा प्यार करती है। उसकी छोटी लड़की लज्जाके साथ लाड़लीका बड़ा मेलजोल था। लज्जाकी उम्र थी बरस पाँचेक। लेकिन वह माँको छोड़कर नहीं रह सकती थी। गिरफ्तारीके बाद बहुरियाजीने चाहा कि लज्जा अपनी चाचीके पास रहे। वह लड़की किसी तरह भी माँका आँचल नहीं छोड़ेगी। बड़ा मुश्किल। इधर तीन बरससे ऊपरके लड़के-लड़कियोंको लेकर जेल आनेका नियम है नहीं। दरोगाने भी कहा कि उसे रख आइए। तब बहुरियाजीने मजबूर होकर दरोगाके साथ झगड़ा किया। बोली किसने कहा कि इसकी उम्र तीन बरससे ज्यादा है। नापके देखो! डेढ़ हाथ ऊँची

लड़कीकी उम्र भी कहीं पाँच बरस होती है। उसे साथ नहीं ले जाने दोगे तो देखती हूँ कैसे तुम मुझे पकड़ कर ले जाते हो। अभी स्वराजी वालेंटियरोंसे तुम्हें गिरफ्तार करा दूँ। दरोगा साहबने सोचा, इन सब फिसादोंकी क्या जरूरत। लज्जाको साथमें लाकर जेलमें भर दिया।····दिन-रात लाड़ली और लज्जा एक साथ खेलती थी। खेल और क्या—लज्जा लाड़लीको गोद-काँख लेकर घूमती थी। यहाँ तो और ज्यादा संगी-साथी नहीं हैं। मिलना-जुलना चाहें तो दूसरे वार्डके छोटे लोगोंके बदमाश लड़के-बच्चोंके साथ मिलना पड़ेगा। उन्हें अनेक प्रकारके बुरे रोग हैं। चौबीस घण्टे आपसमें गाली-गलौज करते हैं। उनके साथ क्या अपने बाल-बच्चोंको मिलने-जुलने दे सकती हूँ? इसलिए हम लोग सभी उसे आठों पहर आँखोंके आगे रखा करती थीं। हायरे! बची हुई, कुछ दिनोंके खून दस्त होनेसे मर गई। माँका जी—बहुरियाजीको उसके बाद कितना दुःख हुआ, कितना रोई-पीटी! सिर्फ अपनी छाती पीटती थी, और कहती थी—अगर मैं उसे साथमें नहीं लाती तो शायद मेरी लज्जाकी यह हालत नहीं होती। लाड़ली भी उसके मरनेके बादसे दिनोंदिन सूखता जा रहा है। जेलसे बच्चेके लिए आध सेर दूध मिलता है। सो भी जेलका दूध। मक्खन निकाले हुए भैंसके दूधमें पानी मिलाकर कन्ट्रैक्टर ले आता है। उसके बाद गेट पर, गुदाममें, वार्डमें जहाँ-जहाँ होकर दूध आता है, सब जगहके वार्डर, मेट, पहरा, और कैदी लोग, सभी उसमेंसे एक-एक गिलास दूध लेकर कच्चा ही ढक्-ढक् करके पी जाते हैं। यह एकदम बंधा हुआ नियम है; इसमें कोई लुकाचोरी नहीं है। सिर्फ एक शर्त है; जो एक गिलास दूध निकालेगा उसे मिहनत करके दूधके पीपेमें ठीक एक गिलास पानी मिला देना होगा। वही दूध जब यहाँ

पहुँचता है, तो वह ऐसी चीज हो जाता है कि उसे पीकर बच्चे जी नहीं सकते हैं। छोटे बच्चोंको जेलसे न तो कपड़े मिलते हैं न खानेकी चीज; शायद सोचते हैं कि जो दूधके सिवा और चीजें खाते हैं, उन्हें माँके साथ आनेकी जरूरत ही क्या ? खूब साफ जवाब है।

हाय, लड़केका पेट एकदम सटा हुआ है। क्यों, माँने रातमें खिलाया नहीं क्या ? मेरे लिए तो खाना सिरहाने लाकर रख दिया है। कुछ खानेको दूँ ? नहीं छोड़ो, उसे खाकर कहीं बीमार न पड़ जाय, तब उसकी माँ धक्का सम्हालते-सम्हालते परेशान हो जायगी। कितनी मुलायम देह है। बिल्लू जब छोटा था, ऐसे ही गोदमें सटके सो जाता था। बाबाकी गोदमें वह बैठा है—वह फोटो जब खींचा गया था, तो वह इतना ही बड़ा होगा। वह किसी तरह भी चुपचाप नहीं बैठेगा। दूसरे मैंने एक टुकड़ा मिसरी दिखलाया। यह सोचकर वह मन ही मन आनन्दमें मग्न था, उसी समय निताईने उसका फोटो खींच लिया। वह क्या आजकी बात है ? बीमारीके बाद वह कितना दुबला हो गया था ? चौबीस घण्टे खानेके लिए परेशान रहता,—मुंह खोलके जोरसे रोनेकी आदत तो उसे कभी थी नहीं। मैं शायद उसे तख्तपोश पर बैठाकर भंडार या रसोई-घरमें गई थी, और वहाँ कामसे रुक गई। थोड़ी देर बाद आकर देखती हूँ, लड़केकी आँखोंसे आँसू निकलकर छातीपर बह रहे हैं। नीचेका होठ जैसे कुछ बाहर निकल आया है, और काँप-काँप जाता है। मुझे देखकर लड़केको कितना मान हो गया। "मुझे आनेमें देर हो गई, इसीलिये रो रहा है। मर गई, मर गई—कितना अच्छा लड़का है मेरा बिल्लू।" कहकर उसका माथा अपनी छाती की तरफ खींच लिया। बस मेरा लड़का शान्त हो गया—बीच-बीचमें

सिर्फ जरा फफकनेकी आवाज।....अभी भी जैसे वही फफकनेकी गरम भींगी निश्वास ठहर-ठहर कर गलेके पास लग रही है।

...लाड़ली तू बचपनका वही मेरा बिल्लू है क्या? तुम्हारी मुलायम देहको एक बार उसी तरह थपथपा दूँ क्या?...नहीं ये लोग देख रही हैं। क्या सोचेंगी। बिल्लूको अगर अभी पाती तो एक बार उसे खींचकर कलेजेसे लगा लेती। जितनी ही देरके लिये क्यों न हो जरा कलेजा तो ठण्डा होता। दोनों एक साथ रोकर मनमें शान्ति तो पाते। अन्तिम समयमें पासमें रहूँ इसका भी कोई ऊपाव भगवानने नहीं रखा। चारों ओर लोहेके सीखंचे और ताले। सुनती हूँ, लड़ाईमें इतना लोहा लगता है। बिल्लूने किस्सा कहा था कि लड़ाईके समय कहीं गिर्जाका घण्टा गलाकर तोप बनायी गयी थी। उनकी क्या जेलके ढेरके ढेर लोहेपर नजर नहीं पड़ी। इतने जले दिलकी आह तो यमका सिंहासन भी गला दे सकती है।

"बहुरिया जी, अच्छा सच सच कहो तो—भगवानने मेरे साथ अन्याय नहीं किया क्या?"

—बहुरियाजी मेरे मुँहकी ओर देखने लगी! इस प्रश्नके लिये वह तैयार नहीं थी। उसने मेरी बातका जवाब नहीं दिया। एकबार नैना-देवीके मुंहकी ओर देखकर जैसे कुछ इशारा किया। उसके बाद मेरे सिरके बालोंमें धीरे-धीरे अगुली चलाने लगी, और जोर-जोरसे पंखा झलने लगी। तुमसे अचानक मैंने प्रश्न पूछ तो दिया, लेकिन जवाब मांगती भी नहीं थी, आशा भी नहीं करती थी।

लाड़ली कब सो गया। छोटा सा बच्चा है, लेकिन नाक बजा रहा है—बड़ी उम्रके आदमीकी तरह। आहारे! करवट लेकर सो गया है, और चांदी

की चकतियां जैसे पेटके चमड़ेमें बैठ गई हैं। कमरके सूतेमें बहुतसी चाँदी की चकतियां लटका लेगा। सखावतीजी सोचती है कि इससे बडी शोभा बढ़ती है। कई दिन कहा कि यह जेलखाना है, यहां हजार किस्मके लोग हैं, चाँदीके लोभसे कौन किस दिन बच्चेको क्या कर धर दे, तब रोनेका अन्त नहीं मिलेगा। सो क्या सखावतीजी सुनेगी। इस कमरके सूतेमें उसका क्या जन्तर-मन्तर है कौन जाने।

बिलू जब छोटा था, उसके सिरके बालोंकी एक छोटी चोटी गूँथ देती थी। दुबला था न—खानेसे पेट गणेशजीकी तरह ऊँचा हो जाता था। उसे बहलानेके लिए खानेके बाद कहती "बस अब हो गया—अब उठना होगा—बापरे। "वैसे ही अपने पेटको दिखाकर कहता, "वातावी वातावी कर दो!" कभी एक दिन उसके पेटपर हाथ फेरकर कहा था "वातावी भस्मराशि! वातावी भस्मराशि! सब हजम हो जायगा···बिलू बाबूको और बीमारी नहीं होगी!" वही बात याद रक्खे हुए है। भात खानेके बाद उसे रोज पेट पर हाथ फेरकर 'वातावी' कर देना होगा। उसके बाद पीढ़ासे उठनेके समय घुटनेपर भार देकर बोलेगा "बापरे!" एकदम बूढ़ेकी तरह—जैसे उसे उठने में सचमुच तकलीफ होती है।

बहुत दिनोंकी छोटी घटनाएँ एकके बाद एक मनमें आती हैं। बिलू, इतनी तकलीफसे तुझे आदमी बनाया—यों ही धोखा देके चले जाओगे! मेरे दुःखकी बात सोचके तुम अन्त समयमें दुःख मत अनुभव करना! ऐसे ही तो तेरे कष्टका बोझा मैं कुछ हल्का नहीं कर सकी। अभी तुम्हारे मनपर क्या बीतता है, सो क्या मैं अनुभव नहीं करती हूं। उसपर मेरे दुःखकी बात अनुभव करके तुम्हारे हृदयका बोझा अगर बढ़े तो मेरे दुःखका अन्त नहीं होगा। तू अभी समझ कि तुम्हारी मां तुझे जरा भी प्यार नहीं करती थी।

नैनादेवी बहुरियाजीके साथ गप्प करती है—आवाज जरा तेज थी—"तो बाबू भगवानको इसमें घसीटना क्या ? सजा दी सरकारने और वे दोष देती हैं भगवानको। एक कहानी है न कि एक ब्राह्मणका एक घोड़ा था। ब्राह्मणका पड़ोसी था एक धोबी। जैसे ही ब्राह्मण महाशय पूजा करने बैठते वैसे ही धोबीका गधा जोरोंसे रेंगना शुरू करता था। ब्राह्मण महाशयने बिगड़कर भगवानके पास प्रार्थना की—"हे भगवन्, देखो यह गधा किसी तरह भी तुम्हारी पूजा नहीं करने देगा। तुम्हें पुकारते ही वह बाधा देता है। उसे तुम मार दो।" कई दिन बाद ब्राह्मणका घोड़ा बीमार होकर मर गया। तब ब्राह्मणने भगवानसे कहा, भगवान इतने दिनोंसे भगवानगिरी करते हो लेकिन अभी तक कौन घोड़ा है कौन गधा सो पहचान नहीं सकते हो।"—यह भी वही हुआ। भगवानका इससे क्या मतलब ?

बिना नाक दाबे भी श्वास बन्द की जा सकती है, लेकिन अंगुली कानमें दिये बिना सुनना क्यों नहीं बन्द किया जा सकता है ; अभी कानमें अंगुली देना भी ठीक नहीं मालूम देता है।

सब देख रही हैं।..उस विषमुखीको मैं नहीं पहचानती हूं। वह बहुरियाजीके साथ और भी क्या-क्या बातें करती है। कुछ देर पहले उससे जरा रुखाईसे बोली थी न, उसीका जहर अभी उगल रही है। तभी मैं जानती थी कि उस औरतके साथ क्या बढ़के बात की जा सकती है। एक रात भी सब्र नहीं कर सकी। आज रातके लिये भी मुझे माफ नहीं कर सकी ; तुम भी तो लड़केकी मां हो। कहांका गप्प न सिर न पैर। कहांका सुना गप्प; समझती है कि खूब पण्डिताई छांट दी। यह क्या, नैना देवी, इतने ही में चुप हो गई। शायद बहुरियाजीका रुख नहीं पाया।....

बिलू निलूके सिर्फ बचपनकी बातें याद क्यों आती है ? शायद मेरे लिये वह छोटा ही रह गया है ।....

....दोनों बिछावनपर सोये हैं । मैं काम काज खत्म करके घरमें घुस कर बोली "क्या बचकन और छटकन" घूमते हो ? बिलू बचकन और निलू छटकन । बस दोनों हः हः करके हँस उठेंगे । और निलू कहेगा—कितनी दफे मांसे कहा कि हिन्दीमें 'घूमते हो माने 'सोते हो नहीं होता, उसका माने है "टहलते हो" । तो भी मांको याद नहीं रहता । बिलू कहेगा, कैसा बेवकूफ है । वह तो मां जान-बूझकर हमलोगोंको हँसानेके लिये यह कहती हैं ।....इतने जरासे लड़के ; दोनों क्या गम्भीरतासे पण्डितकी तरह आलोचना करते हैं । उसी समय अगर यह गांधीजीके रास्तेपर नहीं आते, नहीं आनेका भार क्या उनपर है ? वह तो मालिककी इच्छासे किया गया । अभी अगर एक बार बिलूके बाबूको पाती, तो अच्छी तरह सुना देती कि देखो, बाप होकर लड़कोंको किस रास्तेपर ले आये हो ? मेरा सारा जीवन एक ही किस्म से बीता ! एक दिन भी शान्ति नहीं मिली । लड़कोंको एक दिन भी हँसी खुशीसे रहने न दे सकी । सारा जीवन जो दिन रात खटती रही, सो क्या इन्हींके लिये ? लड़के जब छोटे थे तब इच्छा थी कि इन्हें बड़ा कर दूँ ! बड़े होनेपर वे अपनी राह ढूँढ़ लेंगे,—मर्द बच्चोंके लिये सोचना क्या ? उसके बाद वे लोग अपना घर बसावेंगे । यह बात सोचनेमें भी शान्ति मिलती है । किन्तु हुआ क्या ? बड़े लड़केको तो पढ़ाया ही नहीं । और जिसने पढ़ा उसका भी मन इधर ही लग गया । अबकी जेलसे निकलने दो—और मैं निलूको इस रास्तेमें न रहने दूँगी ! छोटे भाईके यहां झाड़ू-झाँटा खाना पड़े सो मंजूर । लेकिन निलूको वहीं भेज दूँगी । कुछ रोजगारका इन्तजाम

कर देगा। मुझे ब्याह लाए हो,—मैं तुम्हारे आश्रमके होटलको, दाई-लौंडी से बदत्तर होकर हमेशा सम्हाल दूँगी—इसीलिये क्या अपने लड़केको भी मैं इसमें रक्खूंगी। बहुत कुछ मुँह बन्द करके सह लिया, लेकिन अब नहीं। तुम्हारी साध, तुम्हारा शौक गांधीजीकी सेवा करना है; मेरे बारेमें, मेरे लड़केके बारेमें एक बार भी सोचा है? तुम्हारा एक-एक दिन एक-एक खब्त रहा। कितने दिनों तक चना फाँककर रहे। कितनों दिनों तक रोज बथुआ का साग चाहिये। कितने दिनों तक सिर्फ बिलायती बैंगनका शर्बत। कच्चे परवल खाकर उस बार कितने बीमार पड़े! एकबार हुक्म हुआ कि खानेके समय विलायती बैंगन समूचा दोगी; दाँतसे काट-काट कर ही खाना गान्धीजी ने अच्छा कहा है शायद। काटनेसे बेकार वक्त बर्बाद होता है। गाँधीजी के आश्रममें शायद यही नियम जारी हुआ है। हमलोगोंके आश्रममें भी वही नियम चला। भैयारे! कुछ ठिकाना नहीं, एक दिन हुक्म हुआ कि यह नियम और नहीं चलेगा? सेवाग्राम आश्रमका विलायती बैंगन खानेका नियम बदल गया है। महादेव देसाईने कागजमें लिखा है कि गांधीजीके मतके अनुसार समूचा बिलायती बैंगन दांतसे काटकर खाना ठीक नहीं; जैसे ही काटकर खाया जाता है, वैसे ही कपड़ोंमें विलायती बैंगनका रस छिटककर पड़ जाता है।—बस क्या कहना! साथ-साथ हम लोगोंको भी वही करना पड़ेगा। इतने दिनों तक दांत लगानेके समय आंखें बन्द थीं क्या? दिनमें भातके अलावा और पांच चीजें खाई जायँगी, गिनगूथके पांच ही। छः खाने से महाभारत अशुद्ध हो जायगा। सारा जीवन क्या इतना गिन-गिनके हिसाब करके चला जा सकता है? गायका घी नहीं होनेसे खायेंगे नहीं;— इस देशमें क्या गायका घी मिलता है? पग-पग पर परेशानी, और सो क्या

गांधीजीके इस रास्तेपर आकर ही ? उसके पहले ही क्या कम था ! कुञ्जी अपने पास रहेगी—स्कूल जानेके समय एक रुपया मुझे बाजार खर्चके लिये दिया गया। मेरे पास चाभी रखनेसे क्या मैं सब रुपए-पैसे अपने पेटमें रख लेती ? या तुम्हारा भण्डार उजाड़के अपने बापके घर भेज देती ? क्या सोचते थे कौन जाने ! वह बात किसी दिन पूछी भी नहीं; उसे जाननेकी इच्छा भी नहीं थी।.... छोटे आदमियोंके सामने एक दिन कितना अपमानित होना पड़ा ?—तेलिन सबेरे स्कूलके क्वार्टरमें तेल लेकर आई। दूकानका तेल अच्छा नहीं होता है। उसी तेलिनको आंगनमें बुलाके उससे एक रुपएका तेल लिया, और कह दिया कि दरबाजेपर बाबूसे रुपया ले लेना। मैया रे ! थोड़ी ही देर बाद तेलिन आकर मुझपर क्या लाल-पीली होने लगी—देदो, तेल वापस देदो। बेकार मेरा वक्त बर्बाद किया। बाबूने कहा कि तेल किसने लेनेको कहा ?—अपमानसे मेरा सिर कट गया। वे सब बातें एक-एक करके गांठ बांधे हूं।....

....तुमने देशकी स्वाधीनताके लिये सब छोड़ दिया, ठीक है—लेकिन मुझे तो जरा भी स्वाधीनता नहीं दी। कितने ही दिन सोचा कि लड़कोंके बड़े होनेपर यह बात एक दिन उन्हें कहूंगी। लेकिन कहूंगी-कहूंगी करते अब तक कह न सकी। लड़कोंसे क्या यह बात बोलनेकी है ? तुम्हारी बातपर किसी दिन चूँ तक नहीं की। सिर्फ लड़कोंका मुंह देखकर अबतक जीती रही हूं। मुझे जो हुआ सो हुआ। उसके लिए कुछ सोच नहीं। लेकिन तुम्हारे चलते मेरे लड़कोंका यह हाल हो गया। मेरा संसार जलकर राख हो गया। तुम्हारे चलते मेरा अपना सहोदर भाई, जिस घरमें रहकर कितने बाहरके लड़के पढ़ते हैं, सो अपने भाञ्जोंकी खोज-खबर न ले सका। वीरेनकी

मां तो वीरेनकी मां ही है, वह आकर एक दिन कितनी बातें सुना गई; कितना मुंह हाथ चमका गई। बङ्गाली होनेके कारण ही उसके लड़केकी डिस्ट्रिक्ट बोर्डकी नौकरी कांग्रेस खा गयी। हम लोगोंके मुंहपर ही कह गई—मास्टर नहीं खाक; एम. ए. गद्धा; सिर्फ पण्डिताई बघारनेके लिये कांग्रेसमें है, बङ्गालियोंके मुंहमें चूना लगा दिया। अभी मेरा ऐसा हाल है कि जिधर देखती हूं अन्धकार।....

गांधीजी, तुमने मेरा यह क्या हाल कर दिया। तुमने हमलोगोंको एकदम राहका भिखारी बनाके छोड़ दिया; सचमुच भिखारी। तुम महीनेके अन्तमें हाथ उठाके कुछ दोगे तब हम लोग चार जन खा सकेंगे। अपने ठाकुर देवताको छोड़कर तुम्हारी पूजा की है; तुम्हारे लिये अपना पराया नाता-रिश्ता सब छोड़ दिया; हँसना भूल गई। उसका बदला तुमने खूब दिया! तुम्हारे दिखाये रास्तेपर स्वामी-स्त्रीके मनका मेल नहीं होता है, बाप बेटेमें प्यारका सम्बन्ध नहीं रहता, भाई-भाईका दुश्मन हो जाता है, घर फूट कर, ससार जलकर राख हो जाता है। अपने इष्ट मित्रोंको छोड़कर सुबह शाम तुम्हारा नाम जपती हूं, कितने बरस पहले जिस जगहपर हम लोगोंके आश्रममें तुम बैठे थे, उस जगगपर रोज शामको दीप जलाया है, एक दिन भी चरखा कातना नहीं छोड़ा; सो क्या इसीलिये? मेहतरको हरिजन कहा, उसके नगे लड़केको निलू बिलूके साथ रसोई घरके बरामदेपर बैठाके खिलाया है;—पड़ोसके लोग हँसते रहे। लेकिन उसका फल क्या निकला? दुर्गाकी मां वगैरहने ठीक ही कहा था। उन्होंने कहा था कि स्वदेशी काम करना चाहती हो तो करो, लेकिन यह सब मत करो—ठाकुर देवताको इसमें छांटना ठीक नहीं। उस समय तुम्हारे मुंहकी ओर देखकर उनकी बातपर

कान नहीं दिया। आज अच्छी तरह समझ गई ? आज दुर्गाकी मां, खेंदी की माँ या जितेनकी माँ—दीदीके रहनेसे उनका गला पकड़ कर रोकर भी जरा मन हल्का कर पाती। महात्माजी न खाक! यह क्या सन्यासीका चेहरा है। ओह, क्या करती रही इतने दिन! सारी दुनियाके लोगोंने मिलकर मेरा क्या हाल कर दिया। शरीरकी ज्वालासे अपनी देहका मांस नोचकर खानेकी इच्छा होती है, सिर फोड़ कर मरनेकी इच्छा होती है। और नहीं दूँगी। चरखेको अभी उठाके फेंको—पटककर टुकड़े-टुकड़े कर दूंगी उसे। टेबिलपर रखा था न।....

चरखा लेनेके लिये जोर लगाके उठ बैठी। उठ क्या सकती हूं ? सिर की बांई ओर जैसे एक मन लोहा भर दिया गया है। माथेको जैसे कोई तकियेपर गिरा देता है। बहुरियाजी, कमला देवी, ये लोग सभी हाँ-हाँ करके उठीं।

"क्यों उठी बङ्गाली माई ? क्या खोजती है ? चारों ओर इस तरह ताकती क्यों हैं ? सो रहिये, सो रहिये। सिरमें जरा पानी दे दूं ?"—

सभी मिलकर जोर लगाकर मुझे बिछावन पर लेटा देती हैं। क्या खोजती थी सो उन लोगोंसे कहा नहीं जाता है। वे लोग तब समझेंगी कि मेरा माथा खराब हो गया है। अभी ही क्या सोचती हैं क्या जाने ? सिर पर ओडिकोलन देती हैं। सारे घरकी औरतें एक-एक कर मेरे बिछावनके पास आकर जुट गईं। गलकट्टी हाँफती हुई लूसी जमादारनीको बुलाकर क्या सब कह रही है। शायद मेरे ही बारेमें। वह कहीं हल्ला-गुल्ला करके अस्पतालमें खबर देकर अनर्थ न करे। सखावतीजीने धीरे-धीरे मेरी बगलसे सोए हुए लाड़लीको उठा लिया। उसने क्या सोचा कि मैं

उसके लड़केको कुछ कर-धर न दूं ? नहीं री नहीं, जो अच्छा लगे करो। तुम हो उसकी मां। उसकी भलाई जितना तुम समझोगी, उतना क्या मैं समझूँगी ? सभी चुपचाप मेरे चारों ओर घेर कर बैठी हैं—अभी सुई गिरनेकी आवाज भी सुनी जा सकती है। सिर्फ पंखेसे एक लगातार आवाज हो रही है।...एक गोबरका कीड़ा उड़ता है। आवाज होती है भों-ओं-ओं ...। ठक्से जमीन पर गिर पड़ा। फिर उड़ता है। फिर कहीं ठोकर खाकर गिर पड़ा। अभी तक उड़ा नहीं—अभी तक नहीं—अभी तक नहीं। अबकी जैसे ही उड़ेगा वैसे ही एक दो तीन करके दस गिनना पड़ेगा—दस गिननेके पहले ही अगर गिर जाय, तो मेरा बिलू किसी तरह भी नहीं बचेगा। और अगर कीड़ाके गिरनेसे पहले ही दस गिन लिया, तो भगवान जैसे होगा वैसे बिलूको बचावेंगे ही, बचावेंगे ही। खूब जल्दी-जल्दी गिनना होगा ; जितनी जल्दी हो सके। यह उड़ा—एक दो तीन चार पाँच छः सात—ए जाः ! कीड़ा गिर पड़ा। यह क्या किया भगवान ! जो भी एक आशा थी, उसमें भी तुमने बाधा दी ? दुत् ! इन सब मनगढ़न्त खयालोंका कुछ सिर-पैर है ? अपने बनाना अपने ही तोड़ना। कीड़ाके बारेमें मैंने जो सोचा था सो कभी ठीक नहीं हो सकता। सब भगवानके हाथ। उस भगवानकी मैंने इतने दिन कितनी अवहेलना की ! मां पूर्णेश्वरी, मेरा सब कसूर माफ करो। तुम्हारी दयासे ही तो मैंने बिलूको गोदमें पाया। तुम्हारे नाम पर ही तो बिलूका नाम रक्खा था 'पूर्ण'। घर भरके लोगोंने तुम्हारा महा प्रसाद खाना छोड़ दिया है, इसीलिए क्या तुम मुझ पर रुष्ट हो ? बिलूकी बीमारीमें जो मनता की थी, सो पूजा पूर्णेश्वरीको दी हो तो ? याद नहीं आता। भूल गई थी क्या ? देखा ? देखो एक मामूली भूलसे

कितना बड़ा काण्ड हो गया। माँ पूर्णेश्वरी, तुमने यह बात पहले मुझे याद नहीं दिला दी। नहीं, जरूर पूजा दी गई थी। तब ऐसा क्यों हुआ? माँ, तुम तो जाग्रत देवी हो, बिल्लू तो एक तरहसे तुम्हारा ही बेटा है, उसे इस बार बचा दो। और मैं तुम्हारा कोई कसूर नहीं करूँगी। और मैं गाँधीजीको तुमसे बड़ा नहीं समझूँगी।...

बहरमथानमें बिल्लू होनेके समय जो ईंट बाँधी थी, सो खोली गई थी तो! हाँ, वही जो मैं और जितेनकी माँ-दीदी गई थी। उसी दफा मेरे पैरके अंगूठेमें चोट लगी थी, लोटा गिरनेसे। उसी समय भूल की थी। फिर ईंटको खोलनेके बदले किस ईंटको खोल दिया? ठीक-ठीक—इतनी ईंटोंमें पहचान क्या हो सकती है?

वही सरस्वती वगैरहके घरके पास, पीपलके नीचे जमीन पर सिंदूर लगाना, वे हैं 'डिहवार' (डिहवारे)—दही-भात गाँवके ग्राम-देवता। वे 'डिह' का ( गाँवके सिवानेका ) पहरा देते हैं। वहाँ सभी मिट्टीके घोड़ेकी पूजा देते हैं। सरस्वतीकी माँने मुझे कहा था कि, जब माताकी दयासे हैजा या सूखा पड़ता है, तब घोड़ा पर चढ़कर साठ हाथ लम्बा "डिहवार-देवता" गाँवका पहरा देते हैं। गाँवके चौकीदारने दोपहर रातमें कितनी ही बार देखा है। सरस्वतीकी माँके मुंह पर कुछ बोली नहीं, लेकिन मन ही मन हँसती थी, साठ हाथ लम्बे देवता पर विश्वास नहीं हुआ। साठ हाथ लम्बे देवताको एक बिलस्त ऊँचा घोड़ा! सो कहीं हो? डिहवार देवताने उस समय जरूर मेरे मनकी बात समझ ली थी। वही उन्होंने गुस्सा करके मेरा ऐसा भाग्य कर दिया। या शायद उनके गाँवकी लड़की सरस्वतीके साथ बिल्लूका ब्याह नहीं किया, इसीलिए उन्होंने मेरी यह दशा की। डिहवार

देवता, आज मेरे बिल्लूको बचा लो, उसके बाद जिसमें तुम खुश रहोगे, वही करूँगी।······तुम लोग गुस्सा हो जाओगे, तो हम लोगोंकी तरहके साधारण आदमी किस तरह दिन काटेंगे।········

यही! सही!!

मोटरके हार्नकी आवाज हुई—ऐं तो मेरा बिल्लू।········

मालूम होता है हरे रंगकी शीशी नाकके पास रखी गई है।···

---

# जेल गेट

( निलू )

# निलू

जेल गेटके सामने गाड़ी बरामदेके नीचे वार्डर निहालसिंहके साथ आकर खड़ी हुई। गेटके बाहर सशस्त्र प्रहरी। गेटका भीतरी हिस्सा उज्ज्वल प्रकाशसे आलोकित है। भीतरमें, प्रकाशके नीचे सूबेदार साहब डेस्ककी बगलमें एक ऊँचे टेबिल पर बैठे हैं। निहालसिंहके कहनेके मुताबिक बरामदेके सामने जरा ऊँची दीवालके ऊपर बैठ गया।

"बाबू साथमें कम्बल-उम्बल नहीं लाए न?"

बोला—"नहीं।"

वह खुद गेटके भीतरके सूबेदारके पाससे सींखचोंके भीतरसे तीन-चार कम्बल जोगाड़ करके ले आया। उन्हें इस दीवाल पर तह करके रखके, जवाबदेही छुड़ानेके खयालसे, एक बार उनकी धूल झाड़नेकी कोशिश की।

मुझसे बोला बाबू "बैठल जाय।"

उसके बाद गेटके सन्तरी और सूबेदार साहबको धीमी आवाजमें थोड़ेमें समझा दिया कि तड़के जिसकी फाँसी होगी, ये उनके छोटे भाई हैं। यहीं सारी रात बैठे रहेंगे, कहते हैं। इन्हें जिससे दिक न किया जाय। सूबेदारने इस बातको पसन्द नहीं किया। जेलके भीतरका मालिक हेड वार्डर, और गेटके बाहरके मालिक सूबेदार साहब। असलमें उसके पदका नाम गेट-

वार्डर है। लड़ाईसे लौटा है, इसलिये उसका नाम हो गया सूबेदार साहब। जेलके भीतर कौन आया, जेलसे कौन गया,—इनका रुपया-पैसा, चीज-वस्त 'सर्च' करना,—बाजारका सौदा, ठीकेदार वगैरह सबका मालिक है सूबेदार साहब। इस महामान्य सूबेदार साहबके पास एक मामूली वार्डर क्यों इस बेढंगे तौरसे प्रार्थना कर रहा है? जरूर इसमें कुछ—राज़ है।

तुरन्त सूबेदारने पूछा "तुन्हें कितना दिया है? निहालसिंह कुछ दिन से मेरा रुपया खा रहा था। रोज मेरे पास हिसाब देता था—"आज ये चीजें आपके भैयाजीके खानेके लिए दी हैं। बाजारसे खरीदके ले गया था। जेलमें छिपाके खानेकी चीजें ले जाना क्या आसान काम है? सूबेदार तो जैसे एक बाघ है बाघ। हरेक चीज ले जाने पर उसे एक रुपया देना होता है। वह बावन रुपए माहवार पाता है। लेकिन इससे चार गुना ज्यादा ऊपरी रोज-गार कर लेता है। एकदम मिलिटरी मिजाजका है—लड़ाईमें गया था न।" इस तरहकी बहुत-सी बातें करने पर थोड़ा-थोड़ा हँसता और कहता "हजूर लोग ही तो माँ-बाप हैं। आप लोगोंके भरोसे पर ही तो बाल-बच्चोंको छोड़कर दूर देश, पेटके धन्धेमें आया हूँ।" इसी तरहसे वह मुझसे रुपए लेता है।

सूबेदार और निहालसिंह दोनोंकी ख्वाहिश थी कि जिसमें मैं समझ जाऊँ कि यहां रहनेसे कुछ खर्च करनेकी जरूरत है। नहीं तो वे लोग इतने जोर-जोरसे बातें क्यों करते हैं? वे लोग जान-बूझकर मुझे सुना-सुनाकर बातें करते हैं। सुबेदारकी बात पर निहालसिंहने उत्तर दिया "देगा क्या?" अभी भी धरम है;—'बेटा किरिया' कहता हूँ कुछ नहीं दिया। साहबने इसे लाश ले जानेका हुक्म दिया है।"

"लाश ले जानेका हुक्म दिया है तो दिया है। यहाँ पर रहनेका हुक्म तो नहीं दिया। यहाँ बाहरके लोगोंके रहनेकी जवाबदेही मैं नहीं ले सकता।"

सूबेदार लब-लब करके और भी कहता जा रहा था। मैंने निहलसिंहको बुलाकर उसके हाथमें एक रुपया दिया। सूबेदार साहबने देखा। फिर इसके बारेमें जोर-जोरसे बातें नहीं हुई; हिस्सा-बटवारा पीछे होगा।

सूबेदारने सन्तरीको कह दिया—"इस बाबूको कोई दिक न करे। दफा बदलनेके वक्त हरेक 'दफा' बादके 'दफा, को यह बात कह दो।"

निहालसिंह जानेके समय नमस्कार करके कह गया "परनाम"। इस देशमें नमस्कार कहनेकी चलन नहीं है। उसके बदले पात्रापात्रका बिना बिचारे "प्रणाम" चलता है, हम लोगोंको भी यह और इसी तरहकी बहुतसी बातें कहनेकी आदत होती जा रही है।····

···शिशिरकी उस चिट्ठीकी भाषा अभी तक याद है। शिशिर जेलसे मुझसे पहले ही छोड़ दिया गया। हम लोग जेलमें हमेशा बातचीत करते कि जो जेलसे बाहर होता है, वह फिर जेलके भीतरके लोगोंकी खोज-खबर नहीं लेता है। सब जगह लगभग ऐसा ही देखा जाता है।···जिनका जीवन महीने पर महीना, सालपर साल जेलमें पच जाता है; जिनकी उद्दाम जीवनी शक्ति नियमके बन्धनमें असार कर दी जाती है, चीनकी रमणीके पाँवकी तरह जिनका जीवन स्वच्छन्द विकाशका अवकाश नहीं पाता है; बाहर खबर भेजनेकी कितनी ही जरूरतें बराबर जमा हो जाती हैं। उस तरहकी जरूरतें सरकारी नियमोंके द्वारा मिटानेकी सुविधा नहीं होती है। इसीलिए, अंधेरी यक्षपुरीमें क्षीण प्रकाश आनेके लिए खिड़की है—नए राजबन्दीका जेलमें आना, और बाहरके जिस अनेक काम-धन्धेसे भरे संसारके सैकड़ों मधुर

सम्बन्धसे विच्छिन्न करके जिस कैदीको लाया गया है, उसके साथ थोड़ी देरके लिए सम्बन्ध स्थापित करनेकी विफल चेष्टा की जाती है, छूटनेवाले कैदियोंके द्वारा। जेलकी मशीनका 'सेफ्टी मलम' है तुरत छुटा हुआ राजबन्दी। वह जेलके भीतरकी सैकड़ों विफलता, अगार निष्फल क्रोधकी अपरिमित अश्रुवेदना और दुर्निवार आकांक्षाका क्षणस्थायी निर्गम पथ है।...जेलसे बाहर होनेके समय चिट्ठी लिखनेके बारेमें कितनी ही बातें, कितने इन्टरव्यू करनेकी बात, कितने ही काम कर देनेकी प्रतिज्ञा, कितनी ही फरमाइशें एक किस्मसे माँगकर करार कर लेना,—जानेके दिनकी फूल माला, विदाईका समारोह, प्रणाम, नमस्कार, आदाब, आलिङ्गन, बेजरूरत बातें करनेकी जल्द-बाजी, दरवाजे तक जुलूस बनाके पहुँचा देना,—ये सब काम जेलमें मामूली तौरसे बराबर चलते रहने पर भी, कोई बेदिलीसे नहीं करता है। लेकिन उसके बाद? उसके बाद क्या होगा उसे भी आँखें बन्द करके कहा जा सकता है। डाक विभागके कर्मचारी कह सकते हैं कि अन्दाजो कितने लोग अगले साल बिना पता लिखे डाकके बक्समें चिट्ठी डालेंगे। ओर राजबन्दी लोग भी कह दे सकते हैं कि छुटे हुए कैदी गेटके बाहर जानेके बाद ही जेलके भीतरके लोगोंके बारेमें भूल जायँगे।...हम लोगोंकी यह धारणा गलत साबित करनेके लिए जेलके बाहरसे शिशिरने भाईजीको चिट्ठी भेजी है। भाईजीने चिट्ठीकी कई पंक्तियोंको 'अन्डर लाइन' कर दिया—अब भी याद है। "ज्यादातर लोग जैसे होते हैं मुझे भी उन्हींमें मत गिनो। जेलसे छूटनेके सात दिनोंके अन्दर चिट्ठी भेज रहा हूँ। फलाने-फलाने-फलाने लोगोंको मेरा प्रणाम कह दोगे।"

....हरदाके दुबेजीकी बूढ़ी स्त्री भी मुझे प्रणाम करती है। और

भाईजीको कहती हैं "धरम बेटा"। गरीब आदमी है ; लेकिन उस दिन जब मुलाकात हुई 'बेटे' के मुकद्दमेकी तदबीरके लिए आँचलके खूँटसे तीन रुपए निकालकर दिए,—उसकी आँखोंमें आँसू आ गए। मनमें लगा कि दुबेजीसे छिपाके रुपए दे रही है। क्यों? मालूम नहीं।······

दुबेजीने खुद मुकद्दमा चलनेके समय डर और घबराहटके साथ मुझसे पूछा था कि "रुपए-पैसेकी अगर जरूरत हो तो वह कुछ जोगाड़ करके दे सकता है। दुबेजीने कहा था, भगवान नाराज हैं, इसीलिए तो मुझे और मेरी स्त्रीको पुलिसने नहीं पकड़ा। नहीं तो, मैं तो जुलूसमें शरीक हुआ था। मेरे ही हाथमें सबसे बड़ा तिरंगा झंडा था। जब जेलसे बाहर रखनेकी ही भगवानकी इच्छा है, तो कांग्रेसीके नाते बिलू बाबूके मुकद्दमेकी तदवीर करके अपना फर्ज अदा करना उचित है।"—मैंने रुपए लेना अस्वीकार कर दिया। दुबेजीने मेरे व्यवहारका अर्थ लगाया कि मैं भाईका मुकद्दमा 'डिफेन्ड' कराना ही नहीं चाहता हूँ। और मैंने इन्कार किया था इसलिए कि चाचीने न जाने कहाँसे मुकद्दमाके खर्चके लिए मुझे तीन सौ रुपए दिए थे। चाचीने सिर्फ कहा, "हरेन बाबू वकीलको दे देना"—रुपए देनेके समय चाचीके चेहरे परका भाव ठीक दुबेजीकी स्त्रीकी तरह था। उसके बादसे दुबेजी खुद वकीलके घर जाने आने लगे।····

···घोड़ेपर दुबेजी। लाल घोड़ा जरा लंगड़ाके चलता था। घोड़ेसे उतर कर दुबेजीने घोड़ेकी पीठपर एक चाबुक मारा। पीठपर के पलानको हटा कर घोड़ेको हरेन बाबूके गेटके पासके गाछसे बाँधा।...दुबेजीने शायद बहुत रुपये भी खर्च किये थे। मैंने भी चाचीके दिए हुए रुपए हरेन बाबूको दिये थे। वे बाबूजीके मित्र हैं ; लेकिन चाचीके रुपये पाकर भी दुबेजीसे रुपये लेनेमें हिच-किचाये नहीं।..

इसके बाद दुबेजीने अपनी बात कह ही डाली। "मेरे स्वामीने 'बेटे' के मोकदमेकी काफी पैरवी की। ठीकरेकी तरह रुपये खर्च हुए। लेकिन फल क्या हुआ? असलमें पुलिस मुकद्दमेमें जिस तरफ रहती है, उसीकी जीत होती है। तुम्हारी बात तो पुलिस मानती है। सुनते हैं कलक्टर साहब बिना तुम लोगोंसे सलाह लिये कुछ करते ही नहीं हैं। तुम हो लोगोंके दलका नोखेलाल, देखो न हरदा बाजारके सब दुकानदारोंको दिक करके मारता है। लेकिन दरोगा बाबू तो उसकी मुट्ठीमें हैं। सुनते हैं सरकार तुम लोगोंके दलको माहवारी देती है। तब मैंने दुबेजीसे छिपाकर रुपये देनेका अर्थ समझा! बिलू बाबू उसका 'धर्म-बेटा' है। उसके लिये उसने अपनी सरल बुद्धिसे जो करना जरूरी समझा है, करनेमें कोई कसर नहीं रक्खी। मुझे वे लोग पुलिसका आदमी समझते हैं। उनका क्या कसूर? वे लोग दूसरा क्या सोच सकते हैं? सारे देशके लोग तो यही सोचते हैं! सरल स्वभावकी दुबेइनने तो सिर्फ पुराने परिचयके नाते मेरे मुंहपर साफ बातें कह दीं। इच्छा हुई कि तीनों रुपये उसके मुंहपर फेंक दूँ; लेकिन मुंहसे बोला, मुकद्दमेकी राय हो चुकी। अब रुपये लेकर क्या होगा?—देखा उसे विश्वास नहीं हो रहा है कि अब कलक्टर या लाट साहब कुछ नहीं कर सकते हैं। उसके बाद उसके निराश मुखकी ओर देखकर मनमें आया कि रुपये मुझे ले लेने चाहियें; बोला, "अच्छा रुपये दे दो।" एक सन्तान हीना स्त्रीके परसन्तान वात्सल्यके आगे मेरी युक्ति और सिद्धान्तको हार माननी पड़ी। लेकिन मुकद्दमेमें गवाही देनेके समय अपने राजनैतिक सिद्धान्तको जरा झुका लेनेमें क्या हर्ज होता? उस समय जैसे मैं साधारण मनुष्य नहीं था। उस समय जनमतके विरुद्ध, परिचित अपरिचित सभीके विरुद्ध, मुझे अकेले सिर ऊंचा करना था; निन्दा करने वालोंको और

विरोधियोंको अपने सिद्धान्तकी दृढ़ता दिखानी थी।....राजनैतिक मतकी बात छोड़ देनेपर भी, मालूम होता है उस समय मेरी व्यक्तिगत जिद्का सवाल आ गया था ; मेरे ऊपर दबाव डालकर मेरा मत बदलेगा, इतना कमजोर राजनैतिक मत मैं नहीं रखता हूं। लोगोंने क्या मेरे मनके भीतरकी बात समझी है? दुबेजीकी स्त्रीने जो मेरे बारेमें समझा था, साधारण लोगोंने तो शायद उससे भी बुरी धारणा मेरे बारेमें कर रक्खी थी। जाने क्यों वे लोग ऐसी धारणा रखते हैं। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण तो रोज देखता हूं। एक दिन फुटबौलके मैदानमें बैठकर जो छात्रोंका दल सिगरेट पीता था, मैंने बगलसे साइकिलपर जाते समय उनका जोरसे खंखारना सुना है। पड़ोसके लड़के-लड़कियों को आश्चर्य और उत्सुकतासे अपनी ओर ताकते देखा है। बचपनका साथी सौरीन बगलसे कतरा कर चले जानेमें कुण्ठित नहीं होता है। मारनेका डर दिखानेके लिये बेनामी चिट्ठी भी पाई है। कैसी बेढंगी चिट्ठी थी! पहले कैसे उच्चमना पिताका पुत्र हूं यह याद दिलाकर अन्तिम पंक्तिमें मेरे पितृत्वके संबन्ध में ही सन्देह प्रकाश किया गया था। चाची और न' दी तक सिर्फ कामकी बात छोड़कर और बातें नहीं करतीं थीं। एक डिस्ट्रिक्ट बोर्डके मेम्बरको दूसरे मेम्बरसे कहते सुना है कि दोनों भाई सहदेवकी बहिनके प्रेममें पड़े थे। उसी इर्ष्यासे मैंने शायद भाईके विरुद्ध गवाही दी है, नहीं तो क्या कोई फांसीके मुकदमेमें अपने भाईके विरुद्ध गवाही दे सकता है? सरस्वतीके विषयमें इस तरहसे मैंने कभी सोचा नहीं। और भाईजीकी तरफसे भी ऐसा कुछ देखा नहीं, जिससे समझा जा सकता कि भाईजी उसे प्यार करते थे ; लेकिन लोगों का मुंह कौन बन्द करे?....

....जेलमें भाईजीके मुकदमेके चलनेके समय मेरी गवाही होनेके दिन

जेलके बाहर कितनी भीड़ थी। जेलके अन्दर मुकद्दमा चलता है। ऐसे खूंखार आसामीका विचार खुले इजलासमें कैसे किया जा सकता था? कई चौकीदार, दफादार, सिपाही और दारोगा गवाहोंके साथ, जेल-गेटपर पुलिसकी मोटरसे मैं उतरा।—जनताकी ओर देख नहीं सकता हूं लेकिन उनकी भर्त्सनापूर्ण दृष्टिका अनुभव करता हूं। मैं जनताके क्षोभकी परवाह नहीं करता हूं, इस भावको दिखानेके लिये एक बार जोर लगाकर उस ओर सिर ऊँचा करके देखा। मालूम होता है मानसिक चञ्चलताकी वजहसे किसी खास आदमीके मुंहकी तरफ मनोविश्लेषणकी दृष्टिसे देखनेकी क्षमता मुझमें नहीं थी। 'जू' में बनैले जानवरोंको लोग जिस दृष्टिसे देखते हैं, उस दिन वार्डर लोग उसी दृष्टिसे मेरी ओर देखते थे; जज साहब प्रशंसाकी दृष्टिसे मुझे देखते थे; और सरकारी वकील और पुलिस सन्देह और परेशानीकी दृष्टिसे देखते थे; सिर्फ जेलके पुराने कैदियोंकी नजरमें मैंने उदासीनताका भाव देखा; वैसा और किसी की नजरमें नहीं था। जेलके राजबन्दियोंको उस समय नहीं देखा। देखादेखी होनेसे उनकी दृष्टि उस समय कैसी खौफनाक होती सो अनुभव कर सकता हूं। इस मुकद्दमेमें भाईजीके साथ और दो आदमी आसामी थे,—सूर्यदेव और हरिश्चन्द्र। मेरे इजहार देनेके लिये उठनेपर हरिश्चन्द्र आसामीके कठघरेसे चिल्लाकर बोल उठा—"छि! छि! छि! छि!" इसलिये मैंने घूमकर उस ओर देखा उसकी आंखोंसे घृणा फूट कर निकल रही थी। उसके तीक्ष्ण स्वरमें जितना तीव्र व्यंग था, उससे अधिक था निष्फल क्रोध।...एकबार आश्रममें एक सांप चिमटेसे पकड़कर खेलमें भाईजीके पास ले गया था। भाईजी बागमें काम करते थे। सांपके सफेद पेटकी ओर अचानक देखकर उनके चेहरेपर और आंखोंमें जो भाव दिखाई पड़ा था—वही भाव सूर्यदेवके चेहरेपर देखा।

तीव्र घृणासे वह जैसे मेरी ओरसे आखें फेर लेना चाहता था। और भाईजी कठघरेमें एक कम्बलपर बैठकर एक लाल रंगकी जिल्द वाली किताबपर नजर डाले हुए थे, चेहरा भावशून्य। मुझे लगा कि उनका मन सचमुच उस किताबमें नहीं लगा है। वे केवल जोर डालकर अपनी नजर उधर लगाये हैं। नहीं तो भाईजी हरिश्चन्द्रको जरूर बात कहनेसे रोकते।.. उसके बाद सरकारी वकीलको हरिश्चन्द्रके बारेमें नालिश—हरिश्चन्द्रका गुस्सा होना और हरेन बाबू की ओर विरक्तिके भावसे देखना—हरेन बाबूका उद्वेग और एकबार खास-कर उद्वेग दमनका प्रयास—एसिस्टैण्ट जेलर ऑनड्यूटी और दरोगाकी बैचेनी कोर्ट-रूम नहीं होनेसे वे लोग अभी आसामीको मजा चखा देते—दोनोंमें इस भावका दृष्टि विनिमय—सब चित्र आंखोंके आगे नाच उठते हैं। हरिश्चन्द्र निराश हो गया बोला "क्या करोगे। फांसीसे भी ज्यादे कुछ दोगे क्या?" वार्डर और पुलिसने आसामीके कठघरेको घेर रक्खा है। हरिश्चन्द्र उसी बीचमें मुझसे तीव्र स्वरमें बोला "कुत्ता कहीं का"। जज साहब चश्मा साफ करते हैं। पेशकार दौड़कर हरिश्चन्द्रको कुछ कहने गया। भाईजीके साथ हरिश्चन्द्र की नजरें मिलीं। भाईजीकी विनतीभरी दृष्टि—कहना चाहते थे, हरिश्चन्द्र जरा ठहरो, यह जो एक Scene तमाशा हो गया। हरिश्चन्द्र रुक गया। इजलासका काम शुरू हुआ।...

रोड़े भरे रास्तेपर एक साथ बहुतसे जूतोंकी आवाज हो रही है। अंधेरेमें रास्तेकी ओर कुछ दिखाई नहीं पड़ता है। सिर्फ दूरमें दीख पड़ते हैं वार्डर लोगोंके लम्बे बैरकके बरामदे; काली झांप लगी हुई रोशनी। बैरकमें वार्डर लोगोंका ढोल मंजीरेके साथ कीर्तन चल रहा है, उसकी ऊंची आवाज कानोंमें आ रही है,—'बहती आ रही हैं—कहना ठीक नहीं होगा, कानके पर्देपर

बदस्तूर चोट कर रही है। लेकिन उस आवाजके पीछे छोड़ती हुई धीरे-धीरे पास आती हुई जूतेकी आवाज जेल-गेटके पास पहुँची। देखा, वार्डरोंका एक दल आया। अधिकतर लोगोंके पैरमें पीले रंगके काबली चप्पल। दोके पैरमें बहुत पुराने बूट। लड़ाईकी वजहसे बूट जूते शायद नहीं मिलते।

जेल-गेटके दोमञ्जिलेपर एक वार्डरने ग्यारह बजनेकी घण्टी दी। दो-दो करके पाँच बार, उसके बाद एक बार। इतनेमें ही दो घण्टे बीत गये! कब दस बज गये मालूम भी नहीं हुआ। गेटके सामनेके वार्डर लोग उत्सुकतासे मुझे देखते हैं—अब यह कौन इस ढंगसे आके जूट गया। एकने मुझसे दियोसलाई है कि नहीं पूछा। मैंने कहा 'नहीं'। इसी बीच भीतरके वार्डरने गेटका ताला खोला। वार्डर लोग हल्ला-गुल्ला करते हुए अन्दर घुसे। वहीं नाम लिखे गये।

गेट वार्डरने हँसते हँसते पूछा,—"कुछ नाजायज तो अन्दर नहीं ले जा रहे हो?"

एकने कहा "हजूर 'सरिच' किया जाय।"

सुबेदारने जवाब दिया "जी हां, इसके बाद घर जाकर नहाऊँ और क्या? तुम लोगोंको तो मैं जानता हूं। तुम लोग उर्दीकी जेबमें तो चीजें रखते नहीं।"…रजिस्टरमें नाम लिखे गये। जेलके भीतरका लोहेका दरवाजा खुला। लेकिन पूरा नहीं; दरवाजेकी एक तरफके किवाड़में की एक छोटी खिड़की खुली। जेलके अन्दर घना अन्धकार। एक-एक करके, एक-दो छोड़कर सभी, नए वार्डर रास्तेके उज्ज्वल प्रकाशसे जेलके अन्दरके अन्धेरेमें मिल गये। गेटके जमादारने किबाड़ लगा दिया—बहुत बड़े एक झब्बेमें सौसे अधिक बड़ी-बड़ी चाबियां। ताला बन्द करनेके बाद एक बार अन्यमनस्कभावसे तालेमें झटका

मारके देखा कि ठीक बन्द हुआ या नहीं। झटका मारना। जैसे reflex action की तरह मालूम पड़ा। उसके बाद मेरी तरफके फाटकपर आकर खड़ा हो गया। गेटके बाहर बन्दूक वाला सन्तरी बदला गया। पहलेवाला जरा गम्भीर स्वभावका था और यह दूसरे किस्मका। भीतरके जमादारने बाहरके सन्तरीसे खैनी ( तम्बाकू ) मांगा और घुलघुलके बातें करने लगा। शायद मेरे ही बारेमें। गेटके भीतर नए दलका जो वार्डर रह गया है, वह सूबेदार साहबके साथ बातें करता है। सूबेदार ऊँचे टेबिलपर बैठकर एक बही हिलाते हुए हवा खा रहा है। शायद कुछ लेन-देनका कारोबार होगा या कोई चीज जेल-गुदामसे चोरी करके बाहर भेजनी होगी। कोई चीज चोरी करके बाहर ले जाना एक आदमीसे सम्भव नहीं है। जेलके भीतरका शासन-यन्त्र ऐसा है कि जबतक शृङ्खलाकी सभी कड़ियां संयुक्त नहीं होती हैं, तबतक चोरी की योजना सफ़ल नहीं हो सकती है। खाओ, लेकिन मिल-जुलके खाओ। छोटेकी भी अवहेलनाकी गुञ्जाइश नहीं है।...

टन् टन् करके कलक्टरीके टावरमें ग्यारह बजे। सभी जगहके जेलकी घड़ी, देखता हूं, पन्द्रह मिनट तेज रहती है।—जेलके सामने रास्ता। उसके किनारे-किनारे जेल-कर्मचारियोंके क्वार्टर। पर्दा लगी हुई खिड़कियोंसे कहीं-कहीं अस्पष्ट रोशनी दीख पड़ती है। उनमें एक जगह अन्धकारसे चतुष्कोण प्रकाश की झलक अचानक दीख पड़ती है,—एक क्वार्टरका दरवाजा खुला है। प्रकाश की किरणें सरल रेखाओं से बाहर आकर पड़ती हैं; एक प्रकाशमय 'ट्रेपीजियम', चौकठकी ओरका बाजू छोटा है; रेलकी लाइनोंकी समानान्तर रेखाएँ दिगन्तकी ओर जिस तरह समीप आनेकी चेष्टा करती हैं; उसी तरह। एक मूर्त्ति दरवाजेसे निकली। और एक 'सिलहुट' दरवाजे तक आकर कुछ देर

खड़ा हुआ। दूसरी मूर्त्तिने दरवाजा बन्द किया।....उनके घरका प्रकाश, क्यों जेल इलाकेके निविड़ अन्धकारको दूर करनेकी चेष्टा करेगा? दरवाजा जैसे जबर्दस्ती उस आलोकको, अपने सीमाबद्ध क्षेत्रमें बन्द रखनेका यन्त्र मात्र है।...लुंगी पहने डाक्टर बाबू गेटपर पहुंचे। उनकी देहमें गञ्जी है। पान चबा रहे हैं।...गालमें पान रखनेसे क्या सचमुच 'कैन्सर' होता है? कंधेपर कमीज, खाकी हाफ पैन्ट, और भी शायद दो-एक कपड़े। चलनेके समय दोनों पैर सामनेकी ओर फेंक-फेंक कर चलते हैं। सन्तरी खट् से जूतेकी आवाज करके 'अटेन्शन' होकर खड़ा हो गया।...इन लोगोंका काबुली चप्पल कितने दिन चलेगा?···सन्तरीने सलाम किया। अन्दरके वार्डरने आदाब करके गेट का ताला खोला। डाक्टर बाबू सलामके जबावमें सिर हिलाकर अन्दर दाखिल हुए। गेटका ताला फिर बन्द हुआ। सूबेदार साहबने टेबिलपर बैठे ही डाक्टर बाबूसे पूछा "कंधेपरके ये कपड़े किस लिए हैं?"

डाक्टर बाबूने कहा,—"ड्यूटी तो अस्पतालमें है। लेकिन क्या जानें; तड़के बड़े डाक्टर साहब, हाकिम, सभी आवेंगे, उस समय शायद कोई जरूरत पड़ जाय। उस समय तो लुंगी पहनकर साहबके सामने नहीं जा सकूँगा।—यह ठीक है कि फाँसीके वक्तकी ड्यूटी डाक्टर बाबूकी है, मेरी नहीं। लेकिन क्या जानें जरूरतकी बात तो कही नहीं जा सकती है।—और जैसी गर्मी है!" डाक्टर बाबूकी बातचीतमें जरा हँसोड़पन और दुलारका भाव है। देखता हूँ, डाक्टर बाबू सूबेददारके साथ काफी अदबके साथ बातें करते हैं। उसका कारण है कि सूबेदारके नाराज होनेसे जेलकी गायका बढ़िया दूध नहीं मिलनेसे लड़के-बच्चे दुबले हो जायँगे, अस्पतालके मांसका थोड़ा हिस्सा भी डाक्टर बाबूके घर नहीं पहुँचेगा, किरासन तेल शायद गाँठके पैसे खर्च करके

बाजारसे खरीदना पड़ेगा। इन्हें छोड़कर और भी बहुत किस्मकी चीजें जिन्हें वे लोग वेतनका अंग समझते हैं, शायद कलसे ही बन्द हो जायँगी। अस्पतालकी जालीदार मशहरी, बिछावनकी चादर, सेमलकी रुई, चीनी, पुराना चावल वगैरह कितनी ही चीजोंकी इन्हें जरूरत है। भोरको जो दल बाहरके 'कमान' में काम करता है, उनमेंसे ही एक शायद रोज गेटके बाहर होनेके समय फूलकी डालीमें डाक्टर गृहिणीके लिए पूजाके फूल ले जाता है। फूलके साथ एक कच्चा बेल और कई कागजी नींबू रहते हैं—लड़के-बच्चे रोज पकाया हुआ बेल खाते हैं न।...और डाक्टर बाबू तो शायद जेलमें नौकरी करते-करते चिकित्सा शास्त्र भी भूल गए हैं। रोज वही एक ही तरहका काम हिसाब, नाम, फाइल, दफ्तर, वजन लेना, रिटर्न भेजना, साहबके पीछे-पीछे घूमना, अस्पतालके गेटसे लेकर सभीका मन रखते हुए चलना—इनमें डाक्टरी करनेकी फुर्सत कहाँ है....एक बार जेलमें डाक्टर बाबूने मुझसे एक रिटर्न लिखवाया था। डाक्टर बाबूका नाम शायद नरेन बाबू था। रिटर्नके बहुत विषयोंमें था Spleenic Index। उसका हिसाब किस तरह किया जाता है सो मैं नहीं जानता था। डाक्टर बाबूसे पूछा, देखा वे भी नहीं जानते हैं,—बोले, 'अभी रहने दो,' मैं पिछले सालका रिटर्न देखकर अन्दाजसे बैठा दूँगा।....जेल गेटके अन्दर घुसते ही दाहिनी ओर दीवालमें एक ब्लेक बोर्ड दीख पड़ता है—स्टेशन पर जिस चतुष्कोण पट्ट पर रेलका टाइम लिखा रहता है उसी तरहका। उस पर लिखा है,—इस जेलमें कितने कैदियोंकी जगह हो सकती है, आज कितने कैदी हैं, उनमें कितने अन्डर ट्रायल हैं। सबसे नीचे लिखा रहता है, जो डाक्टर ड्यूटी पर है उसका नाम।

डाक्टर बाबूने खल्लीके टुकड़ेसे बोर्डपर अपना नाम लिखा और बगलमें

लिखा कि रात नौ बजेसे ड्यूटी करते हैं। उसके बाद डाक्टर साहब जरा हँसते-हँसते बोले—"आफिसमें पंखा है, साहबके घर पंखा है, और आप लोगोंके यहाँ पंखा नहीं?"

सूबेदार साहबने कहा "तकदीर"। कह कर अपना कपाल दिखा दिया। कपालके बीचमें एक ऊँची शिरा है; यहाँसे भी स्पष्ट दीख पड़ती है।...

जितेनदाके जनेऊके समय चाचीके बिछावनपर सोकर एक गरीब ताँतीकी कहानी सुनी थी। ताँतीके कपालमें राजटीकाका सुलक्षण था। उसके बाद कुछ दिनोंतक जिसे देखता था, उसीके कपालको अच्छी तरह देखता था। एक दिन भाईजी और मैंने अंगुलीसे घिस-घिसकर कपालके चमड़ेको करीव-करीब छील दिया। कपालमें ठीक तिलककी तरहका दाग हो गया था। माँका बकना और मुहल्लेके लोगोंके मजाककी वजहसे कई दिनोंतक हम लोग घरसे बाहर नहीं निकल सके।....

दरवाजा खुला। डाक्टर साहब भीतर घुसे। भीतरके खुले दरवाजेसे बहुत-से जूतोंकी आवाज सुनाई पड़ती है। जेलके भीतरसे बहुत-से लोग शायद मार्च करते हुए गेटकी ओर आ रहे हैं। फिर दरवाजा बन्द हुआ। लेकिन कुछ ही क्षणोंमें दरवाजेके बीचकी छः इंचकी खिड़की खुल गई, और एक आदमीने भीतरसे भोजपुरी भाषामें दरवाजा खोलनेके लिए कहा। वार्डर लोगोंके ताला खोलने और बन्द करनेका अन्त नहीं। इससे वे थकते नहीं हैं। अभी तो डाक्टर बाबूने भीतर जानेके समय दरवाजा खुलवाया था। उसी समय तो पैरोंकी आवाजसे मालूम पड़ा कि कोई आ रहा है। उसी समय कुछ क्षण दरवाजेको खुला रखनेसे ही तो हो जाता। तब दो बार परिश्रम नहीं करना होता। ये लोग जो मशीनकी तरह काम करते हैं सो क्या जेलके

नियमसे या अपनी आदतकी वजहसे ? दरवाजा खोलनेका नियम तो विचित्र है।—जेल गेटके बीच दो फाटक हैं। एक जहां मैं बैठा हूं उसके सामने, और दूसरे इस गेटसे दस-पन्द्रह हाथ भीतरकी ओर। दोनों दरवाजेके बीचका रास्ता एक बड़े हालकी तरह है। जेलके भीतरका कर्मकेन्द्र, गुमटी है और जेलके बाहरका कर्मकेन्द्र यही रास्ता। अगर चार बैल गाड़ी जेलके भीतर ईंट लेकर जायँगी, तो वार्डर सामनेका दरवाजा खोलकर पहले दो गाड़ियोंको इस हालमें जाने देगा। उसके बाद दरवाजा बन्द करेगा। इसके बाद भीतरका दरवाजा खुलेगा, दोनों गाड़ियोंको जाने दिया जायगा, भीतरका दरवाजा बन्द होगा; फिर आकर सामनेका दरवाजा खोलकर बाकी दोनों गाड़ियोंको जाने देगा। एक साथ दोनों फाटक खोलकर चारों गाड़ियोंको जाने देनेसे कौनसा महाभारत अशुद्ध हो जाता ?···

अन्दरके वार्डरका दल हल्लागुल्ला कर रहा है।···किसी वार्डरको पूछूँ कि फांसी सेलमें किसकी ड्यूटी थी ? उससे पता चलता कि भाईजी इस समय क्या कर रहे हैं। रहने दो, जाने क्या सोचे। शायद टिटकारी देकर बातें करे। शायद मेरी गवाही देनेकी बात वह जानता हो !···

सभी बैरक लौटनेके लिए परेशान हैं, बहुत रात हो गई। एक रजिस्टरमें नाम लिखा गया। एक वार्डरने ऊँचे डेस्कके नीचेसे हाथ देकर सूबेदारको जैसे कुछ दिया,—मतलब यह था कि कोई देख न सके। एक-एक करके सभी बाहर आ रहे हैं। उनमें से गोरे रंगके कमसिन एक वार्डरको सूबेदारने पास बुलाकर उसकी पगड़ी खोलनेके लिए कहा। सूबेदार उसकी कमर हाफ पैण्ट वगैरह 'सर्च' करने लगा। सर्च करनेपर कुछ मिला नहीं। वार्डर बाहर निकलनेके समय गुस्सेसे घुनघुनाने लगा—

"मेरे ही ऊपर सब गुस्सा। सूबेदार समझता है कि मैं हेड वार्डरके दलका आदमी हूं। आपसमें मूछोंकी लड़ाई और हम लोगोंकी खींचा-तानी। ठहरो, जेलर साहबको कहके सब हाल बता न दूँ तो…। इससे मेरी नौकरी जाय चाहे रहे, उसकी मुझे पर्वाह नहीं।"

उसके बाद कुछ अश्लील गाली देकर बोला—"नौकरीके लिहाजसे कुछ नहीं कहा।"….

…कीर्तनके गीतका एक लगातार चिल्लाना सुनाई पड़ता है। एक भी बात समझमें नहीं आती है। सिर्फ बीच-बीचमें "रामा हो रामा"। …बचपन में एक कविता पढ़ी थी, उसमें एक पंक्ति थी "गाड़ीवाण-रामा"। कविता याद नहीं है—उसकी पहली पंक्ति थी 'हुआ सबेरा, जागो लल्ला'—इसी तरहका कुछ।

…जितेन दाने,—चाचीका बड़ा लड़का—चाचीके बक्ससे रुपए चुराकर बहुत-सी कहानियोंकी किताबें मँगाई थीं। कलकत्तेसे पार्सल आनेपर घरके लोग जान गए। जितेनदा घरसे भागकर हम लोगोंके आश्रममें दो दिन तक रहे। चचाने कहा था, उसे और घरमें घुसने नहीं दूँगा। उस पार्सलसे दो किताबें चाचीने हम दोनों भाइयोंको दी थीं, उन्हींमें से एकमें यह कविता थी।… जितेनदाने कितनी दफे रुपए चुराकर इस तरह पार्सल मँगाए थे, इसका ठिकाना नहीं। बैडमिन्टनसेट, कैरमबोर्ड, फुटबौलका पम्प वगैरह कितने पार्सल, वे मँगाते थे, इसका कुछ हिसाब है? एक-एक खेलमें कुछ दिनों तक उत्साह रहता। किसी खेलको काम चलाऊ ढंगसे भी नहीं खेल सकते थे। …वही जितेनदा आज कितनी गम्भीर प्रकृतिके आदमी हैं; ठीकेदारीसे कितने रुपए पैदा करते हैं। हम लोगोंको, यानी जो सब गरीब कार्यकर्त्ता राजनीतिके क्षेत्रमें हैं, उन्हें

वे कृपा और अवहेलनाकी दृष्टिसे देखते हैं ! उसे कौन समझाए कि हम लोग भी कोशिश करनेपर उससे अधिक धन पैदा कर सकते थे । ....Nothing succeeds like success....

भीतरके दरवाजेकी छोटी खिड़की खिसक गई । कोई जैसे वार्डरसे कुछ बोला ; अंधेरेमें उस आदमीकी सूरत कुछ भी दिखाई नहीं पड़ी !....अली-बाबाकी गुफा...खुल जा सिसम !....अलीबाबाकी गुफा ढेरके ढेर धनरत्नके सिवा और क्या दे सकती ? लेकिन इस फाटकके खुलनेसे कितने ही जीवन्मृत लोग फिरसे सचमुच बच सकते थे ।...

...जेलमें सिर्फ दीवाल ही दीवाल नहीं है । उसके अन्दर भी बहुत-सी खुली जगह है, जहाँ खुली हवा पाई जा सकती है । कम-से-कम साधारण गृहस्थके घरके आँगनसे जेलका आँगन बहुत बड़ा है । लेकिन इससे क्या ? जेलके अन्दर फूलका बाग, नीमकी कतार, छायादार बेल, पीपल और बड़ रहनेसे क्या ? सारा वातावरण विषादसे भरा, प्राणहीन, कठोर और क्लान्तिमय । आबोहवा जैसे कुछ भारी-भारी-सी । आलिभर लाज, लेड बेटर, कानन डायेल, इन्होंने क्या Psychical phenomena के सम्बन्धमें ठीक ही कहा है ? गम्भीर चिन्तन और मानसिक आलोड़नके समय हमलोग क्या सब चिन्तामूर्त्ति इसी जगह छोड़ देते हैं ? हम लोगोंकी चिन्ताओंकी समष्टि क्या एक प्याजकी तरह है कि उससे एक-एक खोल हम लोग छीलकर फेंक सकते हैं,—कोई मोटा, कोई महीन । सचमुच क्या इसीलिए किसी पुराने घरके अन्दर जानेसे हम लोगोंका शरीर काँप जाता है ?...

जो अन्दरसे आए, वे अस्पतालके कम्पाउण्डर हैं । भले आदमी काफी शौकीन हैं । हाथमें एक लालटेन ।—साँपका डर है क्या ?—असलमें वे जेल

में घुसनेके समय खाली लालटेन ले आते हैं ; घर जानेके समय इसमें किरासन तेल भरकर ले जाते हैं। यह सभी जानते हैं। सभी समझते हैं, लेकिन कोई कुछ बोलता नहीं है। इस तरहकी छोटी-छोटी प्राप्य चीजोंको वे ऊपरी माल नहीं समझते हैं,—ये चीजें उनकी नौकरीके वेतनका हिस्सा हो गई हैं। वेतन शायद पचीस रुपए होगा। लेकिन कपड़े-लत्ते-जूते वगैरहमें कैसे इतने पैसे खर्च करता है? जरूर डाक्टरके साथ हिस्सा बँटाता है।...

"क्यों? कम्पाउण्डर साहबको आज बड़ी देर हो गई, देखता हूँ"—सूबेदारने सहानुभूतिके स्वरमें कहा।

"हाँ सूबेदार साहब, यह जेलकी नोकरी करके अपने गलेमें खुद फाँस लगायी है। एक मिनट छुट्टी नहीं। वही सुबहका आया हुआ अभी रातके बारह बज रहे हैं। दोपहरमें सिर्फ घर जाकर खा आया हूँ। सिंहेश्वर बाबूके नौ बजे अस्पतालकी ड्यूटीपर आनेकी बात थी ; आए हैं अभी। बारह बजे,—खा पीके, बीबीके साथ गप्प-सप्प करके, पान चबाते।"

उसके बाद एक अश्लील गाली दी। अपने भाग्यको, सिंहेश्वर बाबूको, या कपड़ेमें जो कीड़ा घुस गया था उसको, किसे गाली दी ठीक समझमें नहीं आया। सिर्फ यही समझा कि कुछ पहले जो डाक्टर बाबू जेलके अन्दर गए उनका नाम सिंहेश्वर बाबू है। ···कपड़ेके भीतरसे कीड़ेको निकालता है। अभी उनकी मुँह-भंगी देख कर हँसी आती है।

···कम्पाउण्डर साहब अपने दुःख-सुखकी कहानी कहते गए। "मित्तिर साहबकी 'नाइट ड्यूटी' रहनेसे तो एक किस्मसे अच्छा था। वे जब आते नौ बजते ही आते, नहीं तो एकदम आते ही नहीं।" दोनों आँखों-आँखोंमें इशारा करके हँस उठे। फिर गप्प चलने लगा।

वह सब जेलर साहब भी जानते हैं। कितने दिन जेलर साहब रातको राउण्ड देनेके समय अस्पतालमें जाकर देखते हैं कि डाक्टरका घर खाली है। और अपनी आँखोंसे नहीं देखनेपर भी जेलमें कोई खबर मिलनी बाकी तो नहीं रहती। पहलेके साहबके जमानेमें, एक दिन पकड़े जानेपर जवाब दिया—'क्या किया जाय; अस्पताल वार्डमें जिस घरमें डाक्टर सोता है, उसमें दरवाजा नहीं है। रातमें कहीं कोई मार-पीट न करे इसी डरसे वहां नहीं सोता हूँ। वह साहब भी था उस्ताद। वह बोला कि रातमें तो कैदी लोग बन्द रहते हैं। मार-पीट कौन करेगा? डाक्टरने जवाब दिया था कि जो मेट लोग रातमें वार्डकी ड्यूटी करते हैं, वे तो बन्द नहीं रहते। इसके पहले ही जेलमें 'मिउटिनी' हो गया था। बस साहब भी कुछ ज्यादा बोल नहीं सके। लेकिन अब? मुजफ्फरपुर जेलके कई 'पोलिटिकल प्रिजनर' के भाग जानेके बादसे तो रातमें मेट लोगोंकी रातकी ड्यूटी बन्द कर दी गई है। सुना है, मेट लोगोंने ही शायद उनके भागनेमें मदद की थी।···अभी तो, पहलेके बजूहात नहीं चलेंगे। अब शायद और कोई नया बहाना बतावेगा। अच्छा यार, अब एक सिगरेट तो पिलाओ। एकदम थक गया हूँ। हाड़-गोड़ जैसे चूर-चूर हो रहा है।"

सूबेदार साहबने सिगरेट निकाला; कम्पाउण्डर साहबने जलाया। उसके बाद कुछ धीमी आवाजमें क्या सब बातें हुई। कम्पाउण्डर साहबने लालटेनकी बत्ती जरा उसकाकर लालटेन उठा लिया। अधजले सिगरेटमें एक जोरदार कश लगाकर सूबेदारके हाथमें दिया। गेटके बाहर जानेके समय बोले "उसके लिए मत सोचो। मैं ही दे दूँगा।"···किस चीजके बारेमें अब तक बातें हो रही थीं? क्या दे देंगे? इन्जेक्शन तो नहीं?—सूबेदार साहब और कम्पा-

उण्डर बाबूमें, देखता हूँ खूब गाढ़ी दोस्ती है…गेटके बाहर आकर कम्पाउण्डर बाबू सूबेदारसे पूछने लगे—"तुम तो आज यहीं सोओगे ?"

"हाँ आफिसके कमरेमें बिछावन बिछाके रक्खा है। अब सो जाऊँगा।"

कम्पाउण्डर साहबके सिरके पीछे बाल कितने बड़े-बड़े हैं! ज्यादातर सफेद हो गए हैं। उन्होंने कितने ही कैदियोंकी फांसी देखी है। रातके आखिरी पहरकी फाँसीके बारेमें कोई बात उसके मनमें भी नहीं आई। जितने कम्पाउण्डर हैं, सबके पीछेके बाल क्या बड़े ही रहते हैं ?…

…वही हरीश कम्पाउण्डर। सिरपर जुल्फी। वह माधव बाबू घरके लिए दवा बना रहा है। शक्की मिजाज हल्के और जरा सिरफिरे माधव बाबू ठीक पीछे खड़े हैं—देखनेके लिए कि ठीक नापा जा रहा है या नहीं। कुछ देर बाद खिन्न और अधीर होकर हरीशके सिरके बाल खप्से मुट्ठीमें पकड़कर सिर हिला दिया। बोले "बाल छोटे करा नहीं सकते। पीछेसे तुम्हारा दवा बनाना बिलकुल दिखाई नहीं पड़ता है।" …मैंने भाईजी और माँके पास जाकर यह किस्सा कहा था। सभी मिलकर जो हँसे थे! …माँ हँसी रोकनेकी बेकार कोशिश करते हुए बोली "मैया रे; सब पर तुम्हारी नजर पड़ ही जाती है?"… माँके हँसनेसे उसकी आँखोंमें आंसू आ जाते हैं और भाईजी जब हँसते हैं तो कोई आवाज नहीं होती है;—बायाँ गाल जरा पिचक जाता है। आश्चर्यकी बात है कि दोनों गालमें ऐसा नहीं होता है, एक ही गालमें क्यों गड्ढा बन जाता है। हँसनेके समय दोनों आँखें आधी मुँद जाती हैं। …भाईजीका हँसता हुआ मुखड़ा आँखोंके सामने नाच रहा है।…

प्रकाशकी शिखा धीरे-धीरे दूर चली जा रही है। इधर-उधर हिल रही है, कम्पाउण्डर बाबूकी लालटेन। कम्पाउण्डर बाबू क्या इतना हिल-डुलकर चलते

हैं ? गोरिल्ला इसी तरह चलता है। नजदीक रहनेपर यह देख नहीं सका था। इतनी दूर क्यों जा रहे हैं ? मालूम होता है इन्हें सरकारी क्वार्टर नहीं मिला है। दूरसे लालटेनकी शिखा और दीपकी शिखामें कुछ भेद नहीं मालूम पड़ता है।...

...रानीपत्तरामें एक किसान 'केस' तदारुक करके वापस होनेके समय में, भाईजी और सहदेव खूब थक गए थे। अँधेरी रातमें हल्की रोशनी देखकर रात काटनेके लिए वहीं जाना निश्चित किया। जुगनूकी तरह हल्की रोशनी—धीरे-धीरे पास जाकर देखा एक लालटेनकी शिखा। लालटेन पुराना है, जंग लगा हुआ।....

...'महात्माओं' के लिए खटिया कम्बल तकिया लाये गए। वालेन्टियर सहदेवके लिए एक चटाई बरामदे पर बिछा दी गई। खटिया बाहरवाले दो छप्परोंवाले घरमें डाली गई। दीवाल या टट्टी नहीं है। इस देशमें उसे 'हवाढुंगी' कहते हैं। कम्बल पर मैली चादर और तेलसे पुता हुआ तकिया देखकर मेरा शरीर घिन्-घिन् करने लगा—हो सकता है बहुतसे रोगोंके कीटाणु उसमें हों। मैं अपनी खटिया परसे उनको हटाकर सिर्फ कम्बल पर बैठ गया,—कम्बल परकी गंदगीका आँखोंको पता नहीं चलता है, इसलिए मनको जरा सन्तोष होता है। जिस आदमीने चूड़ा-दही परोसा उसे आँख आई थी। भाईजी चूड़ा-दही खाकर खूब निश्चिन्त होकर उसी तकिए बिछौने पर लेट कर सो गये।...भाईजीमें जरा भाग्यवादिताका पुट बराबर देखता हूँ। आसपासके लोगोंके साथ अपनेको मिलाकर चलनेकी क्षमता अद्भुत है। इसके बारेमें बात उठाने पर वे कहेंगे कि अगर किसी मूल सिद्धान्त पर चोट नहीं पहुँचती है, तो अपने सौजन्यकी हत्या करनेकी क्या आवश्यकता है ?

उनका अपनेमें केन्द्रित मन अपनेको चिन्तामें ही डुबाके रखना चाहता है। सब प्रश्न वह अपनी तरहसे सोचते हैं, सब चीजोंका वे मन ही मन बालकी खालवाला विश्लेषण करते हैं, किसी भी सूक्ष्म विषयको मुझसे ज्यादा अच्छी तरहसे समझते हैं—लेकिन व्यवहारिक क्षेत्रमें, व्यक्तिगत जीवनमें उनका आचरण युक्तिसंगत नहीं होता है। जिस बातको सुनकर गुस्सेसे मेरा सारा शरीर जल उठता है, वे उसे शायद हल्की हँसीके साथ एक छोटा जवाब देकर सह लेते हैं। एकदम नीलकण्ठ शिव! उनमें साहसका अभाव नहीं है; डरसे किसी उचित कामको छोड़ देते आज तक उन्हें नहीं देखा। लेकिन उनका खून जैसे गरम ही नहीं होता। बुद्धिकी तीक्ष्णता और अनुभूतिकी तीव्रता रहने पर भी आवेगकी उग्रता और प्राणशक्तिकी प्रचण्डता उनमें नहीं है। उनकी हरेक डेग नपी-तुली होती है। जैसे फिसलनेवाले रास्ते पर अत्यन्त सावधानीके साथ पैर चाँप-चाँपके चलते हों।···

···'थ्रिलेग्ड रेस' के समय भाईजी कितने बेजान ढंगसे पैर फेंकते थे।····एक बार कुमार साहबके मेलेमें लड़कोंके 'स्पोर्ट्स' में भाईजी और मैंने 'थ्रिलेगेड रेस' में भाग लिया था। हम लोग बहुत पीछे पड़ गए थे, सफल नहीं हो सके। यह 'आइटेम' खत्म होने पर गुस्से और दुःखसे भाईजीसे कहा था, "तुम्हारे साथ दौड़ना और गलेमें एक ढोल बाँधकर दौड़ना एक ही बात है।" भाईजीने कहा था, "मैंने तो पहले ही कहा था। तू तो 'स्पोर्ट्स' में सबमें फस्ट होता है। मुझे लेकर झूठमूठकी खींचातानी की। पन्नाके साथ जोड़ी लगानेसे ही तो होता।" इतना लज्जित, इतना ठिठका हुआ भाईजीको कभी नहीं देखा। १९४३ और १९२२—इक्कीस बरस पहलेकी बात है।····भाईजीका पसीनेसे भींगा और थका हुआ

चेहरा।··· इधर उधर बिखरे हुए केश धूलसे भर गए थे। हाँफते-हाँफते धोतीकी खूँटसे पाँवकी धूल झाड़ने लगे।···मेरा मन खराब हो गया। दूसरी प्रतियोगिताओंमें पाए इनाम माँको दिखाकर प्रसन्न नहीं हुआ। भाईजीने खुद उन्हें माँको दिखाया। दूसरे दिन फिर उन्हें दोस्तोंको दिखाया। माँसे बोले—"निलूसे रोजरियो साहबका काण्ड सुनो—मैं तो ठीकसे कह न सकूँगा।" मैं समझ गया कि भाईजीने मेरे मनकी बात ताड़ ली है। उनकी पैनी और स्नेहमयी दृष्टि, मनके अन्तस्तल तक पहुँच जाती है। भाईजी मेरा मन हल्का करनेकी कोशिश कर रहे थे। मेरी तरफसे अपनी दृढ़ताका प्रायश्चित्त होना उचित था।·· माँको रोजरियो साहबके काण्डके बारेमें कहना पड़ा। रोजरियो साहब कुमार साहबका मैनेजर है। 'स्पोर्ट्स' के खेल उसीके तत्त्वावधानमें होते हैं।···सौ गजकी दौड़में 'खोकन' दाके साथ कोई सकना नहीं है। उसका अच्छा नाम क्षीङ्कारी-रञ्जनदत्त है। वह फर्स्ट हुआ था, मैं सेकेन्ड। लड़कोंके 'स्पोर्ट्स' में कपड़ोंमें नम्बर नहीं दिया जाता है;—ठीक जगह पर पहुँचनेके बाद रोजरियो साहब सबको पूछकर एक कागज पर नाम लिखता है। खोकनदाका नाम पूछा।—चारों ओर भीड़, कोलाहल—हरेक प्रतियोगिताके अन्तमें ऐसा ही होता है। खोकनदाने नाम कहा। साहब दो तीन बार पूछकर भी शायद उसका नाम समझ नहीं सका। उसके बाद मेरा नाम लिखा, मेरे बाद ही दो और लड़कोंके नाम लिखे। प्राइज देनेके समय देखा कि मुझे ही फर्स्ट प्राइज़ दिया। खोकनदाकी आँखें छलछला आईं, उसका नाम ही नहीं है। जितेनदाने मजाक करते हुए कहा "क्षीङ्कारीरञ्जनदत्त भला साहब लिख सकता है? बाप-माँके दिऐ हुए नामकी वजहसे तुम्हारा प्राइज़ बेकार गया। अब

कल सबेरे कुमार साहबके पास जा।" सोचा था कि माँ किस्सा सुनकर खूब हँसेगी—लेकिन फल उल्टा हुआ। अपने प्राइज़का 'टीपाट' दूसरे दिन खोकनदाको दे आना पड़ा। लेकिन मेरा प्राइज़ मैदानमें ही मारा गया। रोजरियो साहबको देखकर अब भी मुझे यह दुःखकी बात याद आती है।····

भाईजी फिर किसी दिन मेरे 'पार्टनर' होकर खेलनेको तैयार नहीं हुए; किसी न किसी बहाने avoid करनेकी कोशिश की है। भाईजीको खेल-कूद का ज्यादा शौक कभी नहीं था। एक बैडमिण्टन छोड़कर और कोई खेल अच्छी तरह खेल नहीं सकते थे। लेकिन इसमें भी कोई मैच मेरा 'पार्टनर' होके नहीं खेला। प्रीति, सौजन्य और नम्रता होनेपर भी उनकी दृढ़ता असीम है। एक जगहपर जाकर उनका पता नहीं मिलता है—इतना समीप, तो भी जैसे जरा अलग, स्वतन्त्र। उनका वही अभिमान मैं इक्कीस बरसमें सैकड़ों कोशिशें करके भी तोड़ नहीं सका।...

बैरकका कीर्तन अब भी चल रहा है। कोलाहलसे मालूम होता है कि खूब जम गया है। अब 'सियारामा'का नाम-कीर्तन नहीं होता है। अभी केवल एक लगातार सुर सुन पड़ता है "नारायण नारायण ना-आ-रा-आ-यण-आ-ा-ा!" इस तरहके नामकीर्त्तनके बाद ही साधारणतः इन लोगोंका कीर्त्तन खतम हो जाता है। ...साहब सुपरिण्टेण्डेण्ट अपने क्वार्टरके निकट इस विकट चीत्कारको कैसे बर्दाश्त करता है? मालूम होता है वार्डरोंको क्रुद्ध करना नहीं चाहता है। उन लोगोंकी आन्तरिक सहयोगिताके बिना जेलका शासन एक पल भी नहीं चल सकता है।···

कितने दिनोंकी बात! दुबला खिट्-खिट्, जज स्पिलर साहब अधपगला किस्मका आदमी। रोज व्यायामके लिए कुल्हाड़ीसे लकड़ी फाड़ता था। ···

जर्मन सम्राट् कैज़रको भी यही झोंक था...फजलेमियां नाजिर लकड़ीका कुन्दा जुटाते-जुटाते परेशान रहता था। बजरङ्ग प्रसाद वकीलकी लड़कीकी शादीके समय बड़ा काण्ड कर दिया था स्पिलर साहबने। रातमें शादीका बाजा जब खूब जमके बजने लगा, तो अचानक उनके मनमें आया कि उससे उनकी शान्तिमें व्याघात होता है। साथ ही एक लाठी और एक 'बुलस आई' लालटेन लेकर बजरङ्ग बाबूके घरपर हाजिर। वहाँ बिना कुछ बोले-चाले लाठीसे ढोलके चमड़ेमें छेद कर दिया। दूसरे दिन बजरग बाबूने जज साहब पर मुकद्दमा दायर कर दिया। कुछ दिनके बाद मुकद्दमा आपसमें तस्फिया हो गया। जरा माथा ठण्डा होनेपर वकील साहबने समझा कि वकालत करके ही जब खाना है, तब जज साहबके साथ झगड़ा करके क्या फायदा ? आत्मीय कुटुम्बके सामने जो अपमान होना था सो तो हो ही चुका। बात जितनी बढ़ाओगे उतनी बढ़ेगी।...

अपने देशके लोगोंको क्यों दोष दूँ। सब देशके लोग एक ही किस्मके हैं। साहब लोग भी हम लोगोंकी ही तरह Time server हैं। यही तो कॉंग्रेस मिनिस्ट्रीके समय जिला मैजिस्ट्रेट भर्नन साहब हम लोगोंके आश्रममें आके माँगके भात-दाल खा गया। ....मिसेज भर्नन हाथसे भात खानेके समय भातका कौर ठीक मुँहमें पहुँचा नहीं सकती थीं। हाथपर भात ठीक वैसे ही रखती थीं जैसे चम्मचमें भात रक्खा जाता है; और ठीक चम्मचकी तरह ही हाथ मुँहमें घुसाती थीं। समूचे मुँहमें भात-दाल लग गया था।.... भर्नन साहब जब तब हम लोगोंसे मिलने आते थे। खद्दर और खादी टोपी की क्या खातिर थी। साहबकी लड़कीने एक नेवल पाला था। "घरमें नेवल लोगोंको बड़ा परेशान करता है, तुम लोग अगर आश्रममें रक्खो तो दूँ।"—

यही कह कर भाईजीको नेवल दिया था। पीछे इस नेवलको देखनेके बहाने स्त्री-कन्या लेकर कलक्टर साहब, वक्त-बे-वक्त, जब तब आकर हाजिर हो जाते थे; उनकी लड़की 'रिकि' को देखना चाहती है। उसके बाद 'रिकि' को लेकर बच्चेकी तरह कितना दुलार, कितना प्यार।....

चिन्ताका तार तोड़कर, अँधेरेको चीरता हुआ, वातावरण कँपाता हुआ बारहका घण्टा बजा। डाक्टरके क्वार्टरमें एक कुत्ता झाँव-झाँव करके भूँकने लगा—मालूम होता है उसकी सुखकी नींद टूट गई। "हो-ओ है!" इस विकट चीत्कारके साथ, खञ्जरी, झाँझ, ढोलके साथ वार्डर लोगोंका कीर्त्तन बन्द हो गया। ये लोग घड़ी देख कर बारह बजे तक कीर्त्तन करते हैं क्या? कैसे पहले ही से वक्तका अन्दाज कर लेते हैं?...खाकी अधहत्थी कमीजके नीचेका एक जोड़ा हाथ, एक जोड़ा बड़ा वृत्ताकार झाँझ बजा रहा है, बाएँ हाथकी कलाईमें एक सस्ता रिस्टवाच और उसके ऊपरके हिस्सेमें नीले और लाल रंगके गोदनेसे बनी हुई एक नारी मूर्त्ति।...

बाबूजीका कीर्त्तन ठीक आठ बजे खत्म होता था। "रघुपति राघव राजाराम, पतितपावन सीताराम"—महात्माजीका प्रिय भजन सबके अन्तमें गाया जाता था।....आश्रममें जो कांग्रेस कार्यकर्ता रहते हैं, वे सभी कीर्त्तनमें हाथ बँटाते हैं। सभी सोचते हैं, इससे बाबूजी खुश होंगे। सचमुच बाबूजीके कीर्त्तनके झोंकके बारेमें सारा जिला जानता है।....मिटिंग-घरमें ही कीर्त्तन होता है। सिमेन्टकी सहन पर, मिट्टीकी दीवाल, फूसकी छौनी, दीवाल माँके हाथसे झक्झक् लीपा हुआ,—बीच-बीचमें छोटी खिड़कियाँ, उनमें किवाड़ नहीं। सारी दीवालमें बीच-बीचमें राजनीतिक नेताओंकी तस्वीरें। एक ओर दो कांग्रेसके झंडे 'क्रास' के आकारमें दीवालमें लगे हुए। उसके ऊपरकी

तरफ लाल सालू पर सफेद रुईसे नागरीमें 'स्वागतम्' लिखा हुआ। नीचे गांधीजीकी एक बड़ी-सी तस्वीर। घरका पूरब-उत्तर कोना जरा गंदा। कास्टिक सोडा, लोहेकी कड़ाही और कपड़े साफ करनेका साबुन बनानेके और-और सरञ्जामसे भरा काठके पहियेवाला एक बड़ा-सा सन्दूक इस तरफ रहता है। 'फुलवाहा' के नन्दलाल तिवारीने कांग्रेस कमिटीको यह सन्दूक दिया था। कोनेमें खड़ी की हुई रक्खी है एक धुनकी; और धरनकी लकड़ीसे लटक रहा है एक धनुष। दिनके वक्त पिउनी बनानेके लिए रुई धुननेके समय इसके साथ धुनकी बाँध ली जाती है।····आश्रमका कीर्त्तन आरम्भ हुआ। "देशेर छेले गांधीजीके चिनलिना रे, जान लिना" ···बाबूजीका अपना लिखा हुआ गाना।····माँ धूपदानी लेकर मिटिंग घरमें आईं। गांधीजीकी तस्वीरके सामने एक फूलकी माला देकर, उसके सामने धूपदानी रक्खी और उसके बाद एक कोनेमें अलग हाथ जोड़के बैठीं। बाबूजीने लालटेन कम करके सुर पकड़ा। सहदेव वगैरह सभी विकृत उच्चारणसे यह बंगला कीर्तन करने लगे। पहला गाना खत्म हुआ। माँ झुकके प्रणाम करके उठीं। इतने लोगोंके खाने-पीनेका इन्तजाम उन्हींको करना पड़ेगा—कीर्त्तनमें बैठ रहनेसे पकावे कौन? भाईजी और मैं दोनों बचपनमें कीर्त्तनमें बैठा करते। जनेऊके बाद भी कई बरस तक बैठते रहे।··· भाईजीके कीर्त्तन बन्द करनेके कई दिन बाद मैंने भी कीर्त्तनमें जाना छोड़ दिया। उसको लेकर माँ कितना रोईं! "तुम लोगोंके नहीं आनेसे वे दुःखित होते हैं। तुम लोगोंको पसन्द नहीं है तो भी उनकी बात रखनेके लिए क्यों नहीं बैठते हो?" भाईजीने कोई जवाब ही नहीं दिया।···· भाईजी घरमें कीर्त्तन नहीं करते थे, लेकिन कांग्रेसके कामसे हम लोग जब गाँवमें जाते तब बड़े-बड़े गाँवोंमें ग्रामवासी लोग हम लोगोंके मनबहलावके

लिए कीर्तनका बन्दोबस्त करते थे। बाबूजीके लिए लोगोंको ऐसा करनेकी आदत थीं, इसीलिए मास्टर साहबके लड़कोंके लिए भी वे लोग यही खातिरदारी करते थे। इस कीर्त्तनमें लेकिन भाईजी कभी खिन्नता नहीं दिखाते थे। मेरे विरोध करने पर इशारेसे मुझे धीरज रखनेके लिए कहते थे।····

बाइसी थानाके खगड़ा हाटमें मिटिङ्ग होगी। एक आदमी भी नहीं आया। सहदेवने कांग्रेसका मंडा जमीनमें गाड़कर "इन्किलाब जिन्दाबाद" "गांधीजीकी जय" कितनी ही दफे चिल्लाया। ढिढोरा पिटाना, घण्टा बजाना वगैरह गाँवके हाटमें आदमियोंको जमा करनेका जितना भी कौशल है, सब काममें लाया गया, लेकिन आदमी नहीं आए। तब स्थानीय कांग्रेस-कार्यकर्त्ता रामदेव मण्डलने ग्वालोंकी कीर्त्तन मण्डली बुलवाई। साथमें एक सिंगल रीड हारमोनियम। दस मिनटमें हाट भरके लोग इस जगह दौड़ पड़े। उसके बाद हम लोगोंने झटपट भाषण खत्म किए। लोग हाटके काममें फँसे हैं। दादके मलहमके एजेन्टके भाषण और महात्माजीके चेलेके भाषणमें वे कोइ फर्क नहीं समझ पाते हैं! हाटमें आए हैं, सब किस्मके तमाशेमें दो मिनट महात्माजीका तमाशा भी वे लोग देख लेंगे। उन लोगोंमेंसे तो किसी-किसीने महात्माजीका दर्शन 'नमक-सत्याग्रह' के पहले किया था—वे लोग अब इन नए चेलोंके मुँहसे क्या सुनेंगे? क्या सब बोलते हैं, पन्द्रह आना बात तो समझमें ही नहीं आती है। हम लोगोंके मवेशीकी चरीका इन्तजाम करे, खजाना कमा दे, तहसीलदारकी भैंस जो सबके खेत उजाड़ करती है—उसे बन्द करे, तब तो समझें। सो नहीं, सिर्फ मेम्बरी, चंदा लेनेका फंद! मिनिस्ट्री गद्दी पर बैठकर बाकी खजानेका कानून बनाया है। हाटमें भाषण दे गया कि किसीको चार आनेसे बेशी दरखास्तमें खर्च नहीं

करना होगा। खर्च उसका बीस गुना हुआ। आधे लोगोंकी दरखास्त तो खारिज हो गई। महात्माजीके चेले, पुष्पदेवजीके पास दरखास्त दी थी, तदबीर करनेके लिए। उन्होंने भी दरखास्त पीछे आठ आने मेहनतानाके ले लिए। एक मास्टर साहब हैं इसीलिए इस जिलेमें महात्माजीका काम कुछ होता है। नहीं तो इनमें आधे लोग तो ठग हैं।...सच तो है, समूचा कांग्रेस संगठन तो धनी किसानोंके हाथमें है। जमींदारके शोषणसे वे लोग मुक्त होना चाहते हैं; लेकिन वे लोग अपने सीमित क्षेत्रमें, अधियादार, बटायदार या बेचारे मजदूरोंका शोषण बन्द नहीं करना चाहते हैं। कांग्रेस मिनिस्ट्रीके समय गरीब रैयतोंके लिए जितने कानून बने थे, सभी इन्होंने चालाकीसे बेकार कर दिए। सहदेवके ऐसे कांग्रेसके कार्यकर्त्ताने भी अधियादरके कायमी हकको रोकनेके लिए बन्दोबस्तीकी झूठी दलील तैयार की है।...

... दही-भात गाँवकी वह प्रौढ़ा स्त्री जो कांग्रेस आफिसमें अक्सर आती थी,—गलेमें बड़ा-सा घेघा,—आते ही रोने बैठती, भाईजीको कहती कि "तुम्हें छोड़कर और कोई इसका उपाय नहीं कर सकेगा। आकाशमें चन्द्र सूर्यके रहते मुझ पर यह जुलुम। सहदेवका भाई कपिलदेव मेरी सब जमीन-जायदाद ले लेना चाहता है। जमीन करीब पचास बीघा है। उसके घरके पासकी जमीन है न, 'मन्धत्ता' तम्बाकूका खेत लाजवाब होगा। इसीसे इस जमीन पर नजर है। 'पुरुख' तेली था। जवान लड़का, 'पुरुख' रहते मर गया। पुतहूको उस वक्त पेटमें लड़का था। एक बरसमें मेरा 'पुरुख' मर गया; उसके बाद गई पुतहू। बरस घुरते न घुरते रत्ती भरके पोतेको भी 'बाय' उखड़ गया। वह चौबीस घण्टे दादीकी गोदमें ही रहता था। कितना दवा दारू, कितने उपचार हुए। दर्द करेगा इसलिए बच्चेको 'सूई' देने नहीं

दिया। देनेसे शायद बचता। उसे पकड़ कर रख न सकी। मुहल्लेके गोरे गोपका लड़का उसके कुछ दिन बाद मरा। उसके बाद कपिलदेवने पंचायत करके मुझ पर इलजाम लगाया कि मैं 'डायन' हूँ ; पहले अपना घर खत्म किया, तब गोरेलालके लड़केको 'बाण' मारके उसको भी खत्म किया। अरे बेवकूफ, इतना नहीं समझता है कि मैं तो स्वामी, पुत्तर, नाती-पोता सब खाके बैठी हूँ ; मेरे पेटमें अब जगह कहाँ है ? उसके बाद मुझे गाँवसे भगानेके लिए एक दिन रातमें राघो, सनिचरा, छेदी इन सबने कपिलदेवके कहने पर मेरे घरको जलाके राख कर दिया। एक मुट्ठी धान भी न बचा सकी। लेकिन मैं अपनी डीह नहीं छोड़ती हूँ। सुनती हूँ कि कपिलदेवने फिर मुझ पर सदरमें डिगरी कराई है, जमीन लेनेके लिए। मैं क्या छोटी बच्ची हूँ कि इस बात पर विश्वास करूँगी ? जमीन है, दहीभात गाँवमें, और डिगरी करावेगा पूर्णियांमें। सो क्या कभी हो सकता है ?"—इसी तरह कितनी ही बातें कहती रही ; बीच-बीचमें ठक्-ठक् करके कपाल ठोकती और हुँकर कर रोती रही। वह बोली कि मास्टर साहबको वक्त कहाँ है ? नहीं तो मैं उन्हें ही दहीभात एक बार ले जाती। अब तो बिलू बाबूको छोड़कर और कोई उसकी गति नहीं है। भाईजी और मैंने कितनी कोशिस की, लेकिन कपिलदेवके इस अन्यायको ठीक नहीं कर सके। हम लोगोंके दहीभात जाने पर कपिलदेव पूड़ी-तरकारी खिला देता था। लेकिन कामकी बात पर कान नहीं देता था। घुमा फिराके बोलता कि वे लोग भी तो महात्माजीके भक्त हैं, वह भी तो जिला कांग्रेस कमिटिका मेम्बर है, आश्रमकी छौनीके लिए खड़—हर साल वही देता है, एक भाईको तो उसने कांग्रेसको दान कर दिया है।···असल बात है कि एक साथ रहनेवाले बड़े परिवारके सभी लोगोंको जमीन-जायदाद

देखनेकी जरूरत नहीं रहती है। घरका अन्न बर्बाद करके गाँवमें बेकार मटरगश्तीसे अच्छा है एक-आध आदमीका कांग्रेसमें भाग ले लेना। यही बड़े किसानोंका मतलब है। कांग्रेस संगठनमें जितनी सुविधाएँ मिल सकती हैं, वे इसी दानके द्वारा ठीक कर ली जाती हैं। और क्या चाहिए, भाई अगर कांग्रेसके काममें मन लगावे तो डिस्ट्रिक्ट बोर्डका मेम्बर भी हो जा जा सकता है। और अगर कहीं कांग्रेस किसी विषयमें धनी किसानों पर खामख्वाह दबाव डालना ही शुरू करे तो उसे देहमें लगने ही नहीं देनेसे काम खल जायगा। सिर्फ नैतिक प्रभावको छोड़कर और कोई शक्ति तो कांग्रेसकी है नहीं।...

पीछे एक दिन इसी तेलिनने भाईजीको गुस्से और दुःखसे कहा था "दरोगा साहबको कपिलदेवने खरीद लिया है, यह जानती हूँ। लेकिन तुम्हें भी खरीद लिया है क्या?" उसके बाद और भी क्या-क्या बोलनेवाली थी। अचानक सहदेवके आनेसे रुक गई। जितनी भी दुश्मनी हो, सहदेव भूमिहार ब्राह्मण है—ऊँची जातका, गाँवका गण्यमान्य आदमी। उसके सामने मामूली तेलिन जोरसे बातें नहीं कर सकती है और सहदेवको इसके बारेमें कहनेसे कहता है "कपिलदेव भैया मालिक हैं। मैं यह सब क्या जानूँ?"

मेरी इच्छा होती थी, कपिलदेवको गर्दन पकड़कर कांग्रेस आश्रमसे निकाल दूँ। इसके बाद बहुत दिनों तक उसके साथ बातचीत नहीं करता था। भाईजी ने सिर्फ मुझे कहा कि, "उसपर गुस्सा करनेसे क्या होगा—संगठनकी नींव ही गलत है।"....

१९३० और १९३२ सालके आन्दोलनमें कैम्प जेलमें रहनेके समय अपने राजनैतिक दृष्टिकोणकी व्यर्थताका अनुभव हम लोगोंने किया था। जेलमें इसके

बारेमें कितनी आलोचना, वाद्-विवाद, मनो-मालिन्य हो गया। जो लोग इस व्यर्थताके बारेमें जाहिरा बोल नहीं सकते थे, उनके मुखपर भी निराशाकी छाप स्पष्ट थी। ··वही बीज इतने दिनोंमें अंकुरित हुआ। भाईजी और मैंने कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टीमें भाग लिया। तेलिनकी घटनाने इस सुप्त बीजको आवश्यक ताप और जल सिंचन किया। यह स्त्री अब भी अपने स्वामीके डीह को जकड़कर पकड़े है कि नहीं मालूम नहीं; लेकिन उसीकी आँखोंके आँसू हम लोगोंकी सारी द्विधा और सन्देहको बहाकर ले गए। हृदयकंदराकी अर्द्ध-जागरित आकांक्षाने खिड़कीसे उषाकी किरण देख पाई। ···उसके बाद भाई-जी और मैंने एक ही पार्टीमें रहकर कितने उत्साहसे काम किया। वे केवल सहकर्मी नहीं, केवल कामरेड नहीं—वे मेरे भाईजी भी हैं! कितने सुख-दुःख से सना एक सूत्रमें गूंथा हम लोगोंका जीवन है। कैसे मेरा भला होगा, कैसे मुझे जरा आनन्द होगा, इसकी चिन्ता सर्वदा जिसके मनमें ···। वे कालिजमें नहीं पढ़े? इसके लिए भाईजीके मनमें कम दुःख नहीं था। 'अर्थक्वेक रिलीफ फंड'में काम करनेके 'एलाउन्स'के रुपए भाईजीने मेरी कालेजकी पढ़ाई में खर्च किये। अपने मनकी साध उन्होंने मेरे ऊपर मिटाई है। रिलीफका काम जब खत्म हो गया और चीज-वस्तु जब नीलाम होने लगी, तब भाईजीने एक साइकिल खरीदकर मुझे दी। यह सब तो तुच्छ वस्तुएँ हैं। भाईजीके स्नेहके प्रसंगमें इन चीजोंकी बात उठाना भाईजीके स्नेहको सिर्फ छोटा करना है। मेरे सिर-दर्दसे भाईजी परेशान हो जाते थे। जेलमें एतवार करके जो गुड़ पाते थे, उसे वे खुद नहीं खाते थे, क्योंकि वे जानते थे कि मुझे भात खानेके बाद थोड़ी मिठाई नहीं खानेसे मालूम होता है कि खाना अधूरा रह गया। जेलमें बराबर मेरे कपड़े और जँघिया साफ कर देते थे, रोकनेसे कहते,—

"रहने दो, तुम्हें आदत नहीं है।" मैं भी जोर नहीं डालता था। सोचा कि भाईजी मेरे लिए यह सब कर देंगे यह तो मेरा न्यायोचित दावा है—इसमें अस्वाभाविक कुछ भी नहीं।

किन्तु ···किन्तु भाईजीका क्या मुझपर कुछ भी दावा नहीं है? हो सकता है। हो सकता है क्यों, है। उसकी जगह राजनीतिके क्षेत्रसे बाहर है। राजनीतिके क्षेत्रमें मैं निल, और वह भाईजी नहीं। यहाँ व्यक्तिगत प्रश्न छोड़ कर, युक्ति की कसौटीपर हरएक कार्य-पद्धतिको जाँचना पड़ेगा;—अपनी पार्टीके दृष्टिकोणसे सब कामोंका विचार करना होगा।····

····दुनिया मेरे बारेमें जो चाहे सोचे, भाईजी मेरे मनका भाव ठीक समझेंगे, वहाँ संकीर्णताका लेश नहीं है।····

····१९४० सालमें मैं और भाईजी जब गिरफ्तार हुए, तब भी हम लोग दोनों भाई सी० एस० पी० के मेम्बर थे। लेकिन जेलके अन्दर कई महीनोंमें कितना परिवर्तन हो गया। ···उस वार्डके कटहल गाछके नीचे, चन्द्रदेवके साथ मेरी पहली मुलाकात—उससे किताब लेना—उसके लेक्चर क्लासमें जाना—कटहल गाछके नीचे कम्बलपर लेक्चर क्लास—सब आँखोंके आगे आ रहे हैं।····उसकी अकाट्य युक्तिके सामने सिर झुकाना पड़ा। मालूम पड़ा कि धीरे-धीरे आँखोंके आगेका पर्दा हट रहा है,—भाईजीके पंख के नीचे रहकर जिस दृष्टिसे राजनीतिके क्षेत्रको देखना था वह रुग्ण, jaundiced, भ्रान्त,—वह सुविधावादी निम्नमध्यश्रेणीका भावप्रवण उच्छ्वास मात्र था;—यथार्थ सर्वहाराकी लहरानी हुई उद्दामताकी जगह वहाँ नहीं है;—जातीयतासे बाहर देखनेकी क्षमता उनमें नहीं है। चन्द्रदेवके दलमें घुसनेके पहले मनमें सोचा कि भाईजीके साथ आलोचना करूँगा। सोचते-सोचते भी

वह हुआ नहीं—मुख्यनः संकोचके कारण और ज्यादे डर था कि उनकी मजबूत दलीलोंका जवाब नहीं दे सकूँगा। और मैं मन ही मन अनुभव करता था कि भाईजीकी दलील गलत है। हरएक दलीलका जवाव चन्द्रदेवसे सुनकर फिर भाईजीसे कहना तो हो सकता था। अन्त तक बिना भाईजीको कहे ही नए दलमें चला गया। और पूछूँगा क्यों? राजनीतिके क्षेत्रमें नाबालिगी क्या हमेशा रहेगी?····उसी समयसे हम दोनोंके बीच जो दीवाल खड़ी हुई, वह आज तक रह गई।···राजनैतिक कार्यकर्त्ताका जीवन उसकी पार्टीके अन्दर रहता है—पार्टीके बाहरका अस्तित्व उसे एकदम लुप्त कर देना होगा। इसके बाद मैं भाईजीसे बचके चलनेकी कोशिश करता रहा। एकदम व्यक्तिगत कामकी बातके अलावे और कोई बात नहीं होती थी। मुझे हमेशा डर रहता कि मेरी पार्टीके लोग क्या सोचेंगे। भाईजी प्रतिद्वन्दी दलके प्रसिद्ध कार्यकर्त्ता हैं। उनके साथकी अन्तरङ्गता मेरी पार्टीके लोग अवश्य पसन्द नहीं करेंगे। मुझे शायद कुछ न भी कहें; लेकिन वे आपसमें इसके बारेमें जरूर आलोचना करेंगे। इन दो दलोंको छोड़कर और भी कई राजनैतिक छोटे दलों के कार्यकर्त्ता वहाँ थे। हरएकका विश्वास था कि दूसरे दलका खुफिया उसके दलमें है। और ठीक ही था; जितना भी छिपाके रक्खो, एक दलकी बात दूसरे दलके लोग जरूर जान लेंगे। जेलमें दीवालके भी कान होते हैं।

भाईजी भी मेरा सकोच देखकर मुझे बचाके चलते थे। पार्टीके क्लाससे आकर रोज देखता कि मेरा बिछावन झाड़ दिया गया है, इस बिछावनपर भाईजीके स्नेहमय हाथके स्पर्शका अनुभव करता था। जिस दिन माँ या बाबूजीकी चिट्ठी आती, सिर्फ उसी दिन भाईजीके साथ बातें करनेका सुयोग पाता था। माँका पोस्ट-कार्ड आया—मैंने पढ़कर भाईजीके बिछावनपर रख दिया।

"किसकी चिट्ठी है ; मांकी है क्या ? "बोला हां" । भाईजी चिट्ठी पढ़ने लगे— "सवेरे खाली पेट चाय मत पीना। बीच-बीचमें त्रिफला और इस्बगोल खाना। पकाए हुए बेलका इन्तजाम कर सको तो सबसे अच्छा। मुझे बड़ा डर है—जेलमें तुम लोगोंको रोज आंव होना होगा। नजरबन्द कैदियोंको तो ये सब चीजें जुटाना मुश्किल नहीं है। अगर रुपएकी जरूरत हो तो लिखनेमें लज्जा मत करो। जैसे होगा भेज दूँगी"—"मांका तमाशा तो देखो"—कहकर भाईजी जरा हँसे। बायें गालमें गढ़ा पड़ गया।⋯बहुत-सी बातें जी खोलकर बोलनेकी इच्छा होती थी। पहलेकी बात रहती तो मांके बारेमें बहुत-सी बातें होतीं, अभी सिर्फ बोला "हां"। दिलमें कितनी ही बातें भरी हैं ; लेकिन सकोचके शीतसे जमके जकड़ गई थीं।⋯बचपनमें एक लिहाफमें मैं और भाईजी दोनों सोए हैं। चार बजे रातसे गप्प शुरू हुई—गप्पका अन्त नहीं था।⋯अभी एक छोटा-सा "हां" बोलनेके बाद मालूम हुआ कि और बातें हैं ही नहीं! बात खतम हो जानेकी बेचैनी चेहरेपर झलक गई। उसे छिपानेके लिए किसी कामके बहाने इस जगहसे चला जाना पड़ा।⋯

⋯उसके बाद देवली ट्रांस्फरके दिन...। हम लोग कई आदमियोंको देवली भेजा जा रहा था। भाईजी इस दलमें नहीं थे। जानेके दिन भाईजी ने मेरा बक्स सहेज दिया। बक्सके नीचे एक ताड़का पंखा रख दिया। ⋯पंखेमें मांके हाथका लगाया हुआ झालर। उसमें एक जगह लिखा था—'निल्टू बिल्टू पिल् पिल्टू'। किस अज्ञात क्षणमें मांके मनमें क्या उठा था ; क्या सोच कर पिल् पिल्टू लिखा था, मालूम नहीं।⋯अपनी फाउण्टेनपेन भाईजीने मेरी जेबमें खोंस दी। अभी तक वह कलम मेरी जेबमें है।⋯

"बाबू साहब सो गए क्या ?"—देखा सूबेदार साहब बगलमें आकर खड़े हैं।

"नहीं, क्यों ?"

...वह ड्यूटी छोड़कर गेटके बाहर क्यों आया ? "आपकी ड्यूटी खत्म हो गई शायद ?"—पूछा।

'हाँ,—नहीं—मेरी ड्यूटी तो रातमें नहीं रहती है। रातके आखिरी हिस्सेमें अफिसर-टफिसरके आनेकी बात है। इसीसे सोचा आज यहीं सोऊँ। इसके पहलेकी फाँसीके दिन साहब राउण्डमें आया था। फाँसीके तख्तेके चारों ओर बड़ी-बड़ी रोशनी जलाकर उस जगहको दिनकी तरह करके रक्खा जाता हैं और चार वार्डर वहाँ पहरा देते हैं। साला जेलखानेका कारोबार ; कितने किस्मके कैदी और कितने तरहके वार्डर। कोई रुपए पैसे लेकर अगर कहीं फाँसीके तख्तेमें गोलमाल कर दे, तो शायद कामके वक्तसे पहले गड़बड़ी पकड़ी न जा सकेगी। इसीलिए इतनी हुशियारी है। एक फाँसीमें गोलमाल होनेसे साहबसे लेकर वार्डर तक सभीकी नौकरीमें 'नुक्स' पड़ जायगा। और इन सब बातोंकी जबावदेही होना चाहिए अन्दरके जमादार पर। लेकिन उस नवाबके नातीने साहबको क्या कह दिया मालूम नहीं, देखता हूँ साहब मुझपर बड़ा खफा है। साहब इस डिपार्टमें नया आया है। जेलके नियम कानूनको न कुछ जानता है न समझता है। ऐसे कितने साहबोंको लड़ाईके वक्त देखा है। कितनी मेम साहबके हाथका दिया सन्तरा खाया है। अभी तो पेटके लिए बिना कसूर गाली-गुस्ता सहना पड़ता है।"....

सोचा, सूबेदार मुझसे कुछ कहेगा, इसीकी भूमिका बाँध रहा है।

पूछा,—"तो आप कहाँ जा रहे हैं ?"

"बड़ा मच्छर है। सोनेका क्या कोई उपाय है ? बिछावन भी आफिसघर में बिछा दिया है। लेकिन बड़ी गर्मी है। आपको भी तो मच्छड़ जरूर काटता

होगा। इसीसे सोचा घर जाकर चाय पी आऊँ। लड़ाईमें जानेसे यह बुरी लत लग गई। आप भी चलिए न? इन मच्छड़ोंमें सारी रात पड़े रहनेकी क्या जरूरत है? नोखेसिंह परिवारके साथ रहता है। उसके क्वार्टरमें रात काट लीजियेगा। आपके मनका दुःख तो हम लोग कम नहीं कर सकते हैं, लेकिन जो भी जो कुछ सेवा हम लोग आपकी कर सकेंगे, क्यों नहीं करेंगे? आखिर हम लोगोंको भी बाल-बच्चे हैं। हम लोग कोई बिलायतके आदमी भी नहीं हैं।"

मैंने कहा—"छोड़िए छोड़िए—मजेमें हूँ। मच्छड़ ज्यादा नहीं हैं। इस रातमें कहाँ दौड़ा-दौड़ी करूँ?"

उसकी शराफतने मुझपर असर किया। मेरे हल्के इन्कारको नहीं मानकर, एक तरहसे जोर लगाके मुझे खींचके उठाया। मैं कम्बलोंको उठा रहा था। सूबेदार बोला "रहने दीजिए—मुझे भी कुछ बिछावन दे दीजिए—दोनों आदमी बाँटकर ले चलें।"

मैंने कहा—"कितना भारी है ही।"

चार कम्बलोंमेंसे तीन उसने लिए और एक मैंने लिया।

बोला—"यही तो, नजदीक ही में क्वार्टर है।"

रास्ता पार करके डाक्टर वगैरहके क्वार्टरोंको पीछे छोड़कर वार्डरोंके क्वार्टरों के सामने खड़ा हो गया। क्वार्टर अधिक नहीं हैं। सिर्फ सीनियर वार्डर लोग क्वार्टर पाते हैं। और सब बड़े बैरकमें रहते हैं। एक दरवाजेके सामने जाकर दरवाजेपर धक्का लगाके सूबेदार बोला,—

—"अरे देखता हूँ ताला लगा हुआ है। बाबू, मैं एकदम भूल गया था। नोखेलाल अभी ड्यूटीपर है। आपको बेकार तकलीफ दी।"

मैंने कहा—"इससे क्या। मैं वापस हो जाता हूं। कितनी दूरी है ही?"

"ठहरिए, रोशनी ले आऊँ।"

"नहीं नहीं, रहने दीजिए। रोशनीकी जरूरत नहीं है" रातकी स्तब्धता को चीरती हुई एक भर्राई हुई कर्कश आवाज आई "लेफ्ट टर्न;'।····दूरी ने कर्कशताको कुछ कम करके आवाजको कुछ मधुर बनानेकी कोशिस की! आवाज जेलके भीतरसे आई है। शायद वार्डरका दल बदला जा रहा है। ठीक गेटके सामने बैठकर, दो घण्टे पहले, 'दफा बदल'के वक्त यह सुन नहीं सका। अभी गेटसे कुछ दूर हूँ, इसीलिए यह शब्द सुन पड़ा। गेट क्या sound proof है?

फिर जेल गेटपर वापस आकर पहलेकी जगहपर कम्बल बिछा दिया, सिर्फ एक कम्बल। बाकी तीन अदद सूबेदार साहबके पास रह गए। इसीलिए सूबेदार साहबकी इतनी सहृदयता थी क्या? इसीलिए दोपहर रातको उसे घर जानेकी याद आई? एक कम्बल अगर कोई जेलसे बाहर चालान करना चाहे, तो उसे और तीन कम्बल सहकारियोंको दे देने पड़ेंगे। जेलके बाहर चीजें चालान करनेका यही प्रचलित नियम है। ऐसा नहीं होनेसे पकड़ा जानेका डर है; इस तरहसे अनायास तीन कम्बल घर ले जानेका लोभ संवरण करना सूबेदार साहबके लिए असम्भव है। तिसपर अभी लड़ाईके जमानेका बाजार।··

फिर पहली ही जगहपर आ बैठा। राष्ट्रके विशाल षड्यन्त्रोंमें जेलका स्थान नगण्य नहीं है। चक्केमें चक्का,—इन्हींमें एकके सामने बैठा हूं। जेल गेट बड़ा कठोर और प्राणहीन; सभी कुछ नियमित रुटीनकी तरह चल रहा है, घड़ीके कांटेके समान। और घड़ीकी मशीनमें खास-खास जगहोंमें जिस

तरह 'जुयेल' जड़े रहते हैं, उसी तरह इस चक्रमें भी दो हीरे हैं, गेटका सूबेदार और भीतरके सेण्ट्रल टावरका हेड बार्डर।····

इन्हीं चार पाँच घण्टोंमें जेलगेटकी एकरसता असह्य हो रही है। अँधेरेमें बार्डरोंके क्वार्टर तक घूम आनेसे जैसे इस एकरसतासे जरा छुटकारा मिला।···फिर वही वार्डरोंका दल,—घड़ीका काँटा देखकर दरवाजा खोलना और दरवाजा बन्द करना।···गेट पर वार्डर नहीं रखकर मशीनसे इन सब कामोंको करानेसे कैसा होता? एक ही कामकी पुनरावृत्ति जहाँ हो वहाँ मशीनकी सहायता लेना बिल्कुल सम्भव और समीचीन है।···

गेटके ऊपरके तल्लेसे एक वार्डर सीढ़ीसे उतर रहा है। गेटके दो तल्ले पर जेलके साहबका क्वार्टर है, उसीके सामने खुले बरामदे पर बन्दूक धारी वार्डर घण्टा बजाता है,—जाड़ा-गर्मी-बरसातमें, धूप-शीतमें, दिन-रात। हरेक घण्टे पर घण्टा बजाना तो है ही; उसके अलावे साहबके घुसने पर एक घण्टा बजाता है; गण्यमान्य अतिथिके जेलमें घुसनेके समय दो बार घण्टा बजाता। यह शायद अन्दर सब लोगोंको सचेत कर देनेके लिए, और गल्ती ठीक करनेके लिए काफी वक्त देनेके लिए। इसके बाद है बीच-बीचमें 'पगली' घण्टी। उस वक्त तो घण्टा बजनेका अन्त ही नहीं होता है। उस वक्त ठीक रविवारके गिरजाके घण्टे—दूरसे सुननेकी तरह सुनाई पड़ता है।···गिर्जा अपने दलको सम्हालनेमें मशगूल है और 'पगली' भी एक श्रेणीके स्वार्थकी रक्षा करनेमें लगी हुई है।···

····घण्टा बजानेवाला बार्डर दो घण्टे तक इतनी बड़ी जवाबदेहीका काम करके, गर्वके साथ गेटके सामनेसे चला जाता है। गेटके बाहरके सन्तरीने पूछा,—"भाई, तुम्हें इतनी देरी क्यों हुई? नए 'दफा' का बार्डर तो बहुत

पहले ही ऊपर गया था।" "और क्या कहते हो यार? ड्यूटी शुरू करनेके पहलेवाला वार्डर कह गया कि एक बजे जेलर साहबको पुकार देना। सोचा जेलर साहब शायद राउन्डमें निकलेंगे। अभी दरवाजे पर पुकारने जाकर देखता हूँ एकदम खफा। कहते हैं,—क्यों चिल्लाते हो? बड़ा आफिसर,—भाई जो करो वही शोभेगा। पहले गरम हो गये, फिर हुकुम दिया कि नए वार्डरको कह देना कि उन्हें जिसमें तीन बजे पुकार दे। यह वार्डर अगर नहीं पुकारे तो मजा हो। साहब खुद आके पुकारेगा। तब मजा निकलेगा।"....

गेटका सन्तरी बोला—"ठहरो कहाँ जाते हो? अरे यार खैनी-टैनी खाके जाओ।"

"नहीं भाई, अब जाके सोया जाय। रातमें खैनी खाके क्या होगा?"

यह कहके भी वह खैनीकी प्रतीक्षामें खड़ा रहा। उसने सिरकी पगड़ी खोल दी—शायद गरमीसे। खोपड़ी बिल्कुल गजी। गेटका सन्तरी बोला—"सिरमें ठण्डा तेल लगाओगे? सिर डण्डा होगा, जमादार साहब तेल छोड़ गया है। शायद बी-डिबिजनके कैदियोंका होगा। जरूर यह ठीकेदार साहबका नजराना है। खोपड़ी पर लगा लो। बाल जमेंगे और खोपड़ीमें मच्छड़ नहीं काटेंगे।"

इसका सिर खल्वाट होगा, यह उमीद नहीं की थी।....'मेरी स्टुवर्ट' के घुंघराले बालोंकी तारीफ देश विदेशमें थी। बधभूमिमें ले जाए जानेपर लोगोंने जाना कि यह 'घनकुंतल' अपना नहीं है। वह नकली बाल लगाती थीं।... पुलिस कान्स्टेबलका सिर खल्वाट कभी देखा है कभी याद नहीं आता। उनके माथेमें पगड़ी रहती है; संन्यासीके सिर पर जटा।....

—भाईजी और मैं, उस जर्मीदार अखौरीसिंहके बैठकखानेमें गए थे। उनके मैनेजरने मुलाकात करनेके लिए खत भेजा था।····धूर्त्त संताल 'मांझी' ने अपनी जमीन, जमींदारके हाथसे बचानेके लिए उसे महात्माजीको दान कर दिया था। जमीन जमींदारके मेलेके करीब है। मेलेमें नारी देहके रूपलावण्यका जो तंबूवाला बाजार है—वे तबू इसी जमीनके पास खड़े किये जाते हैं—कत्तारके कत्तार। इस बढ़ते हुए मेलेको इस तरफ भी जगह काफी नहीं थी। इसीलिए जमींदारकी नजर उस पर पड़ी थी। 'माझी' ने सोचा था—महात्माजीके लोग जमींदारके साथ लड़ें, उसके बाद उन्हें भी जमीन पर दखल नहीं दूँगा। पहले हम लोग उसके इस पेंचको नहीं समझ सके। बाबूर्चीने कहा था—वहां जमीन लेनेकी क्या जरूरत है। मैंने मैनेजरके नाम चिट्ठी दी थी, उसीके जवाबमें यह बुलाहट थी। बैठकखानेमें घुसने पर अखौरीसिंहको पहचान नहीं सका। उसके सिर पर टोपी नहीं थी—समूचा सिर चमकता हुआ खल्वाट। सिर्फ पीछेकी तरफ चुटियाके पास एक गुच्छा लम्बे केशोंका था। वही spiral की तरह घुमा-घुमाकर 'ब्रिलेन्टाइन' से सिरके सामने बैठा दिया गया था।··· खल्वाट सिरवालोंको क्या सचमुच बहुत रुपए होते हैं?····मैथेमैटिक्स टीचर रामेश्वर बाबू ज्यामिति पढ़ा रहे हैं। सिरके ठीक बीचमें बाल गायब। ब्लैकबोर्ड पर उन्होंने लिखा 'टेक ओ दि मिड्ल पोयेन्ट'। सारा क्लास हँसने लगा।····क्या इसीलिए पहले बनावटी बाल लगानेकी प्रथा थी? अखौरी-सिंहने मैनेजरसे अंग्रेजीमें कुछ कहा। मैनेजर साहबने पूछा—आप लोग मास्टर साहबके लड़के हैं क्या?—कांग्रेस वालन्टियरोंने माझीकी इस जमीन पर छप्पर डाला है। सुनता हूँ इधरके तंबूके बायकाटके लिए पिकेटिंग

करेंगे। जानते हैं न, कल रातमें दो वालन्टियरोंको पुलिसने पकड़ा है, इस तंबूसे आधी रातमें बाहर निकलनेकी वजहसे। शायद आप मेलेका पुलिस नियम जानते हैं। बारह बजे रातके बाद उस तंबूसे बाहर कोई नहीं निकल सकता है; बारहके पहले निकल आओ या सुबहमें निकलो। किनके पाले पड़े हैं, आपलोग? और आप लोग लड़ किसकी तरफसे रहे हैं? इस मांझीको दो चार बीघा जमीन दूसरी जगह दे देनेसे ही तो वह हम लोगोंकी तरफ हो जायगा। कांग्रेसके लिए चंदेकी भारी रकम चाहते हैं तो दे सकता हूँ, लेकिन अपनी इच्छासे अगर यह सब गोलमाल सिर पर लेते हैं तो,....”

“आदाब बाबू साहब”

घण्टा देनेवाला सिपाही जानेके समय मुझे क्यों आदाब करता है?

वह बोला, परसों दोपहरमें फांसी सेलमें मेरी ड्यूटी थी—देखा, बाबू खबरका कागज पढ़ रहे हैं। यह आदमी खुद भाईजीके बारेमें खबर देने आया है। बहुत देरसे ख्वाहिश हो रही थी इन सब वार्डरोंसे भाईजीके बारेमें पूछूँ। वार्डरोंका हरएक दल जब ड्यूटी खत्म करके निकलता था, तब इच्छा होती थी कि उन्हें पूछूँ उनमेंसे किसकी ड्यूटी फांसी सेलमें थी। लेकिन हिचकिचाहट होती थी—पूछ नहीं सका। ये लोग सभी शायद मेरी गवाही देनेकी बात जानते हों,—जेलमें ही मुकद्दमेका विचार हुआ था। क्या जाने यह लोग मेरे बारेमें क्या सोचते हैं!...

भाईजीके बारेमें खबर पानेकी इस अप्रत्याशित सुबिधासे बड़ी प्रसन्नता हुई। वार्डरको बहुत-सी बातें खोद-खोदके पूछने लगा। निहालसिंहके मार्फत जो खबरें मिलती थीं, उन्हें एक-एककर मिलाकर देखने लगा। खानेका अलग इन्तजाम हुआ है कि नहीं सो मालूम नहीं हुआ। तो क्या निहालसिंहने सब

रुपए खुद हजम कर लिए। भाईजीके लिए कुछ इन्तजाम नहीं किया। भाईजी को पेंसिल, कलम, कुछ भी खरीद कर नहीं दिया। बाबूजी कितनी देर तक सेलमें टहलते हैं, कब उठते हैं, कब स्नान करते हैं, कब सोते हैं, सभी बातों का जवाब वार्डरने दिया। ज्यादातर ऐसा मालूम पड़ा कि अन्दाजसे कह रहा है। असलमें उसने खुद कुछ खास तौरसे देखा नहीं। एक दिन शायद उसने देखा था कि बाबूजी बिल्लीको दही खिला रहे थे, हो सकता है। सच झूठ मिली हुई उसकी बातें सुननेमें अच्छी लगीं। कम-से कम यह सच है कि उसने भाईजीको देखा है।····वार्डर चला गया। पांवमें पट्टी या मोजे नहीं हैं— गर्मी कितनी है। खाकी हाफ पेंटके नीचे दोनों पांव धनुषकी तरह टेढ़े मालूम पड़ते हैं।

··· चीनी लोगोंके पांव।····दैत्यकी छाया जहां खत्म हुई है वहां दो चलते हुए पांव—अन्धकार—गेटके प्रकाशकी एक झलकसे आलोकित 'पिच' रास्तेका एक टुकड़ा—अन्धकारमय दीवाल—गेटके सींखचे—फिर गेटके अन्दर नजर पड़ी। घूम-फिरकर यह आलोकित अंश ही दृष्टि आकर्षित करता है। इसके बाहर इससे कितनी अधिक दूर तक फैला हुआ अन्धकार और योजन-व्यापी नक्षत्रखचित आकाश है। ये मेरी दृष्टि और मनको आकर्षित नहीं कर सकते हैं।····गेटके भीतर घुसनेपर हाल, दाहिने जेल आफिस, बायें जेलर और सुपरिण्टेण्डेण्ट दोनोंके बैठनेके कमरे। आफिसके बाहरकी तरफके सींखचोंपर लोहेका जाल लगाया हुआ। कैदियोंके आत्मीय स्वजनके आनेपर वे इस जाल लगे हुए सींखचोंके बाहर खड़े रहते हैं। इस जेलका इन्तजाम आश्चर्यजनक है! मिलनेवालोंको धूप और वर्षासे बचानेके लिए इसपर एक छप्पर भी नहीं है—जाल लगाया गया है कि कहीं कोई चीज लेने-देनेकी

कोशिश न हो। अनभिज्ञ मिलनेवाले एक तो बहुत खर्च और परिश्रम करके जेल गेटपर आते हैं, उसके बाद दरखास्त करनेके हंगामे और दरखास्त मजूरी के खर्चसे भौचक्के हो जाते हैं। इन सब अथाह समुद्रोंको पार करके घण्टापर-घण्टा प्रतीक्षा करके जब कई मिनटके लिए सींखचोंके पार धारीदार पोशाक पहने कैदीकी एक रूखे केशोंवाली शीर्णमूर्ति देख पाते हैं, तब यह सोचने में भी समय लग जाता है कि यह उसके अतिपरिचित प्रियजनकी मूर्त्ति है! ....साधारण मेंट और वार्डरोंकी अपमानसूचक बातचीत इनपर इत्मीनानसे बरसती है। कैदीकी पोशाक, खाकीकी वर्दी और पगड़ी, सींखचे, ताला, सी० आइ० डी० सब मिलकर आबोहवाको ऐसा कुछ कर देते हैं कि यहाँ भौचक्का नहीं होना ही आश्चर्यकी बात है। दो-चार बातोंके बाद कहा जाता है कि वक्त हो गया। मिलनेवालोंकी आँखोंके सामने कुछ देर बाद आती हैं प्रिय परिजन की दो मूर्त्तियाँ; एक उस समयकी जब वह सींखचोंके सामने आता है,—उत्सुक, लजाया हुआ, अप्रतिभ चेहरा; और एक चले जानेके समयकी—करुण, असहाय, आशाहीन! उस समयका जोर डालकर चेहरेपर हँसी लानेका व्यर्थ प्रयास, हृदय फटकर रोनेसे भी अधिक मर्मभेदी होता है।....

१९३३ में पिताजीसे मिलने हजारीबाग जेलमें गया था। चाचीने पिताजीके खानेके लिए एक 'टिफिन कैरियर' में सामान भरकर साथ कर दिया था। जाकर सुना कि उस दिन अपर डिवीजनके कैदियोंसे मिलनेका दिन नहीं था, "सी" क्लास-कैदियोंसे मिलनेका दिन था। कई मिलनेवाले, स्टेशनपर टिकट घरके सामने जैसी होती है ठीक वैसी ही, ठेल-ठाल कर रहे थे। सींखचे के भीतर भी बहुत-से कैदी—खिड़कीके सींखचों तक आनेके लिए धक्कम-धक्का कर रहे थे। हँगामेमें कौन क्या कर रहा था, किसे कह रहा था, समझना

मुश्किल था। एक प्रौढ़ा स्त्री आँव-आँव करके रो रही थी, वह रोनेके साथ-साथ गाँवकी बोलीमें क्या कुछ बोल रही थी, उसका एक शब्द भी उसका लड़का समझ सकता था कि नहीं, इसमें सन्देह है। एक बूढ़ा मुंडा, कई अमरूद और एक ठोंगा फुलौड़ी लेकर आया था। वह अपने लड़केको उसे खाने देनेके लिए वार्डरकी खुशामद कर रहा था, वार्डर दर बढ़ा रहा था—"डाक्टर साहबके मजूर नहीं करनेपर कैसे दूँ? 'सी' क्लासवालोंको बाहरकी चीजें लेनेका हुक्म नहीं है। 'सी' क्लास कैदीको खानेकी चीजें देनेके लिए मुझे एक रुपया देना पड़ेगा। डाक्टर साहबकी मजूरीके लिए एक रुपया और। मेरी नौकरीमें गोलमाल हो सकता है—यह सब काम बिना पैसेके क्यों करूँगा?" बहुत आरजू-मिन्नतके बाद एक रुपएमें बात तै हुई! यह शायद दरिद्र मुंडाका एक वर्षमें जमा किया हुआ धन था। रुपया सिपाहीजीने पगड़ीके भीतर खोंस लिया। लेकिन यह फुलौड़ीका ठोंगा ठीक जगहपर पहुँचा कि नहीं, कौन जाने?....

....गेटके बाईं ओरकी दीवालमें एक शीशेके फ्रेममें नोटिश बोर्ड है। उसके अन्दर काले रंगके पट्टपर बहुतसे सादे कागज चिपके हुए हैं। मालूम नहीं किस बातकी नोटिस है। दूसरे जेलोंमें देखता हूँ, सिर्फ जेल कमिटीके सदस्योंके नाम लिखे रहते हैं। इतने नोटिस! मालूम होता है, आइ० जी० जल्द ही जेल निरीक्षणके लिए आवेंगे। नोटिस बोर्डके नीचे टेलीफोन रिसीवर है। इसके पश्चिम ओर सटी हुई एक वजन करनेकी मशीन है—जैसी स्टेशनों में रहती है और ठीक गेटके भीतरसे एक रेलकी लाइन गई है—('नैरो गेज'की लाइनके समान चौड़ी)....डी० एच० आर० की किशनगञ्ज लाइनमें एक बार छोटे इञ्जिनसे एक गायको धक्का लग गया था। चुंगी पाड़ाके नजदीक गाड़ी

'डिरेल्ड' हो गई थी।····जेल फैक्टरीकी चीजें लाद कर ट्राली इसी गेटकी लाइनपर चलती है। लोहेकी लाइनके बगलमें कहीं-कहीं गोबर गिरा हुआ है। मालूम होता है, बैलगाड़ी गई है। साहब और हाकिम आवेंगे इसलिए सबको घबराया हुआ देख रहा हूँ, लेकिन गोबर साफ करनेकी बात किसीको नहीं सूझ रही है। शायद सूझी भी हो, लेकिन सबेरे कैदियोंके आनेके पहले साफ कौन करेगा? महामान्य वार्डर साहब लोग इस हेय कर्मको क्यों करेंगे? रेल की लाइन, नोटिश बोर्ड, वजनकी मशीन, टेलीफोन, पत्थरसे बनी हुई सहन, सब मिलकर इस जगहको एक रेलके स्टेशनकी तरह बनाए हुए हैं। मालूम होता है जैसे गाड़ीकी प्रतीक्षामें प्लेट-फार्मपर कम्बल बिछाकर बैठा हूँ।····

····सौरीनको कहा कि रामकृष्ण मिशनकी दाह-सत्कार कमिटीको खबर कर दे—जिसमें सब खादिया बाग घाट पर रहें। छोटा शहर; अधिकांश लोग किसी न किसी तरह गवर्नमेन्टसे सम्बद्ध हैं—वकील, मोख्तार, किरानी। उन सबको गवर्न्मेन्टके वर्त्तमान मनोभावको देखकर चलना होता है। अगर वे नहीं आए? पुलिसके डरसे नहीं भी आ सकते हैं। तब? तब जेलके लोग ही दाह करेंगे। ये लोग पाँच रुपए और मोटर-लारी तो सबको देते हैं। सौरीनका मतलब देखा, जलूस निकालनेका। बृहस्पतिवारको कलक्टर साहबसे मैं मुलाकात करने गया था। कलक्टर साहबने इस शर्त्त पर मृत देह मुझे देना स्वीकार किया कि कोई जुलूस न निकले। लोग मानेंगे नहीं। श्मशानघाट पर जाकर अगर सभी जमा हों—तो चाहे कितनी ही बड़ी भीड़ क्यों न हो, कुछ आना जाता नहीं। तब मेरी बात रह जाय। लेकिन रोकूँगा किसे? जूट मिल यूनियनके सक्रेटरी भाईजी हैं, एक्कावानोंके यूनियनके प्रेसिडेन्ट भाईजी हैं—इन सब यूनियनोंके सदस्योंको कौन रोकेगा?

कलक्टर साहबको क्या जुबान दी है या नहीं दी है, यही बड़ी बात है क्या ? नहीं। हो जुलूस। भाईजीकी मृतदेह, बिलू बाबूकी मृतदेह, शहीदकी मृतदेह, 'मास्टर साहबके बेटे' की मृतदेह, इसमें भी लोग जुलूस नहीं निकालेंगे तो किसमें निकालेंगे ?····गाड़ी, मोटर, अपार भीड़—फूलकी माला—देवदारके पत्ते—घर-घरसे गंगाजलकी वर्षा हो रही है— दो नल्लेसे कई ताड़के पंखे गिरे, उसको लेकर छिनाझपटी—भीड़—ठेलठाल—हुड़ाहुड़ी—उसके बाद अन्तहीन नर-प्रवाहकी सर्पिल गति।····नीरव—'गाँधीजीकी जय' नहीं—'बिलू बाबूकी जय' नहीं—शोक या मर्सिया गीत नहीं—विशृङ्खल जन समुद्रकी उद्दण्डता नहीं। है नीरव शोककी निष्क्रियता—एक 'राष्ट्रीय' परिवार' के एक आदमीको छोड़कर सभीके प्रति असीम सहानुभूति—सुप्त देशात्मबोधको धिक्कार भस्मके दृश्यमान शीतलताके बीच व्यर्थ क्रोधकी जागरूक अग्नि। एक इशारेमें यह असहाय शान्त जनता हिंस्र और उन्मत्त होकर मुझे फाड़कर टुकड़े-टुकड़े करके फेंक दे सकती है।····सम्पूर्ण हड़ताल।···चाचीके घरके सामने जुलूस एक क्षणके लिए रुका। क्या चाची एकबार मृत शरीरके मुख परसे फूलोंको हटाकर उस ओर देख सकेगी ? सिर्फ मुख खुला होगा। गला मैं कपड़ेसे ढँक दूँगा।······· फूल चन्दनसे मुखकी वीभत्सता छिप गई है। मुखके कोनेसे कब्र आके गिरी है, कई बूँद लाल रंगकी लार—सूखकर अब रक्त-चन्दनके तिलककी तरह दीख पड़ती है।····नहीं, चाचीके घरके सामनेसे कभी जाने नहीं दिया जायगा।... श्मशान घाट पर विस्तीर्ण जन समूह—लाल पगड़ी चारों ओर छा गई है—बन्दूक धारी शरीर रक्षकके साथ मैजिस्ट्रेट और पुलिस साहब मोटरकारसे उतरे।··· दाहकर्मके विशेषज्ञ मतनीदा चिता सजा रहे हैं। वह सभी उद्वेग

और भाव प्रवणतासे भरे हैं। पूछा उसने—"म्युनिसिपैलिटीकी लकड़ी मालूम पड़ती है? मृतदेह जलानेके लिए जबसे लकड़ीका स्टाक रक्खा गया है, तबसे यही लकड़ी देखता हूँ। एकदम घुन लग गया! होगा नहीं? थर्ड क्लास म्युनिसिपैलिटी है—लकड़ी खर्च ही कहाँ होती है?" मृतदेह जलानेके दिन 'मनतीदा' को एक बोतल देशी शराब देना होता है। सभी यह बात जानते हैं। आज भी मनतीदा' मुझसे शराब माँगेगा क्या?···खाक जैसी चीजके लिए क्या छीना-झपटी! महिलाएँ आँचलमें बाँध लेती हैं—कोई-कोई लड़कोंके मस्तकमें लगा देती हैं।···इस समय क्या कोई माँ अपने लड़केको मन ही मन कह सकी है—'बिलू बाबूकी तरह होओ'।···कभी बोल नहीं सकती है।········एक बार चेचक लिए हुए भाईजी और मैं साथ ही बेलगाड़ीसे आकर आश्रममें घुसे। माँके हाथमें पंखा था—दोनों भाई दो बिछावन पर पड़े थे। मनकी उत्कण्ठा और गहरी वेदना दबानेकी चेष्टा करके माँने कहा—"तुम लोग मुझे पगली बना दोगे?" माँने ठीक ही कहा था।········क्षण-भरमें जनताका संयम टूट गया—'जय गांधीजीकी जय'!—'जय बिलू बाबूकी जय!' 'नौकरशाही नाश हो!' जय-ध्वनिके निर्घोषसे आकाश व्याप्त हो गया। मिलके उस कुलीने ठीक समय पर नारा लगानेका नेतृत्व ग्रहण किया। दुबले-पतले आदमीकी आवाज इतनी तेज कैसे होती है? वह कहता है 'बन्दे' जनता कहती है 'मातरम्', वह कहता है—'बिलू-बाबूकी' जनता कहती—'जय'। हरेक दफा कहनेके समय वह दाहिना हाथ ऊपर उठाता है,—मालूम होता है जैसे तर्जनीसे आकाशके किसी अज्ञात लोककी ओर दिखला रहा है।···पुलिसने भीड़ हटा दी। 'हल्के लाठी चार्ज' की आवश्यकता नहीं हुई। कुलियोंके नेताकी आवाज फट गई। हाथ

ऊंचा करके बीच-बीचमें जय-ध्वनि करनेकी चेष्टा करना है ; जिससे हवा भरे रबर टायरमें अचानक छेद हो जानेसे जैसी आवाज होती है, वैसी ही एक आवाज निकलती है।········

जिधर जेल सुपरिन्टेन्डेन्टका घर है, जेल गेटके उसी कोनेमें सारी दीवालमें अनेक प्रकारके दण्ड देनेके यन्त्र टंगे हैं—बहुत किस्मकी हथकड़ियां, बेड़ियां, डण्डा बेड़ी, सिकली बेड़ी। किसीने जेलमें वार्डरके साथ रुखाईसे बात की है, किसीने शायद साहबको दिखला दिया है कि पलेमें साढ़े पांच छटांक चावलकी जगह सिर्फ साढ़े तीन छटांक चावल अंटता है। किसीने शायद झगड़ा किया है कि तीन महीनेसे कुम्हड़ेकी तरकारीके सिवा और कोई तरकारी उन्हें क्यों नहीं दी गई, किसीने शायद एक बेल तोड़ लिया है—इस तरहके असंख्य सगीन, जेलके जुर्मोंकी सजा देनेके लिए ये सभी साज-सरजाम हैं। कई बड़े-बड़े पीपोंमें सीसे अधिक पके बांसकी लाठियां खड़ी करके रक्खी हैं। उसकी बगलमें एक 'स्टैन्ड' के छेदमें बहुत-सी बेंतकी मोटी लाठियां रक्खी हैं। हाथमें लटकानेके लिए लाठियोंके सिरे पर नेवारका फंदा लगा हुआ है। दीवालमें ऊपरकी ओर टंगी हुई हैं, अनेक पुलिसके बेटन और दाहिनी तरफ कोनेमें दीवालके 'हुक' में टंगी हुई हैं, कई लाल बाल्टियां उन पर लिखा हुआ है Fire। एक ओर बांसकी नोक पर लगे हुए कई दर्जन मशाल जमा किए गए हैं। रातमें गिनती मिलान जब किसी भी तरह नहीं हो सकता है तब इन्हीं मशालोंको किरासन तेलमें भिगोकर वार्डर लोग कैदी खोजनेकी कोशिश करते हैं। लालटेन या टार्च उनके हाथोंमें देनेसे काम चल सकता था, लेकिन सो नहीं जितने सब········

····एक बार कैदी भागनेका रिहर्सल हो रहा था। पगली घण्टी बजी ;

साहब सेन्ट्रल टावर पर खड़े थे। वार्डर लोग साहबको अपनी हुशियारी दिखानेके लिए मशाल लेकर इधर-उधर दौड़ रहे थे—गाछके नीचे और पाखानोंके ऊपर ही उनकी नजर ज्यादा है। योगीलालने वार्डरसे चिल्लाकर सुपरिन्टेन्डेन्ट साहबको पूछा "सुपरिन्टेन्डेन्ट साहब, हे सुपरिन्टेन्डेन्ट साहब, कैदी सब भगा है या पिरेकटीस पगली है ?" खोजना खत्म होने पर सुपरिन्टेन्डेन्ट हम लोगोंके वार्डमें आए। हम लोग सभी उस समय भले लड़केकी तरह अपने-अपने बिछावन पर थे। मामला और ज्यादा दूर तक नहीं पहुँचा।........

ढं-ढ-करके दो घंटी बजी।

और सिर्फ तीन घण्टे। आजकल 'नए टाइम'से साढ़े पांच बजेसे पहले सूर्योदय शायद नहीं होता है। उसके बाद ?....सूर्योदयके पहले ही इन लोगों का सब काम खत्म हो जाना चाहिए। क्योंकि सूर्योदयके साथ-ही-साथ जेलका [illegible]

[illegible]

हो जायगा।....

भाईजी अभी क्या कर रहे हैं ? शायद सींखचोंको पकड़कर अन्धकारमें नक्षत्रखचित आकाशकी ओर ताक रहे हैं और आकाश-पातालकी सोच रहे हैं। मेरे बारेमें क्या एक बार भी सोचेंगे ? भाईजी मुझे कभी गलत नहीं समझेंगे। इसके बारेमें भाईजीके साथ अगर साफ-साफ बातें कर सकता !

मैं जानता हूँ कि भाईजीके पास अपने आचरणको साफ तौरसे समझानेकी जरूरत नहीं है ; किन्तु शायद इससे मनका बोझ कुछ हल्का होता। उनकी पार्टीका प्रोग्राम कारगर करनेका अर्थ ही है परोक्षरूपसे फासिस्ट शक्तिको दृढ़ करना—यह क्या भाईजी नहीं समझते हैं ? लेकिन सभी युक्तियोंको परास्त करके दिलके अन्दर कहीं जैसे खच् खच् करके कुछ काट रहा है। शायद युक्तिहीन भावप्रवणताका अहेतुक अनुताप। मेरी अपनी पार्टीका स्थानीय शाखाके मेम्बरोंका भी मत है कि भाईजीके विरुद्ध मेरा गवाही देना ठीक नहीं हुआ ; भाईजीके विरुद्ध होनेकी वजहसे नहीं ;—उनका मत था कि हम लोगोंका कर्तव्य देशके लोगोंको उनका भ्रम आँखोंमें अगुली डालकर दिखा देना है, उन्हें समझाना है ; उन्हें पुलिससे पकड़वा देना हम लोगोंके कर्तव्योंमें नहीं है। संसारमें और कोई चाहे जो सोचे ; लेकिन मेरी पार्टीके लोगोंका मेरे कार्यके विषयमें यही मत है—यही unkindest cut of all ( सब से गहरी चोट ) है। मार्क्सवादका सूक्ष्म विश्लेषण शायद मैं ठीकसे नहीं समझता हूँ। जब तक भाईजीके दलमें था, भाईजीका हुक्म तामील करता रहा। उन्हींकी बात वेद-वाक्य समझता रहा। १९४२ ई० की फरवरीमें भाईजी हजारीबाग जेलमें छोड़ दिए गए। सिक्यूरिटी बन्दीके मुकद्दमेकी scruting हो रही थी। एक हाइकोर्टके जजपर इस कामका भार था। क्या नाम था—महाराष्ट्री जस्टिस भाटे। भाईजीके छूटनेके बाद अप्रैलमें हम लोगोंको देवलीसे हजारीबाग जेल लाया गया। सुना कि सबको अपने-अपने जिलेमें ले जाया जायगा : उसके बाद मुझे १८ जूनको छोड़ा गया। फासिस्ट विरोधी दलवालोंको अब जेलमें रखनेकी जरूरत नहीं है, यही उस समय सरकारका मतलब था।···जेलसे निकलनेके समय इतना आनन्द और

किसी दफा नहीं हुआ। सर्वहाराके जन्मवैरी फासिज्मके विरुद्ध अपनेको लगा सकूँगा, जरूरत पड़नेपर इसके लिए हँसते-हँसते प्राण विसर्जन कर सकूँगा—इस सुयोगके देनेके लिए सरकारके प्रति कृतज्ञतासे मन भर गया। स्पेनके कार्यकर्त्ताओंकी कहानी, लालचीनके मरण-विजयी वीरोंकी कहानी, माओसे टुंग की बहादुरी और एकनिष्ठता, चन्द्रदेवके क्लासका रोजका भाषण, इन सबोंने मिलकर शरीरके सभी स्नायुओंमें उत्साहकी आग फूंक दी। मेरे जिलेके कितने काम मेरी ही प्रतीक्षा कर रहे हैं;—वहां लोग महात्माजी और मास्टर साहब को छोड़ और किसीको जानते ही नहीं। अन्धविश्वासकी इस पड़ती जमीनपर मुझे युक्तिकी फसल लगानी होगी। आश्रम लौटकर एक बार माँसे मिले बिना भी नहीं चलेगा—मेरे औपरेशनके लिए माँ बहुत चिन्तित थीं। एक बार वहां सबसे भेंट-मुलाकात करनेके बाद काम शुरू किया जायगा। मोटर-बस कोडरमाके स्टेशन,—गया, वेटिङ्गरूममें कितना मच्छड़ है!—किउल—साहबगञ्ज, मनिहारीघाट, कटिहार—राहका अन्त नहीं।···

वही व्याकुलता आज मुझे इस हालतमें ले आयी है।·· भाईजी माँ··· जनमन ·· और सबसे दुःसह, मेरी पार्टीके स्थानीय कामरेडोंका मन। भूल! सारी दुनिया भूल कर सकती है, लेकिन, मुझसे भूल नहीं हुई। उस १९४२ के अगस्तकी घटनाओंके वातावरणमें अपने कार्यका विचार करना होगा।···· एक विद्युत् शक्तिने सहसा सारे देशके लोगोंको दीवाना और भौंचक्का बना दिया। जहां जाओ, लगता है जैसे पागलखानेका फाटक खोल दिया गया है। विक्षुब्ध और मतवाली जनता क्या करे सो समझ नहीं पाती है। मीलके मील रेल लाइनें उखाड़ फेंकी हैं—लोहेकी रेलकी लाइन, भारी-भारी रेलकी पटरियाँ और भी क्या-क्या चीजें दूरकी नदीमें फेंक आती है। टेलीग्राफका तार काटना

पोस्ट आफिस और शराबकी दूकानें जलानेका भार गाँवके लड़कोंपर है। वयस्क लोग इस तुच्छ कामको करके हाथ खराब करना नहीं चाहते हैं। तार काटना इतना आसान है, टेलिग्राफका तार इतनी जल्द टूटनेवाला है, सो मालूम न था। प्लास, औजार, कैंची, कटार किसी चीजकी जरूरत नहीं है। रस्सी लगाकर लड़के झूल पड़ते हैं, कहीं भी मरोड़ कर तोड़ देते हैं। बड़ी उम्रके लोग नया कार्यक्रम चाहते हैं। और क्या किया जाय, समझ नहीं पाते हैं। स्टेशन खास महालकी कचहरी, सब रजिस्टरी आफिस और थानाका पर्व समाप्त हो गया है। हाथमें कुछ काम नहीं है। वे लोग जहाँ दल बाँधकर जाते हैं, वहीं उनके सामने शक्तिके स्तम्भ भूमिसात् हो जाते हैं और अत्याचार के प्रतीक सब सिर झुका लेते हैं। सरकारी कर्मचारी जनताकी खुशामद करते हैं, मारवाड़ी खुलके चंदा दे रहे हैं, जमींदारकी कचहरीका नायब उन्हें एक वर्षका खजाना माफ करनेका आश्वासन देता है, खास महल कचहरीका मैनेजर उनके भोजनका प्रबन्ध कर देता है, दारोगा साहब गांधी टोपी सिरपर रख कर तिरंगा झण्डा लेकर उनका मनोरञ्जन करनेको चेष्टा करते हैं, चौकीदार अपनी वर्दी जलाकर नौकरीसे इस्तीफा देता है। गरीब किसान खुश हैं कि उन्हें जमींदारका खजाना और नहीं देना पड़ेगा, चौकीदारी टैक्स नहीं देना पड़ेगा।···कुछ नया काम करनेका सुयोग नहीं मिल रहा है।····फारबिसगञ्ज लाइनके जिस अंशकी लाइन ठीक थी, उसी अंशपर इञ्जिन ड्राइवर और गार्ड जनताके हुक्मसे गाड़ी चला रहे हैं। हरएक स्टेशनपर टिकटघरके सामने लिख दिया गया है, टिकट लेकर सफर करना मना है। गढ़बनैली स्कूलके कई छात्र लगातार चिल्ला रहे हैं "गाड़ी किसकी?—हमारी"। "स्टेशन किस का?—हमारा" "इञ्जिन किसका?—हमारा"। एक दल आदमी टिकट

चेकरका काम कर रहे हैं—जिनके पास टिकट होगा उन्हें गाड़ीसे उतार दिया जायगा ! एक मुसाफिरके पाससे 'वीक एण्ड रिटर्न'की अधकट्टी निकली, "उतर जाओ, अभी उतरो । तुम स्वराज नहीं चाहते हो ।" वह आरजू-मिन्नत करता है । कहता है कि यह पुराना टिकट है । कौन उसकी बात सुनता है । चेन खींचकर गाड़ी खड़ी करके उसे उतारा गया । कुछ दूर जाकर बीच रास्तेमें फिर गाड़ी ठहरी । तिवारीजी इधर कहीं मीटिंग करने गए थे । यहांपर दो घण्टे तक प्रतीक्षा करनेके बाद दूरमें, कांग्रेस झण्डी लगी हुई तिवारीजीकी बैलगाड़ी दीख पड़ी । तिवारीजी आकर गाड़ीपर चढ़े । "इन्क्लाब जिन्दाबाद"की ध्वनिसे आकाश गूँज उठा । गाड़ी चली ।—हर स्टेशनपर कुर्सी, टेबिल, घड़ी, station master's office लिखा हुआ साइन-बोर्ड, बड़ी-बड़ी बही जमा करके जलायी जा रही हैं । रेल-कर्मचारियोंकी सहानुभूति भी इन लोगोंके साथ मालूम पड़ती है । कहीं बाधा देनेकी कोशिश नहीं है, बहुत जगहोंमें अपनी इच्छासे सहायता कर रहे हैं । एक छात्र प्लेटफार्मकी एक रोशनी लेकर आलोनृत्यकी भंगीमें नाचकर सबका मनोरंजन करने की कोशिश करता है । कसबा स्टेशनपर स्कूल, कालेजके छात्रोंने टिकट चेकर बच्चीसिंहको चन्दा करके, पीटके बहुत दिनोंका बदला लिया ।···

···चुकरी थानामें "महात्माजीका इजलास" बैठा है । अब और कोई सरकारी इजलासमें नहीं जायगा । दरोगा बाबूको गिरफ्तार किया गया है । "कौमी जेल" में ले जाया जायगा । दरोगा बाबूको दूसरे दर्जेका कैदी बनाया गया । "पूरी खिलाना रोज, और देखना, उसकी स्त्री जहां जाना चाहें वहां पहुँचा देना । बहुत हिफाजतसे ।" जेल खोलकर कैदी भाग रहे हैं । जेलखाने पर कांग्रेसका झंडा । सरकारी खजानेके नोट जलाए जा रहे हैं ।

पश्चिममें गोरखपुर जिलासे लेकर पूर्वमें पूर्णिया तक सब जगह देशकी यही हालत है। सम्पूर्ण अराजकता—फासिस्टोंका राज्य—राष्ट्रीय शक्तिकी भारी बर्बादी—असयत, विश्रृङ्खल, अदूरदर्शी—और दुर्लभ निःस्वार्थ त्यागकी महिमासे महान। लाल पगड़ी, काला चेहरा, 'हेलमेट' पहने हुए लाल मुख, बन्दूक, टामीगन, कुछ भी जनताको विचलित नहीं कर सकती हैं।····दूर पर बीरगांव स्टेशनके हाटमें टामीगनकी आवाज होती है—इधर भुट्टेके खेतमें उसकी नकल करके लड़के स्टेशनके 'फग सिगनल' चटखा रहे हैं। क्यों ऐसा कर रहे हैं, वे नहीं जानते। होलीके दिन गांव-भरके लोग नशेमें जिस तरह हो जाते हैं, वे लोग भी उसी तरह हो गए हैं। इस अधीर उत्तेजनाको भाईजीका दल क्रांतिका 'ड्रेस रिहर्सल' कहता है,—यही शायद 'क्रान्तिकी प्रचेष्टा' है। बीर गांवकी क्रान्ति—प्रचेष्टाका नेता कौन? बिनायक मिश्र। वह सब घाटका पानी पीता है। आसपासके गांवमें सत्यदेवकी कथा सुनाता है, छट पर्वमें पुरोहिती करता है, हिन्दू मिशनका लेक्चर देता है। क्रीस्तान सथालोंकी शुद्धि करता है, कांग्रेस मिनिस्ट्रीके समय मन्त्रीके 'टूर' में मोटरमें उनकी देहसे देह सटाके बैठता है। वह हाथ देखकर, विवाहका दिन देखकर, यात्रा आदि बतला करके होमियोपैथी, आयुर्वेदी और 'टोटका' दवा देकर अच्छा पैसा पैदा कर लेता है। एक मोटी हिन्दी किताब ही उसकी पूंजी है। इसमें गोरख-धन्धेसे लेकर टोटका दवा तक सब कुछ है। धांगड़-बस्तीमें, कालीपूजाका मन्त्र पढ़नेके समय इसी पुस्तकसे हिन्दीमें रामायणकी कहानी पढ़ देता है। इसी किस्मके नेतृत्व, इसी संगठन, ऐसे ही समयमें 'क्रान्ति' होगी? भाईजी वगैरहको कौन यह बात समझावे? मैंने कुछ भी अन्याय नहीं किया है। सिर्फ अपना कर्त्तव्य निभाया है। और मेरे गवाही नहीं देने पर भी

दूसरा कोई गवाही देता। सरकारको आदमीकी कमी नहीं है। फर्क यही है कि मैंने गवाही दी है, राजनैतिक सिद्धान्तके कारण और कर्त्तव्यके लिए; और दूसरे लोग देते लोभमें पड़कर। ··· भाईजीके साथ अगर इसके बारेमें जी खोलके आलोचना कर सकता! नहीं, वह बेकार होता। मैं बहुत कुछ कह जाता; और भाईजी चुपचाप धैर्यके साथ उसे सुनकर बीच-बीचमें कुछ हँस देते। या शायद एकाध ऐसी बात कहते जिससे मेरी दलीलें गड़बड़ा जातीं। इस मृदु हँसीसे बाएँ गालमें गड्ढा पड़नेसे ही मैं समझ जाता हूँ कि मेरी झटसे गड़नेवाली दलीलें उनकी दृढ़ विचार-शक्ति पर मामूली दाग भी नहीं डाल सकती हैं। हँसी मुझे हरानेके लिए नहीं; वह केवल मुझे निरस्त करनेके लिए होती है। दो-एक छोटे सवालोंके बाद मेरी तर्ककी साध मिट्टीमें मिल जाती है।···

गत सप्ताह जब भाईजीके साथ मिलने आया था तब यह प्रश्न भाईजीसे मैंने पूछा नहीं;—तर्कमें पराजित होनेके डरसे नहीं, संकोचसे। वह क्या अपराधीके मनका सकोच था? नहीं, मैंने कोई अपराध ही नहीं किया। तब अपराध जनित संकोच मेरे मनमें कैसे आवेगा? इन सब बातोंको छेड़ना अच्छा नहीं लगता—इसीलिए सकोच था। अन्तिम मुहूर्तकी प्रतीक्षामें जिसे आँगनमें तुलसीके नीचे लाया गया है, उससे क्या पूछा जा सकता है कि वसीयत कहाँ रखी गई है। नहीं भाईजीको समझानेकी जरूरत नहीं है। वह मेरी स्थिति ठीक समझ गये हैं।···

खाकी पैण्ट पहने एक कमसिन आफिसर गेटके अन्दर घुसा। मालूम होता है असिस्टैण्ट जेलर रातके 'राउण्ड'में निकला है।

···गत सप्ताह भाईजीके साथ उसके सेलमें ही मुलाकात की गई थी—साथमें सी० आ० डी० सज्जन थे। एक वार्डर पहलेसे ही वहां खड़ा था। उन लोगोंके सामने और क्या ज्यादा बातें होंगी? मेरे हाथमें रूमालमें बंधे कुछ फल थे। अन्दर जानेके समय सी० आइ० डी० ने मजाक करते हुए कहा "देखियेगा महाशय, उसमें कोई गोलमाल चीज तो नहीं है। आखिर आप नौकरी खाइयेगा। मालूम होता है इस देशमें बगालीकी नौकरी; आज कलका क्या हाल है सो तो जानते ही हैं? इस डिपार्टमेंटमें क्या शौकसे आया हूं।" रूमाल खोलकर उसे दिखाने जानेपर बोला,—"छोड़िए, छोड़िए, मैंने यों ही कहा था। आप भी वैसे ही हैं। हम लोग आदमी पहचानते हैं महाशय।" सी० आइ० डी० भी मेरा विश्वास करता है। इतना बड़ा 'सर्टिफिकेट' क्या एक राजनैतिक कार्यकर्त्ताको मिल सकता है? मैं इतनेके लिए तैयार न था। भाईजीके विरुद्ध गवाही देनेके बादसे इन लोगोंका मुझपरसे सन्देह हट गया है।···भाईजी सेलमें सींखचोंके पीछे खड़े हैं। रूखे बाल;—काफी दुबले हो गए हैं; नाक तलवारकी तरह खड़ी हो गई है; शरीरका रङ्ग पहलेसे जैसे साफ हो गया है, हाथ-पैरमें खाज-खुजलीके दाग। उनका हंसता हुआ चेहरा, उत्सुकता भरी कोमल दृष्टि, मुझे सकोच करनेका मौका नहीं देती है। पहले वही बोले "रूमालमें क्या है?" पहले-पहल बातें शुरू करनेका सकोच मिट गया—"चाचीने भेजा है।" "अच्छा? चाची वगैरह कैसी हैं? कुछ कहला भेजा है क्या?" पहले सोचा कि सच्ची बात कह दूं कि चाचीने तो नहाना-खाना छोड़ दिया है; नहीं, क्यों अभी भाईजीके स्नेहातुर मनको बेकार परेशान करूँ। बोला, "हैं, एक तरहसे; आपके बारेमें हमेशा बोलती हैं।" चेहरा देखनेसे मालूम पड़ा कि भाईजी मेरी सच्ची बात छिपानेकी कोशिशको

समझ गए हैं। सी० आइ० डी० ने कहा—"दरवाजा खोल दीजिए। भीतर जाकर क्यों नहीं बैठते हैं? मैं बोला,—"ठीक है, रहने दीजिए।" लेकिन वार्डरने आकर दरवाजा खोल दिया। भीतर जाकर भाईजीके कम्बलपर बैठा। ...उस दिन मैं स्वय कोई प्रश्न नहीं कर सकता था। जैसे बातें खो गई हों। भाईजीने मेरे मनकी हालत समझी थी। वह स्वयं मुझे कितनी ही बातें पूछने लगे; मैं जवाब देता गया। आनेके समय भाईजीने कहा था—"माँसे मिलना।" मेरे साथ भाईजीकी यही आखिरी बात थी। उनका यह अन्तिम अनुरोध भी मैं नहीं पूरा कर सका। माँ रोते-रोते मुझे क्या क्या कहेंगी, यह बात सोचकर ही मैं सिहर उठा। भाईजी मेरे मनकी बात इतना समझते हैं, लेकिन यह नहीं समझ सके कि अभी माँ के साथ मिलना मेरे लिए कैसे सम्भव हो सकता है। वह जानते हैं कि मुझे क्या अच्छा लगता है, क्या नहीं अच्छा लगता है। मैंने भाईजीको एक बार मनके लायक एक कविता लिख देनेके लिए कहा था। "मैं बड़े-बड़े कवियोंका करुण सुर समझ नहीं सकता हूँ। इसीलिए भाईजीने मेरे समझने लायक कविता लिख दी थी।

मैं सबका पूर्ण अधिकार चाहता हूँ,
थोड़ेमें सन्तुष्ट कभी नहीं होऊँगा,
दूसरेके धनसे पुष्ट धनिकोंकी उपेक्षा साधना;
श्रमिकोंके पेषणका प्रतिकार कब होगा,
उसी दिनकी राह देख रहा हूँ।
मेरा निश्चिन्त विश्वास है,
यन्त्रपिष्ट श्रमिकका हताश निःश्वास

प्रलय लावेगा, और दूसरी राह नहीं है।
नया सूर्य उगेगा। भूखसे पीड़ित मुखपर—
दीख पड़ेगी हँसीकी रेखा। किसीको अतुल
अगाध धन नहीं रहे। साम्यराज्यमें
कर्म चिन्ता स्वाधीन अवाध रहे।

और याद नहीं आती है। सारी कविता मुझे याद थी। दो वर्षोंमें मुझ में कितना परिवर्तन हो गया है! मैंने भाईजीके प्रभावसे मुक्ति पानेकी जी-जानसे कोशिश की है। इसीलिए मेरा अचेतन मन भी, मालूम होता है, मेरे स्मृति पटसे यह कविता मिटा देनेमें सहायता कर रहा है। मैंने कविताको आश्रममें मांके घरके बरामदेपर टाँगके रक्खा था। अब भी है कि नहीं कौन जाने। इतने दिनों तक यह बात याद भी नहीं आई। एक बार जाकर जरूर खोजके देखूँगा।···

"जगे हुए हैं क्या, बाबूजी?"

देखता हूँ, सूबेदार साहब क्वार्टरसे लौट रहे हैं। चेहरा देखनेसे मालूम होता है कि कुछ देर सो चुका है। हड़बड़ा करके उठ बैठा।

"बैठिए, बैठिए, आराम कीजिए, बाबूजी।" किसीके साथ बातें करनेकी इच्छा नहीं होती थी। सूबेदार साहब गेटके अन्दर घुसा। आफिसकी ओर जाता है। शायद साँझके समय बिछाए हुए बिछौनेको समेट रहा है।··· भाईजी अभी क्या कर रहे हैं? शायद चिट्ठी लिखते हैं। भाईजी जरूर कई चिट्ठियाँ लिख जायेंगे। निहालसिंहको बही पेंसलके लिए जो पैसे मैंने दिए थे, उनसे उसने भाईजीको यह चीजें खरीद कर दीं कि नहीं, कौन जाने। देनेसे भी इन चीजोंको सेलमें रखना मुश्किल है—जरूर रोज 'सर्च' होता है। लिखने

की सुविधा रहनेपर भी भाईजी और लोगोंकी तरह शायद चिट्ठी लिखकर नहीं जायेंगे। उनका मन भी अजीब है! वे किसी कामको अशोभन और दृष्टिकटु समझते हैं, मैं इसकी धारणा भी नहीं कर सकता हूँ।···मेरी अन्ट्यूनेटके बारेमें सुना है कि मृत्यु-दण्डके पहलेकी रातमें सब बाल उसके पक गए थे। भाईजोके पके बालकी कल्पना भी नहीं कर सकता हूँ। शायद वे खूब निश्चिन्त होकर सो रहे हैं। सर वाल्टर रैलेने वलिवेदी पर सिर देनेके पहले जल्लादसे मजाक करते हुए कहा था "मेरी, बड़े शौकसे रक्खी हुई दाढ़ीको मत काट डालना।" पहले मालूम होता था कि यह बढ़ा-चढ़ाके कहा गया है। लेकिन भाईजोके बारेमें कहते हुए यह अत्युक्ति नहीं मालूम होती है। बहुतसे राज-बन्दियोंके फाँसीपर चढ़नेके पहलेके आचरणके बारेमें बहुतसी बातें सुनी हैं। कोई बेहोश हो गया, किसीने सुपरिन्टेण्डेण्टको गाली दे दी, किसीने भगवानको दोषी ठहराया, किसीने भगवानका नाम लिया, किसीने भाषण देनेकी निष्फल चेष्टा की, कोई "सर फरोशीकी तमन्ना" गाते हुए निर्विकार भावसे सीढ़ीपर चढ़कर काठके तख्तेपर खड़ा हो गया। लेकिन भाईजी जरूर कहेंगे कि यह सब जरा नाटकीय है। भाईजी यह सब कुछ नहीं करेंगे। उनके होठोंके कोनेमें अवज्ञाकी हँसी रहेगी। उस अवज्ञाके सामने सुपरिण्टेण्डेण्टकी आँखें नीची हो जायँगी, मैजिस्ट्रेट दूसरी ओर नजर फेर लेगा, जेलर साहब बेवजह टार्च जलाके कलाईकी घड़ी देखने लगेंगे, जो निर्विकार कैदी कुछ 'रेमिशन' और पाँच रुपएके लिए जल्लादका घृणित काम करता है, उसके दिलकी धड़कन भी कुछ तेज हो जायगी। भाईजीका दूसरी तरहका आचरण ही मेरे लिए अप्रत्याशित होगा।····

खट् खट् खट्! गेटके दो तल्लेसे कोई सीढ़ीसे नीचे उतर रहा है।—

बलदृप्त गर्वान्ध व्यक्तिकी पौरुष-व्यञ्जक पद-ध्वनि—पृथ्वी तुम जान लो, इस जगह और किसीकी क्षमता या आज्ञा नहीं चलेगी—यहाँ मैं ही सर्वेसर्वा हूँ—यही भाव।····बहुत देरसे इसी ध्वनिकी प्रतीक्षा कर रहा था। खाली जेल पोशाक पहने हुए एक बलिष्ठ सज्जन उतर आए। गेटके सन्तरीने जमीनमें जूता ठोंककर सलामी दी उसके बाद सीधा होकर निरीह भावसे खड़ा हो गया, अन्दरके वार्डरने सलाम करके दरवाजा खोला। सूबेदार साहब गेटके सामने खड़े हैं। काले-सफेद मिले हुए दाँत निकल पड़े हैं। हँसते हुए जान-बूझके खुशामद करनेका भाव दिखलानेका प्रयास साफ दीख पड़ता है। सूबेदारने सलाम किया। जेलर साहबने पूछा "सब ठीक है तो?"

सूबेदार साहबने कहा "हाँ हुजूर"—जैसे सारी रात इन्हीं सब चीजोंका इन्तजाम करते-करते परेशान हो गया है।

जेलर साहबकी नजर ट्राली लाइनकी बगलमें इधर-उधर बिखरे हुए गोबर पर पड़ी। पैर घुमाके अपने जूतेके तल्लेको देखने लगे—चेहरेपर खींझने का भाव साफ झलक रहा है। सूबेदार भी डरती हुई नजरोंसे जूतेकी ओर ही देख रहा है।····खैर, जूतेके तल्लेमें गोबर नहीं लगा,—वह चैनकी साँस लेकर निश्चिन्त हुआ।

जेलर साहबने पूछा—"यह गोबर क्यों नहीं साफ हुआ?"

"हुजूर कोई कैदी नहीं मिल सका।"

"क्यों गाय तो 'लाक-अप'के बाद गेटसे नहीं गुजरी।" और कुछ नहीं कहा गया। अन्दरका वार्डर खुद इस काममें लग गया। सूबेदार साहबका दिन अच्छा नहीं बीतेगा,—सुबह-सुबह यह काण्ड। जेलर साहब अन्दरका दरवाजा खड़खड़ाकर अन्दर घुसे। कहते गए—'देखें, भीतरका इन्तजाम कैसा है।

आप लोगोंपर कोई जवाबदेही देकर निश्चिन्त होनेका तो कोई उपाय नहीं है, साहबका कमरा और मेरा आफिस ठीक रहे।" "हां हजूर. सो और कहना नहीं पड़ेगा। सब ठीक कर रक्खा है।"

सूबेदार साहबने वार्डरसे कहा—"उल्लूकी तरह मुंह बनाके क्या देखते हो? जाओ, देखो, साहबका कमरा साफ किया गया है कि नहीं। इन सब नए-नए 'बहाली' को लेकर काम चलाना मुश्किल है। कांग्रेसके आन्दोलनकी वजहसे जितने गाड़ीवान और हलवाहा चरवाहा हैं, सब भर्त्ती हो गए हैं। न तो कोई बात समझता है, न अपना काम। एकदम दिक कर दिया।"

छोटेसे लेकर बड़े तक सभी अपने मातहतके कर्मचारीयोंसे इसी तरहका व्यवहार करते हैं।........

चारका घण्टा बजा। फिर वार्डरोंका नया दल आना है। एक दलमें बाईस आदमी रहते हैं। यही अभिनयसे नए दृश्य हैं—सब जैसे एक रातमें याद हो गया है। जैसे स्टेशनका प्लेटफार्म हो, बहुतसे लोग गाड़ीसे उतरे—कुछ लोग चढ़े—कोलाहल, बेतरतीबी—फिर जैसाका तैसा।···भाईजी क्या सेलके सींखचोंको पकड़ कर खड़े अन्तिम क्षणकी प्रतीक्षा कर रहे हैं? अभी जो चारका घण्टा पड़ा उसे क्या भाईजीने नहीं सुना है? गेटके ऊपरकी शब्द-तरग वायु मण्डलमें कम्पन पैदा करती हुई 'कन्डेम्ड सेल' तक पहुँचती है। मेरी चिन्ता-लहरी क्या नहीं पहुँचेगी? भाईजी अन्तिम-क्षणमें किसके बारेमें सोचेंगें—मांके,—चाचीके, या मेरे बारेमें; मेरे बारेमें क्यों सोचेंगे? जरूर सोचेंगे। ग्लानिसे, विषादसे मेरे ऊपर मान करके चिन्तासे वे भरे होंगे। वे युक्ति तर्कके बहुत ऊपर हैं।···इसके बाद मेरा अब पूर्णियामें रहना असम्भव

है। चाचीको कैसे मुँह दिखलाऊँगा? मुहल्लेके लोगोंके सामने कैसे जाऊँगा? गवाही देनेके बाद इतने दिनोंमें यह हालत बहुत कुछ कम गई है। लेकिन मांके सामने जाना—यह तो असम्भव है। भाईजीके अन्तिम दिनका यह चित्र अप्रत्याशित और आकस्मिक नहीं है। पिछले कई महीनोंसे इस दिनके लिए मनको तैयार किया है। समय-असमयमें इस चित्रने मन पर बड़ा बोझ डाला है।⋯'पाकूर हत्याके मुकद्दमे' की खबर रोज कागजमें पढ़कर भाईजी और मैं मांको समझाते थे। मांने कहा था "मैयारे, भाई-भाईमें भी ऐसा होता है!"—और आज? इतने दिनों तक जनमतकी उपेक्षा करता रहा। लेकिन अब दिल चूर क्यों हो रहा है? जनमतकी उपेक्षा करनेसे चल भी सकता है, लेकिन मांकी अव्यक्त वेदना भरी दृष्टिकी, चाचीकी नीरव भर्त्सनाकी उपेक्षा करनेसे नहीं चलेगा।⋯ क्यों नहीं चलेगा? Sentimental nonsense⋯। मेरे सामने वेदना जर्जर समाजके अगणित काम पड़े हैं। समाजके युगोंसे सञ्चित आँसू पोंछनेका भार जिस पर है, उसे क्या संकीर्ण घरके कोनेके दो-चार बूँद आँसूकी बात सोचनेसे चलेगा? खद्दरकी साड़ीके आँचलसे ही वे कई बूँद आँसू पुँछ जायँगे। फटा कंथा और मैला तकिया इन सामान्य कई बूँद आँसूको तपे हुए बालूकी तरह सोख लेंगे। मेरे क्या इसके लिए पड़े रहनेसे चलेगा? अभी भी मैं अपने भविष्यके लिए चिन्तित हूं। मेरा क्या होगा, इसीकी कीमत मेरे सामने अधिक है, भाईको क्या हो रहा है उसकी नहीं।⋯

कन्हाईलालकी मृतदेहके फोटोका चेहरा याद आता है। भाईजीको भी क्या इसी तरह लोहेके स्ट्रेचर पर सुला देगा? दोनों आँखें अधखुली—अन्तिम श्वास लेनेकी प्राणपण चेष्टासे चेहरा वीभत्स नहीं हुआ है—आँखोंके

गड्ढेसे पुतलियाँ बाहर नहीं निकली हैं—शान्त निद्राकी मुद्रा है—सिर्फ गला फ़ूला हुआ—खून जमनेसे नीला दाग पड़ गया है।······

जेल डाक्टर अघोर बाबू जेलगेटमें घुसे। भला आदमी जल्द आनेकी कोशिशमें थक गया है। किसी ओर देखनेकी उसे फुर्सत नहीं है। जेलमें शायद पाँच-छः डाक्टर हैं—लेकिन जेलका बड़ा डाक्टर शहरमें रहता है। उसका यहाँ क्वार्टर नहीं है, क्योंकि लड़ाईसे पहले डाक्टर ही जेलके सुपरिन्टेन्डेन्ट होते थे। अघोर बाबू फिर क्यों आए? सूबेदारने पूछा "डाक्टर साहब, फिर आप क्यों आए?"

"ऐसे ही चला आया"

सूबेदार साहब खुद भी बात समझता है। आज सबकी इच्छा साहबको अपनी कर्त्तव्यपरायणता दिखानेकी है। अघोर बाबूसे मेरा परिचय है। भाग्यसे मेरी ओर उसकी नजर नहीं पड़ी—कहीं कुछ पूछ बैठता। ··वह आफिसमें घुसे। जेलर साहब लौट आए हैं। उनके कमरेकी रोशनी जली-·· पंखा घूमने लगा।···हाफ-पैन्ट और सफेद हाफशर्ट पहले सुपरिन्टेन्डेन्ट साहब आ पहुँचे,—साथमें सफेद और कत्थे रंगका एक 'बुलेटेरियर'।·· वार्डरके चेहरे पर डरका भाव···· ·· सलामी···'अटेन्शन'—कुत्ता भीतर घुसनेके पहले, जाने क्या सोचकर मेरे पाससे एक बार घूम गया।···भीतरके वार्डरने कुत्तेके लिए दरवाजा अधखुला छोड़ दिया। साहबसे उनके कुत्ते पर जेल-कर्मचारियोंका ख्याल कम नहीं है—यह दिखानेके लिए सभी कोशिश करते हैं। जेलर साहब घरसे बाहर आए, साहबकी अभ्यर्थना करनेके लिए। अघोर बाबू वहाँ पर आकर खड़े हुए। सूबेदार साहब जेलर साहबके सम्मानकी रक्षाके ख्यालसे उनकी देहसे एकदम सटकर खड़े नहीं होकर जरा

दूरमें खड़ा रहा। साहब हँस-हँसकर कुछ बातें कर रहे हैं, और अन्यमन एक भावसे हाथके टार्चको कभी जलाते हैं कभी बुझाते हैं। कुत्ता कभी आफिसमें कभी रास्ते पर आ जा रहा है—मशालोंको सूँघता है—साहबके पास आकर जैसे कुछ खबर देकर चला गया।···रातकी निस्तब्धताको तोड़ती हुई मोटर लारीकी आवाज हुई—पास आ रही है—भों-भों····इतने जोरसे भी कहीं मोटरके भोंपूकी आवाज होती है—भाईजी माँ, पिताजी सबके कानोंमें शायद यह आवाज पहुँच गई। एक 'मोटर भैन' गेटसे कुछ दूर पर आकर खड़ी हुई। अब मालूम होता है दरवाजा खोलकर कूद पड़ेगी, एकके बाद एक सशस्त्र पुलिस—'एबाउट टर्न'—'राइटह्वील'। नहीं, कोई नहीं उतरा। मालूम होता है सभी गाड़ीमें ही रह गए। ड्राइवरने गाड़ीकी रोशनी बुझाई—रास्ता और क्वार्टर फिर अन्धकारमें डूब गए। साहबका कुत्ता भूँकता है····कुत्ता गेटके सींखचोंके बीचसे बाहर आया—देखने लगा कि उसके राज्यकी शान्ति किसने भंग की। रोशनीकी झलक क्यों हुई या क्यों फिर बुझ गई, उसीकी खोजमें वह बाहर आया।········

राष्ट्रका संचालन-चक्र चल रहा है, मन्थर किन्तु निश्चित गतिसे—रात दिन। कब, कितने दिन पहले किस अभागे मूर्खने इसके सामने सिर ऊँचा करके खड़ा होनेका व्यर्थ दुःसाहस किया था। जिससे उसकी पुनरावृत्ति न हो, इसी उद्देश्यसे देशव्यापी छोटा बड़ा असंख्य चक्र नियुक्त हुआ है। इस घटनाको और उसके नायकको निश्चिन्त करके ही राष्ट्रको शान्ति या चैन नहीं होता है। जिस स्वप्न-विलासने बहुतसे आधुनिक हृदयको उद्वेलित किया, वह भविष्यमें जिसमें डरसे निर्जीव और पंगु हो जाय—यही उसकी इच्छा है।··· कोढ़ा थाना, वेंकटेस्वर दरोगा, फौजदारी, सेसन्स कोर्ट, सरकारी वकील, जज

साहब, सरकारी गवाह निलू, जेल कर्मचारी लोग,—मालाकी तरह एकके बाद एक गुथे हुए हैं, एक निश्चिन्त उद्देश्यको लेकर। जिस उद्देश्यमें ये लोग नियुक्त हैं, उस चरम मुहूर्तमें अब कितनी देर है ही ?···· सिर्फ जल्लादको जवाबदेह ठहरानेसे नहीं चलेगा। इस बर्बरताका नैतिक दायित्व जज साहबसे लेकर वार्डर तक सबका समान है।··· इस विशेषज्ञके युगमें कोई भी अपने सीमित क्षेत्रसे बाहर नहीं देखता है। वह यन्त्रके जिस अंशके लिए जवाबदेह है, उसके अच्छी तरहसे चलनेसे ही हो गया। विराट सचालन शक्तिका उद्गम कहां है, इससे उन्हें क्या जरूरत ? इञ्जिनसे 'बेलटिङ्ग' के द्वारा इस शक्तिका अंश उसके पास तक पहुंच जानेसे ही हुआ। उसके बाद वह अपना आधा तैयार कच्चा माल अपने बादकी जगह पर पहुंचा देगा। यहां तक जितने हाथोंसे घूमता हुआ यह आया है, उन सब जगहोंमें राष्ट्रदानवकी नग्नता और बर्बरता ढँकनेकी कोशिश थी। लेकिन अब ऐसी जगहमें पहुंची है, जहाँ अब आँखोंमें शर्मकी गुञ्जाइश नहीं है। crush or be crushed :— जगन्नाथजी का रथ अपनी गतिके गर्वमें चलता रहेगा। चक्र के नीचे निशा की पुकारसे मतवाला कोई अभागा चूर-चूर हो गया या नहीं, यह जाननेकी उसे जरा भी चिन्ता नहीं है। वर्ग स्वार्थका 'स्टीम रोलर' रास्ते पर बराबर चलाना ही पड़ेगा। रोक देनेसे जंगली पौधे सिर उठा लेंगे।··· आश्रममें जानेका रास्ता भाईजीने अपने हाथसे बनाया था। दोनों ओर रजनीगन्धाकी क्यारी थी। समय मिलने पर खुरपी लेकर भाईजी रास्ते परकी घास और जंगली पौधोंको उखाड़नेके लिए बैठ जाते थे—खद्दरकी एक साफ गंजी।····

एक और मोटरकार आकर खड़ी हुई। वर्दी पहने हुए चपरासीने दर-

वाजा खोल दिया। हाफ पैंट पहने एक सज्जन—मुंहमें चुरुट—सिविल सार्जन। सुपरिन्टेन्डेन्ट साहबके—दलने उनकी अभ्यर्थना की।····

सिविल सर्जनने कहा—"मुझे देर हो गई क्या? आप लोग मेरी प्रतीक्षा तो नहीं कर रहे थे?"

"नहीं, नहीं, अभी तक मेजिस्ट्रेट तो पहुंचे ही नहीं हैं!" सुपरिटेन्डेन्ट ने कलाईकी घड़ी देखी। चेहरे पर खिन्नताका भाव। "आइए कमरेमें बैठा जाय।" कुर्सी खींच लेनेकी आवाज हुई। कमरेके अन्दरसे गप्पकी मृदु गुञ्जन बहती आ रही है। फिर मोटरके भोंपूकी आवाज हुई। एक गाड़ी आकर खड़ी हुई। हाफ पैंट पहने एक अल्पवयस्क सज्जन गाड़ीसे कूद कर उतरे। वे दौड़ कर जेल गेटमें घुसे। जेलर साहबने उनका स्वागत किया।

"नहीं नहीं, आपको देर नहीं हुई। हम लोग ही जल्द आ गये। डाक्टर और सुपरिन्टेंडेन्ट भी कमरेमें आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। चलिए, कमरेमें बैठिएगा।"

कमरेमें जाना नहीं पड़ा। सुपरिन्टेन्डेंट, सिविल सर्जन सभी जेलमें घुसनेके लिए तैयार होकर कमरेसे बाहर आए। एक-एक करके सभी अन्दर दाखिल हुए। दरवाजा छोटा था···सबको सिर झुका लेना पड़ता है।···· दिल्ली दरबारके ऐसे ही एक दरवाजेकी बात मैंने सुनी थी। कहींके राजा इसे अनजान समझ कर आए ही नहीं।··· यक्षपुरीके अन्धकारने एक-एक करके सुपरिन्टेन्डेंटके दलके लोगोंका ग्रास कर लिया।·· अब यहांसे भाग जानेसे कैसा हो?··· मृत देहकी तरफ मैं ताक नहीं सकूंगा। यहांसे भाग जानेसे कोई देखेगा भी नहीं।··· मैजिस्ट्रेटके हुक्मको जेलके लोगोंको दिखाना

पड़ेगा। नहीं तो वे लोग मुझे मृत देह देंगे क्यों? कागज कहाँ गया? किसी जेबमें तो नहीं देखता हूं? क्या हुआ? घर ही पर छोड़ आया क्या? तब तो अभी जाना ही पड़ेगा। जाय, अच्छा ही हुआ। नहीं मिलना ही अच्छा है।.... इसके बाद ट्रेनसे पटना या बम्बई चले जानेसे कैसा रहेगा? दलके intellectual कामरेडोंसे मिलना मुझे बड़ा जरूरी है।....नहीं कागज तो जेबमें है....कल अपने हाथसे इस जेबमें रखा था। जायगा कहाँ? और अभी सब जेबमें खोजके देखा...कहीं मिला नहीं।

सूबेदार साहबके चेहरे पर नजर गई। वह भी मेरी ओर देख रहा था। वह आंखें फेर लेता है। वह मेरी ओर और नहीं देख सकता है।

दूरमें मालूम पड़ता है कि दो एक आदमी जमा हो रहे हैं। सशस्त्र पुलिसके डरसे शायद ज्यादा आदमी नहीं आए। नहीं तो अब तक यह जगह लोगोंसे भर जाना चाहिए था। एक क्वार्टरका दरवाजा खुला। सभी लाश देखनेके लिए उत्सुक हैं।....भाईजी के गले पर एक काला तिल है?...

जाड़ेके दिनोंमें जो गेरुआधारी पञ्जाबी ज्योतिषियोंका दल हर साल पूर्णियां आता है, उसमेंसे ही एक आदमी एक बार हमलोगोंके आश्रममें आया था। आकर विकृत उच्चारणके साथ जरा हंस कर बोला—मैं "फारचुन टेलर" हूं। वह भाईजी के मना करने पर भी उनके हाथको देख कर बोला था कि भाईकी उम्र अस्सी बर्ष है।...सब झूठे बेइमानोंका दल है।...भाईजी उसकी बात सुनकर हंसने लगे, और बोले "यह कांग्रेस आफिस है। हमलोग तुम्हारे इस कष्टके लिए पैसा नहीं दे सकेंगे।"

अच्छा, अगर भाईजी डरसे बेहोश हो जांय, तो क्या ये लोग उसी हालतमें फांसीपर झुलावेंगे? ऐसा कहीं हो!....

फाँसीकी रस्सीको लेकर मेट और पहरा देनेवाले खींचातानी कर रहे हैं। एक बारकी जेलकी बात याद आती है····रस्सीको वे लोग टुकड़े-टुकड़े करने की कोशिश कर रहे हैं। चर्बी लगी हुई चिकनी रस्सीपर लोहेकी भोथरी धार फिसल जाती है।····किस्मतवालोंने एक-एक टुकड़ा पाया।··· उससे क्या शीघ्र ही फल देनेवाला वशीकरण किया जाता है।····

अब भीतरका फाटक खुला। सुपरिन्टेण्डेण्ट, मैजिस्ट्रेट, सिविलसर्जन—जेलर—अघोर बाबू, असिस्टेण्ट जेलर,—वार्डर, वार्डर, कुत्ता, वार्डर, वार्डर,—

सभी जबर्दस्ती चेहरेपर हँसी लानेकी कोशिश कर रहे हैं। दिखाना चाहते हैं कि इस सामान्य घटनासे वे कुछ भी विचलित नहीं हुए। इससे उन लोगोंके चाय पीनेमें थोड़ी देर हो गई—बस। सुपरिण्टेण्डेण्टने सिविल सार्जन और मैजिस्ट्रेटसे अपने बंगलेपर चाय पीनेका अनुरोध किया। फाटक खोला गया। कुत्ता आगे-आगे रास्ता दिखाता चला। दोनों मोटरकार उनके पीछे-पीछे चलकर बंगलेके पास खड़ी हुई। लारीका ड्राइवर तैयार होकर 'स्टीयरिंग ह्वील' पकड़ कर बैठा। वार्डरने अभी तक भीतरसे दरवाजेको जरा खोलके रक्खा है।··· वही आया ···अब आया····आया ···अब····

"अरे तिलू बाबू हैं, नमस्कार! इतना सबेरे इधर कहाँ? इन्टरव्यूको तदवीरमें शायद? सी० आई० डी० तो आठसे पहले नहीं आता है। आइए मेरे घर। तब तक जरा चाय-वाय पी ली जाय, क्या कहते हैं?"

अघोर बाबूने मुझे जवाब देनेका सुयोग नहीं दिया। बड़ी मुश्किलसे किसी तरह बोला, "नहीं इण्टरव्यूमें नहीं आया हूँ।—आया था—आज भाईजीका—यह"··· ····और बात मुँहसे निकली नहीं। होंठ काँपते हैं लेकिन बात नहीं निकलती है। किसीने जैसे मजबूत हाथोंसे गलेको भर

दबाया है। मेरी आँखोंमें आँसू आ गए! दूसरी तरफ ताकते हुए किसी तरह मैजिस्ट्रेट साहबकी चिट्ठी उनको दी। अघोर बाबू चिट्ठी पढ़ने लगे। मैंने आँसू पोंछ डाले।

"अरे, सो न कहिए! क्यों, आपने सुना नहीं?" उन्होंने मेरा कंधा पकड़ लिया।

"गवर्नमेन्टकी चिट्ठी आई है कि फाँसीका हुक्म अभी मुल्तवी रहेगा।"

ऐं क्या कहते हैं! अघोर बाबू पागल हो गए हैं क्या? उनके दोनों हाथोंको कसकर पकड़ लिया! वह कहते गए—

"सिर्फ मिलिटरी इलाकाको छोड़कर भारतवर्षमें सब जगह अगस्त आन्दोलनके समय "सबोटेज" के लिए जिन्हें फाँसीका हुक्म हुआ है, उनकी फाँसी अनिश्चित समयके लिए स्थगित हो गयी है। बीच-बीचमें कई फाँसियाँ इस आर्डरके पहले ही दूसरी जगहोंमें हो गई हैं। जिन पर खूनका जुर्म लगाया गया था, वे इस आर्डरमें नहीं आए।····आज एक साधारण कैदीकी फाँसी थी। वह तीन नम्बर सेलमें रहता था। परसों आर्डर आया है। आपके भाईको एक नम्बर सेलसे अभी हटाया नहीं गया है। साहबने कहा कि बेकार हँगामा बढ़ानेसे क्या जरूरत। इसीलिए यह misunderstanding हुआ। और फाँसीकी तारीख तो पहलेसे जेल कैदियोंको कहा जानेका नियम नहीं है। अन्दाजसे ही जेलके लोग जिसे ठीक कर लें। इसीलिए आप लोगोंने गलत खबर पाई है।"····

मेरी बोलनेकी ताकत खत्म हो गई है।·······शान्त भावसे हूँ नसोंमें रक्तका प्रवाह भी शायद बन्द हो गया है।····गाछके पत्तोंमें भी स्पंदन नहीं। ग्रह सब गति भूलकर स्थिर खड़े हैं।······वीरभोग्या वसुन्धराकी अपर्णा

मूर्त्ति।—साँस लेनेमें डर होता है—उमाकी तपस्या कहीं भंग न हो जाय।·······

····धमनीका स्पन्दन फिर आरम्भ हुआ। गाछों पर पंछियोंका कलरव—पत्ते-पत्तेमें प्रातः समीरका कम्पन—लास्यमयी पृथ्वी फिर अनेक छन्दोंसे लीलामयी हो उठी।····पत्थरके जेलगेटके ऊपरके तल्ले पर हठात् ऊषाके रक्तिम प्रकाशकी मधुर झलक दिखाई पड़ी।

समाप्त।

# परिशिष्ट

( बंगला शब्द और कहावतोंका हिन्दी भावार्थ )

| पृष्ठ | लाईन | शब्द | अर्थ |
|---|---|---|---|
| २ | २१ | गुमटी—Central Tower, जेलके अन्दरका कर्मकेन्द्र, इसके नीचे हेड वार्डरका आफिस रहता है और इसके ऊपर चढ़कर रातमें वार्डर लोग पहरा देते हैं। | |
| ३ | ९ | कमान्ड—जेलके कैदियोंका कार्य-विभाग। | |
| १३ | १२ | गोरु मेरे जूता दान—'गाय मारकर जूता देना'—बंगला कहावत। | |
| १३ | २२ | केबा ए कलङ्क तोर भुजिवे जगते कलङ्कि—मायकेल मधुसूदन दत्तके मेघनाद वधकी एक पंक्ति। | |
| १६ | ९ | मेट और पहरा—Convict Overseer लोगोंकी दो श्रेणियां। | |
| ८३ | १८ | माछ पातरी—मछलीका एक खास किस्मका रंधन। | |
| ११२ | ८ | बीटी कम्बल—जेलके कैदियोंको दी जाती। असलमें पहले यह फौजियोंके लिये बनता था। | |
| ११४ | १८ | भीमभवानी गोबर—बंगालके दो नामी पहलवान। | |
| १३३ | ४ | सर्वोदय—गांधीवादियोंका मुखपत्र। | |
| १५३ | १७ | शुक्तो—एक खास किस्मकी निरामिष नरकारी, जिसमें विशेषतया सरषों दिया जाता है। इसका स्वाद कड़वा होता है। | |

| पृष्ठ | लाइन | शब्द | अर्थ |
|---|---|---|---|
| १५३ | ६ | यरवेदा चक्र | सूटकेस चर्खा। |
| १६४ | १७ | गोकुल पीठे | एक किस्मकी मिठाई। मालपुआकी तरह। |
| १६४ | २० | डांटा चचड़ी | एक प्रकारकी तरकारी, जो किस्म-किस्मके सागोंके डंटलसे तैयार होता है। |
| १६६ | १-२ | म्यांउ-म्यांउ-म्यांउ म्यांकू | नेपाल तराईके बच्चे आँखमिचौनी खेलनेके समय इस फिक्रेको दुहराते हैं। |
| १६४ | २१ | हामि डांटा खेते खूब पसन करे | अबंगाली लोगोंके बंगलाके गलत उच्चारण पर व्यंग। |
| १६९ | १९ | मघैया डोम | एक खानाबदोश जाति। |
| १७० | १० | कलस्टर | कलक्टर। |
| १७० | ११ | सुपरिटन | सुपरिन्टेन्डेन्ट। |
| १७७ | १७ | बारिन्दिरेर बेटा | बारिन्दिरका बेटा। बारेन्द्र श्रेणीके ब्राह्मण को बंगालमें बहुत पेंचीला कहकर चिढ़ाया जाता है। |
| १७७ | २२ | 'कांदे याज्ञसेनी, तितिल अवनी....' | काशीराम दास कृत महाभारतमें द्रौपदी चीर हरणके समयकी एक पंक्ति। |
| १७८ | ११ | घरेर कोनेर भांगा हाँड़ी बले आमि सब जानि | बंगला कहावत। एक नानीकी कहानीमें ऐसी घटनाका वर्णन है, जिसमें घरकी एक फूटी हांड़ीको सारी बातें मालूम हो जाती थीं। |
| १७८ | १८ | संक्रान्ति बामुन | बंगला पञ्जिकामें हर महीनेमें एक दुबले पतले ब्राह्मणकी तस्वीर होती है, जिसके बगलमें पोथी, सिरमें लम्बी चोटी होती है, उसीको दृष्टिकोणमें रखकर व्यंग किया गया है। |

| पृष्ठ | लाईन | शब्द | अर्थ |
|---|---|---|---|
| १७८ | २० | टिकि धोरे मारब टान, उड़े जाबि वर्द्धमान | यह बच्चोंका बे-मतलब फिकरा है, जिसको दूर फेंकनेके अर्थमें व्यवहार किया जाता है। |
| १७९ | १० | देवी सुरेश्वरी भगवती गंगे | गंगास्तोत्रकी एक पंक्ति। |
| १७९ | १० | श्रीकृष्णेर अष्टोत्तर शतनाम | श्रीकृष्णके १०८ नामकी वैष्णव लोगोंकी कविता। |
| १८२ | ९ | मां लक्ष्मीजीके पैरका चिह्न | बंगालमें लक्ष्मीपूजाके दिन पीसे हुए चावलसे लक्ष्मीके पावोंके चिह्न बनाये जाते हैं, लोगोंका ख्याल है उस चिह्नसे धनकी वृद्धि होती है। |
| १९३ | १ | कञ्जा आँटुनी फांका गेरो | बंगला कहावत, जिसका अर्थ है जितना ही जोरका बन्धन उतना ही ढीला गिरह। |
| १९६ | ८ | ढप कीर्त्तन | बंगालका एक खास किस्मका पुराना ग्राम्य-कीर्त्तन। |
| १९६ | ११ | तिजेल | हंडीका एक ग्राम्य पर्यायवाची शब्द। यहां अर्थ है कि बिहारमें रहकर बंगालका प्रचलित ग्राम्य शब्द भूल गया है। |
| १९६ | १५ | चड़केर दिन | चैत संक्रान्तिके दिन आत्मनिग्रहका एक तरीका है, जिसमें पेटमें लोहेका डन्डा पेटमें गड़ाकर चरखी पर घुमाया जाता है। |
| १९६ | १६ | गाजन गान | चड़कके अवसर पर साधु लोग शिवस्तुतिमें एक खास किस्मके गीत गाते हैं, उसीका नाम है गाजन-गीत। |

| पृष्ठ | लाईन | शब्द | अर्थ |
|---|---|---|---|
| १९९ | २ | मोषेर सिं बाँका योभार समय एका | बंगला कहावत है जिसका अर्थ है कि भैंसका सींग टेढ़ा होता है, लेकिन लड़नेके समय अकेला ही काफी होता है। |
| २०४ | २ | चुमौना | पुनर्विवाह। |
| २०८ | ३ | चरखा आमार भातार पुत चरखा आमार नाति | एक पुरातन ग्राम्य कविता। |
| २३३ | ७ | दफा बदली | वार्डरोंका एक दल जब ड्यूटी खत्म करके जाता है और दूसरा दल उसके स्थान पर आता है, उसे दफाबदली कहते हैं। जेलमें प्रायः इसीसे समयका निर्णय किया जाता है। |
| २५९ | १७ | मन्धाता तम्बाकू | तम्बाकूकी एक जाति। |
| २६६ | १५ | डिपाट में | डिपार्टमेंटमें। |